

विचारचन्द्रोदय ।

ब्रह्मनिष्ठपरिडतश्रीपीताम्बरजीकृत ।

उनके जीवन चरित्र और सटीक

श्रुतिपङ्क्तिङ्गसंग्रहसहित ।

नवीनरूढियुक्त ।

दशमावृत्ति ।

मुमुक्षुओंके हितार्थ

पं० ब्रजवल्लभ हरिप्रसादजीके लिये

सोल एजेन्टः—

रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल

ने छपवाया ।

यह पुस्तक शरीफ खाने महमूद नूरानी के पुत्र दाउदभाई और अनादीन भाईके पाससे सब प्रकारके रजिस्टरी हकसहित प्रकाश करने ले लिया है और इसके सब हक कायदेके अनुसार अनादीन रकमे हैं ।

पुस्तक मिलने का पता—

हरिप्रसाद भागीरथजी लि०,

प्राचीन पुस्तकालय

कालाशा देवी रोड, बम्बई नं० ७

दूसरा पता—

रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल

बूना ककड़, मथुरा ।

मुद्रक—राजू प्रभुदयालजी मीतल, ५

अग्रवाल इलेक्ट्रिक प्रेस, मथुरा

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

प्रस्तावना ।

सर्वमतशिरोमणि श्रीवेदान्तसिद्धांत है । ताके जानने-वास्ते कनिष्ठ औ मध्यम आदिक अधिकारिनके अर्थ अनेक संस्कृत औ प्राकृत ग्रंथ हैं । परंतु जाकी बुद्धिमें विशेष शंका हांवे नहीं ऐसा मन्दनतिमान्, परम-आस्तिक, शुद्धचित्तवाला जो उत्तम अधिकारी है, ताके अर्थ सरल, श्रेष्ठ, अल्प औ विरुधात वेदांतप्रक्रियाका ग्रन्थ कोउ नहीं है, यातैं मैंने यह विचारचंद्रोदयनामक वेदांतप्रक्रियाका प्रश्नोत्तररूप ग्रंथ किया है । यामैं षोडश प्रकरण हैं । तिनका "कला" ऐसा नाम धरयाहै । एक एक कलाविषै एक एक विलक्षण प्रक्रिया धरी है । मुमुक्षुकं ब्रह्मसाक्षात्कारविषै अवश्य उपयोगी जे प्रक्रिया हैं वे सर्व संक्षोपतैं यामैं हैं । अंतकी षोडशकी कलाविषै अनेकवेदांतपदार्थनके नाम रखे हैं । वे धार-नेमें अन्य महद्ग्रंथनके श्रवणविषै उपयोगी होवेंगे ॥

या प्रथक ब्रह्म निष्ठ गुरुके मुखसे जो मुमुक्षु अव्यय करेगा
 वा याके प्रथक बुद्धिमें धारण करेगा, वाके चित्तरूप
 आकाशमें अवश्य ज्ञानरूप युवा अवस्थाक धारणैवासा
 विचाररूप चद्रमा उदय होवेगा औ सशय अर आति-
 महित अज्ञानरूप अधकारक दूरी करेगा, याहीति
 याका नाम विचारचन्द्रोदय इ । याका विषय नीचे
 धरी अनुक्रमलिकाविषे स्पष्ट लिख्या है । तहां देख
 लना । (या प्रथके विशेषज्ञानविषे उपयोगी श्रीमरीक
 बालबोध हमने किया है । ताकी २१० टिप्पण अरु
 मूलतः कागत बुद्धिमहित द्वितीय आधुनि अधी छपी है ।
 जाके इच्छा हावे सो देखे) विशेष विज्ञप्ति यह है
 कि — यह प्रथम ब्रह्मनिष्ठ गुरुके मुखसे ही शब्दापूर्वक
 पढ़ना । स्वतंत्र नहीं । काहते गुरु बिना भिद्धान्तके
 रहस्यका ज्ञान होता नहीं औ गुरुमुखसे सकल अभिप्राय
 जान्या जावे इ । यानै गुरुके मुखसे ही पढ़ना चाहिये ।

लि० पण्डितपीताम्बरजी ।

पुस्तक सिद्धने का पता—

प० हरिप्रसाद भागीरथजी,

काहावडी रोड, मुम्बई

श्रीविचारचन्द्रोदय ।

अष्टमावृत्तिकी प्रस्तावना ।

संवत् १९७०—सन् १९१४ में शरीफ साले महम्मद नूरानीकी प्रकाशित की हुई अष्टमावृत्तिकी प्रतिसे यह अष्टमावृत्तिका संस्करण हमने यथाप्रति ज्योंका त्यों प्रकाशित किया है । किसी प्रकारका परिवर्तन अथवा न्यूनाधिक भाव नहीं किया है । क्योंकि शरीफ सालेमहम्मद नूरानीके सुयोग्य पुत्र दाउद भाई और अलादीन भाई इनबन्धुद्वयके पाससे सब प्रकारके रजिस्टरी हक सहित इसे हमने ले लिया है । अतः वेदान्तालुरागी मुमुक्षु जनौसे सविनय प्रार्थना है कि इसका सदाकी भांति सादर संग्रह करनेमें अग्रसर हों ।

नजबल्लभ हरिप्रसाद ।

ठि० हरिप्रसाद भागीरथजीका

प्राचीन पुस्तकालय,
कालबादेवी गोल बगई ।

। ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥



॥ अथ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

यह प्रथम ब्रह्मविद्याकी प्रथमपोथीरूप होनेके
मुमुक्षुजनोंके अत्यन्त उपयोगी भवाहै । नाते यह
सप्तमावृत्ति सहित इस प्रथमकी आजपर्यन्त अनु-
मान १५ ० प्रति छापी गई है ॥

इस प्रथमके कर्ता ब्रह्मशास्त्रिय ब्रह्मनिष्ठ पंडित
श्रीराम शर्मा महाराजकी पूर्वावस्थाका फोटो
आरंभ पुरश्चावृत्तियामें रखाहै श्री इस आवृत्तिमें
तिनके उन्नतगद्यस्थाका फोटोआरंभ तिनके जाया
व अथक आरंभमें रखा है ॥

श्री यह आवृत्तिविषै श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह नामके लघुग्रन्थकूँ प्रविष्ट करीके पञ्चावृत्तितै नवीनता करीहै । तातैँ इस आवृत्तिमें ८५ पृष्ठकी अधिकता भई है ॥

श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह । हमारे परमपूज्य गुरु पंडित श्रीपीतांबरजी महाराजनैँ श्रीवृहदारण्यक-उपनिषद् छाप्याहै । तिसपरसँ लियाहै । तथापि हमनैँ मुद्रणशैलिविषै भिन्नप्रकारकी रचना करीके प्रत्येकस्थलमें ६ लिंगोंकूँ प्रत्यक्ष दृश्यमान कियेहैं । तातैँ मुमुक्षुजनोंकूँ अभ्यासविषै अत्यंत सुलभता होवैगी ॥ यह श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह इस ग्रन्थविषै मुद्रांकित करनैँमें ऐसा हेतु रखाहै किः—आजकल वेदांतविद्याविषै मुमुक्षुजनोंकी प्रवृत्ति अधिकाधिक होतीजाती है तातैँ श्रीविचार-चन्द्रोदयके अभ्यास किये पीछे । वेदांतके भूल-

रूप कितनेक उपनिषद् हैं । ताके तात्पर्यसँ ज्ञात होना आवश्यक है ॥ वे उपनिषदोंके ऊपर रामानुजआदिक द्वैतवादिओंनै जे भाष्य कियेहं । तिनमें ' वेदका अभिप्राय द्वैतविषैहोँ है " ऐनै प्रतिपादन करनैका परिश्रम कियाहै । परतु वे परिश्रम निष्फलही ह । कारण कि जगन्विषै द्वैत तौ विचारमें बिना सिद्धही पडाहै । यार्तँ ऐसै विषयक सिद्ध करनैविषै वेदका अभिप्राय सम्भवित नहींहै ॥ " एक परमात्मतरयविना अन्य जो रहु प्रतीत होवै है । सो सर्व मायावृत्त भ्रान्तिरिगिही प्रतीत हार्यहै " । ऐसै प्रतिपादन करनका वेदका अभिप्राय जगद्गुरु श्रीमच्छंकराचार्यनै उपनिषदोंक भाष्यमें सिद्ध कियाहै ॥ फ।इवी ग्रन्थके तात्पर्य शोधनअर्थ ताके पट्टलिगनक अत्रलोकन किये चाहिये ॥ इस कारणन

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ ६

प्रत्येक उपनिषद्के ६ लिंग श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह-
विषय दिखाये हैं ॥ यह लिंगोंका श्रवण कोई
महात्माके मुखद्वाराहीं करना उचित है । काहेतें
कि तैसैं करनैतें वेदांतविद्याकी महत्ताका भान
होवैगा औ तदनंतर वे उपनिषदों का भाष्य-
सहित अभ्यास करनैकी जिज्ञासा भी उत्पन्न
होवैगी ॥

इस ग्रन्थका वा कोईवी अन्यशास्त्रका अभ्यास
करनैकी रीतिविषय हमारा आधीन अभिप्राय एक
दृष्टांतसैं प्रथम स्फुट करैहैं:—

दृष्टांत:-एक जौहरीका पुत्र अपनै मृतपि-
ताके मित्रसमीप एकछोटीसीमुद्रांकितमंजूष लेके
गया औ कहने लगा कि:-मेरे पितानै अपनै
अंतकालसमय यह मंजूष मेरे स्वाधीन करीहै औ
कहा है कि तिरुमैं एक असमूल्य हीरा है । सो

६० ॥ नममावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ [विचार-

मेरे मित्रके पास तूं लेजाना नौ वे मित्र बड़ी
कीमतमें बेच देवैगा ॥ वे जौहरीकी आशासँ
निसने मजूप खोलके देखी तो एक घड़ा प्रकाशित
हीरा देखनेमें आया ॥ हीरेसहित वह मंजूप पुनः
बध कीन्ही श्री निसकुं प्रथमकी न्याईं मुद्रित-
कर्गके वे मित्रनै कहा कि यह हीरा बहुतमूल्य
का है । जब कोई योग्य दाम देनेवाला ग्राहक
मिलगा तब बेचेंगे । यानै अब इस मंजूपकुं
रख छोड़ो ॥ जौहरीने उस पुत्रकुं अपनी दुकान
पर बिठाया श्री हारिमाणिक्यआदिककी परीक्षा
करनैकु सिखाया ॥ जब प्रवीण भया तब वे
मित्रनै निसकुं कहा कि हे पुत्र ! यह हीरेकी
मंजूप लेआव । तब वह उक्तमंजूपकुं ले आया
श्री खोलके हस्तमें लेके परीक्षा करी तब

ज्ञात हुआ कि वह हीरा नहीं परन्तु काचका तुकड़ा है ॥

सिद्धांत:-जैसे उक्त जौहरीका पुत्र काचकूँ हीरा मानिके तिसद्वारा धनाढ्य होनेकी मिथ्या आशाकूँ रखताभया । तैसेँ मनुष्य वी बालपन सेँहि जगत्के पदार्थोंकूँ क्षणिक औ नाशवान देखते हुये वी यथार्थज्ञानके अभावतैँ तिनविषै सत्यताकी बुद्धिकूँ धारणकरिके सुखकी मिथ्या आशा रखते हैं औ अनेक तौ “ यह जगत्के पदार्थोंसेँ विना अन्य कछुवी सत्य नहीं है” ऐसै वी मानते हैं ॥

उपरि कहा तैसेँ मनुष्यमात्र मायाकरि भ्रान्ति विषै भ्रमण करी रहेहैं तिनमेंसेँ कचित् कोईकूँ ही “ मैं कौन हूँ ” । “ जगत् क्या है । ” “ मेरा औ जगत्का अवसान क्या है ” इत्यादि अने-

मेरे मित्रके पास तू लेजाना तौ घे मित्र बड़ी कोमतसँ रेच देवैगा ॥ घे जौहरीकी आशासँ निसने मजूप खोलके देखी तो एक बड़ा प्रकाशित हीरा देखनेमें आया ॥ हीरेसहित वह मजूप पुन बध कीन्ही औ तिसकु प्रथमकी न्याई मुद्रित करारु घे मित्रने कहा कि यह हीरा बहुतमूर्य क। है । जब कोई या य दाम देनेवाला प्राहक मिलगा तब रेचेंगे । यार्तँ अथ इस मजूपकु रस छाडी ॥ जौहरीन उस पुत्रकु अपनी दुकान पर बिठाया औ हीरेमाणिक्यआदिककी परीक्षा करनेकु सिगाया ॥ जब प्रवीण भया तब घ मित्रने तिसकु कहा कि है पुत्र ' यह हीरेकी मजूप लआव । तब यह उक्तमजूपकु ले आया औ खोलके हस्तमें लेके परीक्षा करो तब

ज्ञात हुआ कि वह हीरा नहीं परन्तु काचका तुकड़ा है ॥

सिद्धांतः—जैसे उक्त जौहरीका पुत्र काचकूँ हीरा मानिके तिसद्वारा धनाढ्य होनेकी मिथ्या आशाकूँ रखताभया । तैसे मनुष्य वी बालपन मेंहि जगत्के पदार्थकूँ क्षणिक औ नाशवान देखते हुये वी यथार्थज्ञानके अभावतैँ तिनविषै इत्यताकी बुद्धिकूँ धारणकरिके सुखकी मिथ्या आशा रखते हैं औ अनेक तौ “ यह जगत्के पदार्थसँ विना अन्य कछुवी सत्य नहीं है” ऐसै वी मानते हैं ॥

उपरि कहा तैसे मनुष्यमात्र मायाकरि भ्रांति विषै भ्रमण करी रहेहैं तिनमेंसँ कचित् कोईकूँ ही “ मैं कौन हूँ ” । “ जगत् क्या है । ” “ मेरा औ जगत्का अवसान क्या है ” इत्यादि अने-

१० ॥ राममात्र चर्फी प्रस्तावना ॥ [विचार

कानेक प्रभ उद्भव है । जैसे कोई कटकके जग-
लविषै फसा हुआ हुआ एक पावता है । तैसें सशय
श्री शकारूप कटकसमूहसे जे पीड़ित ह ।
वे मात्र ता दु गल मत्त होतकी इच्छा करतह ।
पराहित राजाकू अन्मन्मन जो उपदेश किया सो
महत्तनमनुष्यानें श्रुण किया परतु मोक्षप्राप्ति
मात्र परीक्षित राजाकू भई कारण कि तिसका
मृ यु समम दिन निश्चित भयाथा श्री अन्य थोता-
होतु ईसा को भय नहीं था ॥ आज भी वही
श्रीमद्भागवतकी समाह पारायण अमख्यजन
श्रवण करत ह ॥

आधुनिक समयसे कोई कोई इमेजीभाषाशा-
नविषै कुशल पुरुष गुरुगम्य उपनिषद् आदिमहत्त
प्रज्ञा स्वतंत्र अवलोकन कर हैं श्री तदनतर
आपकू वेदानसिद्धान्तके चेत्ता मानिके अन्यज

नां कूँ वेदांतका बोध देनेवास्ते इंग्रेजीमें ग्रन्थ लिख
 तेंहें वा मासिकअंकनविषै लेख प्रकट करतेहैं ।
 परंतु वे लेखमें मुख्यकरके द्वैतप्रपंचका प्रतिपा-
 दनमात्र देखनैमें आताहै ॥ तैसैं श्रीयोसाफि
 नामक मण्डलके नेता वी वेदांतसिद्धांतकूँ
 कछुक स्वतंत्र देखिके मुख्य द्वैतकाही वर्णन करेहैं
 औ अदृश्य महात्माओंकी सहायतासैं
 असंख्यवर्षोंके पीछे मुक्त होनेकी आशा रखतेहैं ॥
 ऐसैं होनेका प्रधानकारण वेदांतविद्याका
 स्वतंत्रअभ्यास है ॥ इसविषै श्रीविचारसागर
 में सम्यक् कहाहै कि:—

। दोहा ॥

वेद अथिब विनगुरु लखै, लागै लौन समान ।
 वादरगुरुमुखद्वार है, अमृततैं अधिकांत ॥

पुरातनकालसैं प्रचलित हुई रूढि अनुसार

१२ ॥ सप्तमावृत्तिर्नी प्रस्तावना ॥ [विचार

कानेक प्रभ उद्भवै हैं ॥ जैसें कोई कटकके जग-
लविषै फसा हुआ हुआ खकू पावता है । जैसें सशय
थी शकारूप कटकसमूहसे जे पीड़ित है ।
वे मात्र ता हुआ खसै मक्त होनेकी इच्छा करतेह ।
परीक्षित राजाकू ^{उत्पत्ति} अन्मैज्यन जो उपदेश किया सो
सहस्रनमनुष्योंनै श्रवण किया परंतु मोक्षप्राप्ति
मात्र परीक्षित राजाकू भई । कारण कि तिसका
मृत्यु सप्तम दिन निश्चित भयाथा थी अन्य श्रोता-
श्रोकू तैसा कोई भय नहीं था ॥ आज भी वही
श्रीमद्भागवतकी सप्ताह पारायण श्रवणजन
श्रवण करते ह ॥

आधुनिक समयसँ कोई कोई इमेजीभाषाशा
नविषै कुशल पुष्प गुरुगण्य उपनिषद् आदिमन्त्र
प्रथोका स्वतंत्र अलोकन कर हैं थी तदनंतर
आपद् यदानमिद्वानके वेत्ता मानिषे अन्यज

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १३

नां कूँ वेदांतका बोध देनेवास्ते इंग्रेजीमें ग्रन्थ लिख
तेहैं वा मासिकअंकनविषै लेख प्रकट करतेहैं ।
परंतु वे लेखमें मुख्यकरके द्वैतप्रपंचका प्रतिपा-
दनमात्र देखनैमें आताहै ॥ तैसैं थीयोसाफि
नामक मराडलके नेता वी वेदांतसिद्धांतकूँ
कछुक स्वतंत्र देखिके मुख्य द्वैतकाही वर्णन करेहैं
औ अदृश्य महात्माओंकी सहायतासैं
असंख्यवर्षोंके पीछे मुक्त होनेकी आशा रखतेहैं ॥
ऐसैं होनेका प्रधानकारण वेदांतविद्याका
स्वतंत्रअभ्यास है ॥ इसविषै श्रीविचारसागर
में सम्यक् कहाहै कि:—

।। दोहा ॥

वेद अविद्य विनगुरु लखै, लागै लौन समान ।
वादरगुरुमुखद्वार है, असृततैं अधिकांत ॥

पुरातनकालसैं ऽ चलिन दुई रुढि अनुसार

१४ ॥ मप्रमावृत्तिको प्रस्तावना ॥ [विचार-

अनरु स्थल विषय जो वेदान्तकी कथा होती है ।
तामें काइरु शास्त्रका पठन करिके तिसपर कोइ
महा मा पुरुष विचरन करेहे । तार्ते यद्यपि थोता
जनौंरु लाभ हावैहे तथापि शास्त्राभ्यासकी
पद्धति नौ विलक्षणही है ॥

जैसे दण्डागत जोहरीका पुत्र जोहरीकी सहा
यनासे हारेकी परीक्षा करनेमें कुशल भया ।
तैसे ब्रह्मविद्याका अभ्यास की कोइ ब्रह्मयोगिय
ब्रह्मनिष्ठगुरुद्वाग करनमें आव । तवीही तामें
सुखलता प्राप्त हावै ।

अब वेदान्तशास्त्रका अभ्यास कोइ महात्माके
समीप किमतीतिमें करना आवश्यक है मा नाचे
वर्णन करेहे —

श्रीविचारचन्द्रालय ग्रन्थ वेदान्तकी प्रथम पाथी-
रूप है ॥ यह ग्रन्थ प्रश्नोत्तररूप होनेमें प्रथम

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १५

मुमुक्षु ताका व्याख्यासहित प्रतिदिन श्रवण करै
औ ताके पीछे जहांपर्यंत अभ्यास किया होवै ।
तहांपर्यंत क्रमसँ विना पूछनमें आवे तिनके
उत्तर मुमुक्षु देवै ॥ इस रीतिसँ ग्रंथ पूर्ण करिके
पीछे श्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहका मात्र श्रवण करै ।
तदनंतर—

मुमुक्षु श्रीविचारसागरका श्रवण करै औ
जितने भागका अभ्यास पक्का हुवापोवै । तितनै
भागगत मुख्य पारिभाषिक शब्द । प्रक्रिया । वा
प्रसंगके प्रश्न महात्मा उत्पन्नकरिके पूछे ताके
उत्तर वह मुमुक्षु देवै ॥ यह ग्रन्थकी समाप्ती पीछे
श्रीपंचदशीग्रंथकावी तिसीहीं रीतिसँ दृढ अभ्यास
करै औ श्रीविचारसागरके छंदनमेंसँ तथा श्रीपंच
दशीके श्लोकनमेंसँ जितनै कंठ करनेकी महात्मा
आज्ञा करे तितनै मुमुक्षु कंठ करै ॥ गत

१६ ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ [विचार-

अभ्यासकी वारम्बार पुनरावृत्ति करनी थी
अत्यन्त आवश्यक है ॥

उपरोक्तरीतिमें उक्त ग्रन्थनका अथवा अन्य
वेदान्त ग्रन्थनका पठन श्री श्रद्धापूर्वक मुमुक्षु
अभ्यास करे तो ब्रह्मविद्याविषे कुशल होवे नाम
शंका नहीं । तथापि ब्रह्मानुष्ठ होना तो अत्यन्त
मिष्ट है । काहेसे कि जगत्विषे सत्यताकी
बुद्धि दृढीकरणके असत्यताकी बुद्धि दृढ करनी
नायक श्री अपनविषे निर्विकार ब्रह्मस्वरूपको
बुद्धि दृढ करनी कार्य है । इस प्रकारकी
बुद्धि दृढ हो या नहीं मा आपही अपने
आत्मम पुरुषैस उत्तर मिलताहै ॥ यह ज्ञान
स्वस्वरूपाहै ॥

ग्रन्थनिष्ठपठनकी दुर्लभताविषे श्रीमद्भागवद्
गीतासे कहें हैं ।

चन्द्रोदय] ॥ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ १७

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये । यतता-
मपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ ७ । ३ ॥

ऊपर कहे अनुक्रमसँ अभ्यासकी पूर्णता हुवे पीछे कोई महात्माद्वारा श्रीमच्छंकराचार्यकृत उपनिषद् भाष्य । सूत्र भाष्य । श्री गीता भाष्यका अवलोकन करनेसे आनंदसहित ब्रह्मनिष्ठाकी दृढतामें अधिकता होवैगी ॥ तदनंतर इच्छा होवै तौ श्रीयोगवासिष्ठादिक अनेक वेदांतके ग्रंथ हैं सो वी देखना ॥ संक्षेपमें इतनाही कहना है कि जगत्व्यवहारोपयोगी अनेक विषयनका जैसे आदर श्री दृढतापूर्वक आधुनिक शालाओंविषे विद्यार्थीजन अभ्यास करतेहैं तैसें दीर्घ अभ्यासविना वास्तविक लाभ होवैका नहीं । बहुतग्रंथनके पठनसँही ब्रह्मज्ञान होवै

ऐसा नियम नहा । उतमअधिकारी मात्र एक
 श्रीविचारसागर अथवा श्रीपद्मदगी श्रद्धापूर्वक
 गुरुद्वारा विचारिने निरमित विचारपूर्वक
 अभ्यास करै तौ ब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति अत्रश्य होवै ।

जिसकू आधुनिककालसयधि अनेक गुंमा
 उद्भव होती हावै । सा शास्त्रअभ्यासके पीछे
 इमेजाम किलतुनीवे आ सायन्तके अनेक ग्रन्थ
 ह वे देख तौ तातें बुद्धिका क्षेत्र अत्यन्तविस्तृत
 हावेगा श्री जगत्क मापिकता आदिक द्रत्यन्त
 स्पष्ट हावेगा एसा स्वानुभव है ॥

भाडे समयमें हमने कुलनाम 'नूरानी' का
 हमारी मझाके अन्तमें प्रयोग किया है ॥ इति ॥

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥

॥ अथ षष्ठावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

इस ग्रंथकी पंचमावृत्तिमें पूर्वकी आवृत्तिनमें नवीनता करीथी तैसैं इस आवृत्तिविषैं वी जो नवीनता औ अधिकता करीहै । सो नीचे दिखावे हैं:—

१. इस ग्रंथके कर्ता ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजने मुमुक्षुनके उपरि अत्यन्त अनुग्रह करीके इस आवृत्तिके लिये ग्रंथभाग औ टिप्पणभागका पुनः संशोधन किया है । तथा टिप्पणोंविषैं कहि कहि अधिकता करीके गहन अर्थकी विस्पष्टता करी है ॥

२ पूर्वमीमांसा । उत्तरमीमांसा (वेदांत) ।
न्यायशास्त्रिक षट्दर्शनोंविषैं जीव । जगत् । बंधा

मोलआदिक मुख्यपदार्थोंके कैसे भिन्नभिन्न लक्षण किये हैं । श्री वे लक्षणविषै उत्तरोत्तर के समानताअसमानताहै । सो दृष्टिपातमात्रसें झ होवै ऐसा 'स्टर्दर्शनसारदर्शकपत्रक " थीपद दशी सर्तीका मभापाकी द्वितीयावृत्ति श्री थी विचारसागर की चतुर्थावृत्तिविषै हमने दिया है तैसाही पत्रक इस प्रथके अभ्यासीनके अवलोक अर्थ इस आवृत्तिमें अतविषै छाप्या है ॥

३ इस आवृत्तिमें प्रथमविषै बहुतउर्ध्वके योगसें चार चित्र दिये गये हैं । तिनविषै

- १ प्रथमचित्र पूजाविषै स्थित हुये द्विजका है (२) दूसरा चित्र राजाका है ॥
- (३) तीसरा व्यापारीका है ॥ श्री
- (४) चतुर्थ चित्र घट बनानैविषै प्रवृत्त भये कुलालका है ॥

इमरानिस षटविधा अंग । लघिय । वैश्य श्री शूद्र यह चांगिजानि दृश्यमान होवै है । तयापि

तेन च्यारिचित्रनविणै स्थित जो पुरुष है ।
 तसकी मुखाकृति लक्षपूर्वक अवलोकन करनेस
 पात होवैगा कि वे च्यारिचित्र एकहीं पुरुषके
 । मात्र तिनोंकी भिन्नभिन्नवस्त्र औ सामग्रीरूप
 उपाधिके भेदसँ ऐकहीं पुरुष भिन्नभिन्न च्यारि-
 णका प्रतीत होवैहै । अर्थात् तिनोंकी उपाधिके
 पाध कियेतै वे च्यारिपुरुषनका परस्पर केवल
 भेद है ॥

जीवब्रह्मका भेद सत्य नहीं किंतु मात्र उपाधि
 कृतही है । ऐसा सर्वमतशिरोमणि वेदांतमत का
 जो महान् औ अबाधित सिद्धांत है औ जो इस
 ग्रंथकी “तत्त्वंपदार्थैक्यनिरूपण ” नामक ११ वीं
 कृत्ताविणै अनेकदृष्टांतसँ निरूपण कियाहै । तिसकूं
 अथास्थित समजनेमें औ तदनुसार दृढनिश्चयकर-
 नेमें मुमुक्षुनकूं सहायभूत होवेंगे । इतनाहीं नहीं
 परंतु दृष्टिगोचर होतेहीं वे महान् सिद्धांतकूं स्मरण
 करवेंगे । ऐसैं मानिके उक्त चित्रनकूं छापे हैं ॥

इस ग्रन्थके कर्त्ता अत्रनिष्ठ पंडितश्रीपीताम्बरजी महाराज । जिनोंका जीवनचरित्र इस आवृत्ति-विषे वी छाप्याहै श्री जिनोंनै मुमुक्षुनके कलश-अर्थहो जन्म धारण किया था ऐसै कहिये ती तामें किंचित् वो अतिशयोक्ति नहीं है । श्री जिनोंनै अत्यन्तदयालै अनेक ग्रंथनहूँ रचिके तय थं पंचदशी । श्रीमद्भगवद्गीता श्री वेदांतके

.....

प्रामाण्य सवत् १९६१ के वैशाख कृष्णपक्ष ७ गुरुवारके दिन इस क्षणभंगुर जगत्का त्याग करीके विदेहमुक्त भयेहें ॥ तिनोंने तिसी वर्षके अत्र कृष्णपक्ष १३ भौत्यारके रोज संन्यास ग्रहण करीके अत्रात्तन्त्रात्तन्त्रती सदा धारण किया वा ॥

शंका सारंगमहंमद ॥

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥

॥ अथ पंचमाध्यात्मिकी प्रस्तावना ॥

यह ग्रंथ ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकरि
स्वतंत्र रचित है। यामें पौडशप्रकरणरूप पौडशकला
हैं। श्री तिन प्रत्येक कलाविषै एकएक विलक्षणप्रक्रिया
भरीहै। यद्यपि ये सर्वप्रक्रिया संक्षिप्ताकारसँ धरीहैं तथापि
सुमुत्तुनकूँ ब्रह्मसाक्षात्कारकी प्राप्ति करनेमें सहाय-
कारिणी होवैहैं। यह ग्रंथ आदिमें अंतर्गृत प्रश्नोत्तररूप
होनैतै श्री श्रेष्ठ अल्प श्री विख्यात वेदान्तप्रक्रियाकरि
युक्त होनैतै। श्री सुवर्णशास्त्रशिरोमणि वेदान्तशास्त्रके
अभ्यासके आरम्भकालमें जो जो अवश्यज्ञानव्य है मं
सर्व इस लघुग्रन्थविषै समाविष्ट किया होनैतै। वेदान्त
अभ्यासविषै नवीनजन कूँ तौ यह ग्रन्थ वेदान्तकी प्रथम-
पैथीरूप है ॥

ग्रन्थकारमहारानी हयका सारभूत पद्यारमक "वेदान्त पञ्चयज्ञा" नामक अष्टग्रन्थ किया है । सो "वेदान्तविनोद" के प्रथम अर्धकल्पमें प्रतिबद्ध है ॥ काव्य । कण्ठ करनेमें सुगम थी अत्यन्त किये विस्तृत अर्थका समारक होवे है । हयवास्ते मुमुक्षु नष्ट उपयोगी ज्ञानिके वेदान्तपञ्चयज्ञागत ये अर्थ इस अर्थविषी प्रत्येककलाके आरम्भमें द्वाये है ॥

अन्तही पाठसर्गों कलाविषी २०० सँ अधिक वेदान्त-पारिभाषिकशब्दोंके अर्थ धार्य । ये ही अन्तर्गत महाराजकीका कल्याणकाही फल है ॥ यह अष्टग्रन्थकोश अन्तमहदूष्य उनके अर्थविषी अत्यन्त महत्त्वभूत होवे है ॥

या ६ अर्थमें बड़ी अज्ञानादि अष्टग्रन्थिका भरी है । तिसकी वास्तव अर्थका पूछाहु विनाशय प्राप्त होवे है ॥ इस अष्टग्रन्थिकाविषी अष्टग्रन्थकोशगत शब्दार्थ की ६/२४ किया है ॥

श्रंकयुक्त पांश्राफनकी जो नवीनमुद्रणशैलि हमारे छापे हुवे श्रीपंचदशी सटीकासभापा द्वितीयावृत्ति श्री श्रीविचारमागचानुथावृत्तिके ग्रन्थोंमें प्रविष्ट करीहै । तैसीही रूढिमें इम ग्रंथकी यह पंचमावृत्ति छापीहै ॥ इसरूढिसैं श्रभ्यापीनकूं अत्यन्त सुलभता होवैहै । कारण कि ग्रन्थके भिन्नभिन्न त्रिषयोका समानासमानपना । उत्तरोत्तरक्रम । तद्गन शंकासमाधान । दृष्टांतसिद्धांत श्री विकल्प । शष्टिपातमात्रवैहीं ज्ञात होवैहै ॥ इम रूढिसैं ग्रंथनकूंछापनै आदिकतैं इस आवृत्तिका विस्तार गतआवृत्तिसैं अनुमान १०० पृष्ठोंका अधिक हुवाहै श्री काभाज बी उत्तम डालेहै।

ग्रंथकारमहात्मा ब्रह्मनिष्ठ पद्मिन श्रीपातांबरजीमहाराज । जिनोंने अनेक स्वतंत्र ग्रन्थ रचिके । श्रीपंचदशी श्री दशोपनिषद् आदिक महद्ग्रंथोंके भाषांतर करीके । श्री विचारमागरादिक अनेक ग्रंथनर टिप्पण-कारिके । अखिल सुमुत्तुममुदायउपरि मडान् अहुग्रह कियाहै । तिनोके जीवनचरित्रके लिये अनेक-

२६ ॥ पंचमावृत्तकी प्रस्तावना ॥ [विचार-

मुमुक्षुनकी तावशाकाशाकू देखिके । सो जीवनचरित्र
इस आवृत्तिविषै विस्तारसै छापाई ॥ तदुपरि दर्शन-
कर्मनै योग्य पूज्य महाराजश्रीकी परुषाणकारी यथा-
स्थितचित्रितमूर्ति तिनो के हस्ताक्षरमहित प्रथारममें
स्थापित करीहै ॥

ग्रन्थविषै मुमुक्षुनकी प्रवृत्तिवै मनोरजक ग्रन्थकी
सुन्दरता वा सहायक है । ऐसै मानिके इस ग्रन्थके पूठे
सुन्दर कियहै । परन्तु सुन्दरताके साथि सिद्धान्तका स्मरण
रूप लाभ हायै इर हेतुसै इस पंचमावृत्तिके पूठे
अतिखर्च करीक विज्ञायतसै मगवायहै ॥ श्री रूपेरी
जाकि रगसै चित्तार्थक कियहै ॥ पूठे ऊपर जे
भ्रान्तिआदिक चित्र छापेगयह तिनके अर्थका विवेचन
न चे करैहै —

निर्गुणउपासनाचन्द्र इमार दुपाये धीविचार
सागरावै निर्गुणउपासनाचक्र धरयाई । जिसका एक
मणिप्र चक्र वा पूठेमुकुटभागपर रखाई ॥ इसमें प्रत्येक
पद धनके अदिके अक्षरमात्र तिन पदार्थनकी स्तुतिके
लिये रखेहै ॥ सुगमताका अर्थ स्पष्टता करियहै —

चन्द्रोदय] ॥ पंचमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥ २७

अ-अकार
वि-विराट्
वि-विश्व

॥ १ ॥ इन तीन उपाधिवान्की एकता चिंतनीय है ॥

उ-उकार
हि-हिरण्यगर्भ
तै-तैजस

॥ २ ॥ इन तीन उपाधि-
वान्की एकता चिंतनीय है ॥

म-मकार
ई-ईश्वर
प्रा-प्राज्ञ

॥ ३ ॥ इन तीन उपाधिवान्की
एकता चिंतनीय है ॥

अ-अमात्र
ब्र-ब्रह्म
तु-तुरीय

॥ ४ ॥ इन तीन शुद्धनकी एकता
चिंतनीय है ॥

प्रथमत्रिपुटीकी द्वितीयके साथि औ तिसकी
चतुर्थके साथि औ तिसकी चतुर्थके साथि
एकता चिंतनीय है ॥

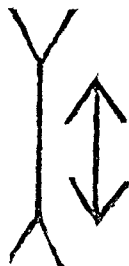
उक्तअर्थ श्रीविचारसागरकी चतुर्थ आवृत्तिके २८१
सँ ३०२ अङ्कपर्यन्त ग्रन्थकर्त्ताने विस्तारसँ दिखाया है

दो सीधीरेषायुक्त आकृतिः—जिनके मुख-
भागउपरि चन्द्राकारविषै मध्यका नाम त्वास्याई । ताके
नीचे दो सीधीरेषावाली एक आकृति है । ये दोन्



रेषा द्विगदिशा नरक मङ्गोचिा ओ वामदिशा तरफ
विकसित हुई भावनाह । परन्तु बहवविह नैने नही है
किन्तु सर्वस्थलमे व ममान अंतरगत ही हैं । यह धाना
दान् रष ओ के आदिभागरू अन्तभागक साधि कष्टपरिके
द्वयन्मे निर्विवाद सिद्ध होवई ॥

परिमाणभ्रांतिदर्शक दो आकृतिः—जिल्दकी पीठविषै चर्तु लाकारमें " शरीफ " नाम है । ताके ऊपर उक्त दो-आकृतियां छापी हैं । सो नीचे दिखावेहैंः—



उभयचित्रोंकी दोनूँ सीधीमध्यरेषा यद्यपि समान परिमाणकी हैं । तथापि तिमके अग्रभागविषै धरीहुई तिर्यकरेषारूप उपधिसे बलसै भ्रांतिद्वारा चमच्चित्रकी मध्यरेषा दक्षिणचित्रकी मध्यरेषासै बडी प्रतीत होवैहैं ॥

दीर्घरेषायुक्त दो आकृतिः—पूँठेके पृष्ठभागपर मध्यमें पट्चक्राकार औ उपरि तथा नीचे दीर्घरेषायुक्त । ऐसै रूँव तीन आकृति रखीहैं । तिनमेंसै दीर्घरेषायुक्त आकृतिनका वर्णन करेहैंः—

पूँठेके पृष्ठभागके उपरिकी दो दीर्घरेषा । नीचे

प्रथमआवृत्तिसमान दृष्ट श्रावती है:—

१ प्रथम आवृत्ति,

क र्व क

उपरिकी दोरेषा,

आदिअ-नमें दोनु दीर्घ षाका क क भाग संकोचित तथा मध्यक स्व भाग विकसित दृष्ट श्रावता है ।

यानें ये रेषा षकाकार है ऐसै प्रतीत होवै है ॥

पू ठक पुष्टभागके नीचेकी दोदोर्घरेषा । नीचेकी दूसरी आवृत्तिपदरा भ सता है:—

२ दूसरी आवृत्ति,

क र्व क

नीचेकी दोरेषा,

आदिअ-नमें दोनु दीर्घरेषाका क क भाग विकसित तथा मध्यका स्व भाग संकोचित देखनैसै श्रावता है । अर्थात् प्रथम आवृत्तिसँ विपरीत षकाकार प्रतीत हाव है ॥

तथापि पूंठेके पृष्ठभागके उपरिकी औ नीचेकी दोर्दीर्घरेपा । प्रथम औ दूसरी आकृतिके समान वक्र नहीं हैं । सीधीहीं हैं । मात्र भ्रांतिसें वक्ररेपा-कार प्रतीत होवेहैं । यह वार्ता प्रत्यक्षरूप चालुप प्रमाणसें जैसें सिद्ध होवैहै । तैसें स्पष्ट करेहैं:—

जैसें कोई वाणकूं छोडनैके समयपर वाणकूं लक्ष्यके साथि दृष्टिसें सांघताहै । तैसें उक्त नीचेऊपरकी दोनूरेपाओं आदिके साथि अन्तकूं लक्ष्यकरिके देखनैसें वे दोनूरेपा । वाजूकी तीसरी आकृति समान सीधीहीं दृष्ट आवैगी ॥

यातैं पूंठेके पृष्ठभागपर उक्त प्रथमाकृतिसदृश ख भाग विस्तृत । तथा दूसरी आकृतिसदृश ख भाग संकोचित दृष्ट आवतेहैं सो भ्रांति करिकेहीं भासतेहैं । यह सहजही सिद्ध होवैहै ॥

भ्रान्तिका कारण - प्रत्येक दीर्घरेपाके ऊपर तथा
 नीचे जे अनुमान १८ वा २० छोटी टेढ़ीरेपा हैं ।
 ए हा उप धिरूप है औ वे उपाधिरूप रेपाही इस
 चित्रतदृष्टांतविषै भ्रान्तिकी कारण हैं ॥

जैसे मरुभूमिरेपे मृगजलका भान भ्रान्ति
 रूप है । तैसे इहा चित्रितदृष्टांतविषै (१) प्रथम
 तथा (२) दूसरी आकृतिगत ए भागके विकास
 सित औ रुकाचितपनै का भान बी भ्रान्तिरूप है ॥

जैसे मरुभूमिरेपे " व्यावहारिक जल नहीं है ।
 पानिभासि रहा है " तैसे निश्चित भये पीछे बी
 उपाधूमिके साथी सुयस्त्रिणके सबधरूप उपाधि
 कालमें नजही प्रतीत दूर नहीं होवेहे । तैसे
 इहा दारुपारूप चित्रितदृष्टांतविषै बी प्रथम तथा
 दूसरी आकृतिगत " ए भाग विकासित औ संको
 चित नहा है किन्तु आदिअन्तपर्यंत समानहा है "।
 तैसे निश्चित भये पीछे बी छोटीटेढ़ीरेपाके सबध
 रूप उपाधिक चनमें (१) प्रथम तथा (२)
 दूसरी आवृत्तिकी न्याई ए भागके विकास औ
 सदाचरी प्रतीत दूरी नहा होवेहे ॥

चन्द्रोदय] ॥ पंचमावृत्तिको प्रस्तावना ॥ ३३

सिद्धांत—श्रुतिः—परांचि खानि व्यतृणत्स्वयं-
भूस्तस्मात्पराङ् पश्यति नांतरात्मन् ” अर्थः—स्वयंभू
(परमात्मा) इन्द्रियनकं वहिमुख रचनाभया । तातें
देवतिर्यग्मनुष्यादिक । बाह्यवस्तुनकं देखतेहैं । अन्तर-
आत्माकं नहीं ॥ ” टीकाः—यद्यपि इससृष्टिविषे
सर्वप्राणी वहिमुखहीं वर्ततेहैं । काहेतें जातें तिनोकी
इन्द्रियनकी रचना स्वयंभूने तिसप्रकारकीहीं करीहै । तातें
इन्द्रियनकी तृप्ति करनेविषेहीं सर्वजीवोंकी प्रवृत्ति होवै-
हे श्रां धाहींतै मनुष्यनसैविना अन्यप्राणी तौ ता प्रवाहके
शोकनेविषे सर्वथा वहिमुखप्रबल प्रवृत्तिप्रवाहके बलसै हत
भये असमर्थ हैं । वे अन्तरआत्माकं देखी शकते नहीं ।
वहिये अपने आपकं अपरोक्ष निश्चय करी शकते नहीं ।
यह स्पष्टहीं हैं ॥ काहेतें तिन शरीरोविषे अन्तमुखतारूप
विरोधाप्रवाह करनेवास्ते समर्थबुद्धिरूप साधन है नहीं ।
तथापि केवलमनुष्यशरीरविषेहा यह सर्वोत्तमसाधन
वो स्वयंभूपरमात्मानै रखाहै । यातें स्वस्वरूप ज्ञानके
अधिकारी मनुष्योविषे केईक कदाचित् गुरुकृपासै

यदिमुखप्रवृत्तिप्रवृत्ति इके विरोधी अन्तर्मुखप्रवाहके माधन-
 विचारादिककृत् संपादन करैँ श्री अन्तरात्माकृ ब्रह्म
 स्वरूप अपनायापकरिके निश्चय करैँ ॥ ऐसैँ मुक्तमनुष्य।
 ज पूर स्वयम्भूषित इन्द्रियनसैँ प्रथम अज्ञानदश विषै
 कबल रूपरसआदिककृ हा दखतये वे गुरुकृपास ज्ञान-
 भये पाछु जोवनमोक्षदशादि दोरीधरपारूप चित्रित-
 आतिके दृष्टांतका न्याई । सबरूपरसआदिककृ दखते-
 हुये श्री अन्तर्मुखप्रवाहक बलसैँ सर्वरूपरसआदिक
 मिथ्याहीं है ऐसैँ आतिके बाधकके तिम आतिके
 अधिष्ठान ब्रह्मस्वरूप आत्माकृ अपरोक्ष निश्चय करैँ ॥

पटचक्रयुक्त आकृति — पू डेहेप्रष्टमाणपर मध्य
 विषै पटचक्रमकरि युक्त जो आकृति है । तिसका उप-
 वाग अब दिखावैँ — मध्यकृ द दक्षिणदक्षविषै मन्मुख
 धरिके । वामसैँ दक्षिणकी तरफ तरासैँ लघुचक्राकर
 केरनवरि पटचक्र है वे दक्षिणकी तरफ फिरते दृष्ट
 पडैंग श्री इसी आकृतिक मध्यविषै दत्तयुक्तचक्र है
 मो पटचक्रसैँ विपरीत कहिय वामकी तरफ फिरता
 ज्ञानसैँ आवगा ॥ यह श्री आतिविषय चित्रितदृष्टान्त है

१ रंगितपट औ स्याहीका दृष्टान्तः—इस ग्रन्थके पृष्ठके मुख औ पृष्ठभागविषै जितनी आकृति दृष्ट आ-
 चरतैं । तिन सर्वविषै रंगितअक्षररेपाआदिक रेख-
 नेमें आवतेहैं वे भ्रांतिकरिहीं भासते हैं । कारण किः—
 स्याहीरूप उपाधिसै रंगितपटविषै रंगितअक्षरआदि-
 ककी कल्पना होवैहै ॥ स्याहीरूप उपाधिके बाध किये
 “ वास्तविक कोइ अक्षररेपादि है नहीं परंतु सर्व
 रंगितपटहीं है ” ॥ तैसै सिद्धांतमें । परमात्मनत्वविषै
 यह जो जगत् भासताहै सो केवलभ्रांतिकरिहीं भास-
 णाहै । कारण किः—मायारूप अज्ञानउपाधिसै परम-
 तरविषै जगत्की कल्पना होवैहै । तातै तिस मायारूप
 अज्ञानउपाधिकुं गुरुमुखद्वारा बाध करिके “ वास्तविक
 जगत् कछुबी है नहीं किंतु सर्व आत्माहीं है ” ऐसा
 निश्चयरूप मोक्षका साधन जो तत्वज्ञान सो उक्त-
 चित्रितदृष्टान्तनके दर्शनस्मरणकरि मुमुक्षु नकूं होहू ॥

शरीफ खालेअहंमद ॥

ॐ

मङ्गलाचरणम्

ब्रह्मनिष्ठपांडितश्रीर्पातांबरजीकृतम् ॥

॥ नाराचवृत्तम् ॥

कलं कलक कडजल तमो निवारि सडजल
गतानिचचला रल सुगानिशीलमुज्ज्वलम् ॥
सदा सुर्यादिकदल त्रितापपापशामक ।
नमामि ब्रह्मधामक सयापुरामनामकम् ॥ १ ॥
समानदानदायक भवाववाक्यसायक ।
सुशुद्ध धीविधायक मुनीन्द्रमौलिनायकम् ॥
स्वमङ्गलानगायक व्यक्त त्रिलोक्यरामक ।
नमामि ब्रह्मधामक सयापुरामनामकम् ॥ २ ॥
शमत्तमादिलक्षणं प्रतिक्षणं शशिचक्षणं ।
सुमनुरानने क्षम क्षमपु वै निन्दनम् ॥

सुलदय लदय संशयं हरं गुरुं हि मामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ३ ॥
 कलेशंलेशवेशशून्यदेशके प्रवेशके ।
 गनाविशेषशेषकं ह्यशेषवेषदेशकम् ॥
 परेशकं भवेशकं समस्तभूपभामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ४ ॥
 सकालकालिजालभालंभेदिभानभङ्गकं ।
 प्रभिन्नखिन्ननुन्नभाविजन्ममत्तमल्लकम् ॥
 सभेदखेदद्वेदवाक्यग्रथयामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ५ ॥
 भवाष्टकष्टपाशदासभावभासनाशकं ।
 सुशुद्धसत्त्ववृद्धतत्त्वब्रह्मतत्त्वभासकम् ॥
 स्वलोकशोकशोषकं वितोषदोषवामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ६ ॥
 संबधुजन्मसिंधुपारकारिकर्णधारक ।
 सलोभशोभकोपगोपरूपमारमारकम् ॥

गयालकालवारक समाप्तवर्कामकं ।
 नमामि ब्रह्मधामक सधापुरामनामकम् ॥ ७ ॥
 स्वलक्ष्मिदक्षत्रचक्षुषं स्वरूपसौख्यसंज्ञुषं ।
 कृतार्थचेतनायुष गतार्थेगाभितस्थुषम् ।
 विभोग्यजातदुर्विष मुषं गुणालिदामक ।
 नमामि ब्रह्मधामक सधापुरामनामकम् ॥ ८ ॥
 भवाद्युवीविहारकारि जीवपांथपरदं ।
 सुदुक्तिमुक्तिहारमारद सुदुद्धिशारदम् ॥
 सवीतपादकाररो धवीति त स्वरामक ।
 नमामि ब्रह्मधामक सधापुरामनामकम् ॥ ९ ॥

श्रीमन्महलमूर्तिपूर्तिमुपशस्वानद्वायुं हसन् ।
 मौंभाभ्यंरमारत्पतिं प्रविहन्प्रोद्भूतनापत्रयम् ॥
 सवारसुंल्लप्रमप्रमनमामृद्धारर फीगत ।
 प्र यक्नररसुचित्तरूपसुगुरु राम भजेऽह मुरा ११।

(भावार्थसंज्ञुपागत)

॥ श्रीसद्गुरुभ्यो नमः ॥

अथ ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबर-
जीकां जीवनचरित्र ॥

॥ उपोद्धात ॥

॥ श्लोकः ॥

पीताम्बराह्वविदुषश्चरितं विचित्रम्
यद्वै धरिष्ठनरसद्गुणरत्नयुक्तम् ॥
ज्ञानादिसद्गुणगणैर्गृथितं स्वकीय-
ज्ञानान्धुमुत्तमतिशुद्धकरं च वक्ष्ये ॥१॥

टीकाः—

पीतांबर है नाम जिनका ऐसैं जे पंडितजी

५०॥ पण्डितजीका आधारकी जीवनचरित्र॥ [विगर

तिनका चरित्र कहिये जीवनचरित्र । अर्थ यह
जा — नामसे आरम्भकरिये अद्यपर्यन्त जीवित
अवस्थापरिये तिनोंका आचरण । ताहूँ मैं कहूँगा ।

१ खो चरित्र कैसा है ? विचित्र है कहिये अद्
भुत (आध्यात्मिक) है ॥

२ फेर कैसा है ? जो प्रसिद्ध अत्यन्तश्रेष्ठ पुरुषों
के सद्गुणरूप स्तनोंकरि युक्त है ॥

३ फेर कैसा है ? ज्ञानादिसद्गुणोंके गणों,
(समूहा करि गुणित है ॥

अर्थ यह जो — जिस चरित्रविषै पण्डितजीके
आ तिनसे संबधवाले सपुरुषनके नामोंसे
स्मारित ज्ञान भक्ति वेदाध्य उपरतिआदिगुणोंका
घणन किया है ॥

४ फेर कैसा है ? जो चरित्र अपने ज्ञानसे
स्वयत्तर्गत पुरयो पादर श्री स्वतन्त्रातीय

गुणोत्पादक महात्माओंके गुणोंके विज्ञापन-
द्वारा याके विचारनैवाले सुमुञ्चनकी बुद्धिकी
शुद्धिका करनैवाला है ॥

इस श्लोकविषै आरंभमें ।

१ "पीतांबर" शब्दकरिके ब्रह्मनिष्ठसद्गुरु श्री-
पीतांबरजीका श्री ।

२ पीत है अंबर नाम वस्त्र जिसका । ऐसै
विष्णुरूप सगुणब्रह्मका । श्री

३ पीत कहिये स्वसत्तासै कवलित कियाहै ।
अंबर कहिये आकाशादिप्रपंचरूप गर्भसहित
अव्याकृत (माया) रूप आकाश जिसनै

ऐसे सर्वाधिष्ठान निगुणपरब्रह्मका स्मरणरूप
तीनमंगलोंके आचरणपूर्वक इस जीवनचरित्ररूप
ग्रंथके आरंभकी प्रतिष्ठा करी ॥१॥

५- ॥पंडितश्रीपीतामरजीका जीवनचरित्र॥[विचार-

अथ द्वितीयश्लोकविषय इत्य वर्णन करनेशोर्ष्य
महान्मन्त्रके विशेषणभूत "पंडित" शब्दके अर्थकं
हेतुमद्वित्त वहेह —

॥ श्लोक ॥

चंशाघटंकनिगमागमशालिबुद्धि
विज्ञानशालिमतियुक्ततया हि लोके ॥
यः पंडितात्मकविशेषणयुक्तनाम्ना
पीतामरेति प्रथितः पुरुषुययपुञ्जः ॥२॥

टीका:—

- १ स्वकुलके "पंडित" जैसे अघटंककरि । अरु
- २ वेदशास्त्रकी बुद्धिरूप ज्ञानकरि । अरु
- ३ ब्रह्मान्तमैक्यनिष्ठारूप विज्ञानकरि

विशिष्टमतियुक्त होनैकरि जो लोकविषै "पंडित्"
रूप विशेषणयुक्त ' नाममें पीतामर' जैसे प्रसिद्ध
बहुपुत्रके पञ्जरूप है ॥

इहां “पंडित” पदके उक्तत्रिविधअर्थनके मध्य प्रथम अरु द्वितीय अर्थ गौण हैं औ तृतीय अर्थ मुख्य है । काहेतै

“यस्य सर्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्जिताः ॥

ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पंडितं बुधाः” ॥१॥

अस्यार्थः— जिसके लौकिकवैदिकसमारंभ-कामना अरु संकल्पसैं वर्जित हैं । याहीतैं ज्ञानरूप अग्निकरि दग्ध भयेहैं संचित अरु क्रियशरणरूप कर्म जिसके ; ऐसा जो पुरुष है ताकूं बुधजन “ पंडित” कहतेहैं ॥ इस गीता-स्मृतितैं ज्ञाननिष्ठपुरुषविपैहीं “पंडित” पदकी वाच्यताके निश्चयतैं ॥२॥

४४ । पंडितश्रीपीतामहराजाका जीवनचरित्र ॥ [विचार

॥ कुलपरपरा ॥

कच्छुदेशत्रिपै अज्ञारनामा नगर है । तामें राजपूज्य मन्त्रज्योतिषीपंडित “ नरेख्य ” भयेथे जिमनी विद्वत्ताके माहात्म्यसे अद्यापि ताका सांग वश पंडित” इस अथटकरि युक्त भया- है । तिनक च्यारिपुत्र थे । तिनमेंमें

१ एउ भुजनगरमें रहिके श्रीमहाराजाओंका दानाध्यक्ष भया ॥

२ द्वितीयपुत्र नारायणसंगेस्वतीर्थका पुरोहित भया ॥

३ तृतीयपुत्र अज्ञाननगरमेंही ज्योतिषीपंडित पदरू पाया । श्री

४ ताका चतुर्थ अवरजपुत्र चागला भया । सो आसधीया नामक ग्राममें ग्रामाधीशके अनिआदरसे निवास करताभया ॥

एक समयमें गढसीसाग्रामनिवासी सरस्वत गंगाधरशर्मा था । सो कोडायग्राममें पाठशाला पढावताहुया रात्रिकूं अश्वारूढ होयके चार-कोशपर आसंवियाग्राममें पंडितजीके पास ज्योति-पशास्त्रके पढनै निमित्त प्रतिदिन जाता था । सो गुरुवरणोंकूं गोदमें लेके मुखसैं पढता था । एक दिन पंडितजीकूं निद्राआगई औ गंगाधरजी गुरुआज्ञाविना चरणोंकूं न छोडिके बैठा रहा ॥ सवेरमें सो देखिके ताकूं वर दिया कि:-“तेरेकूं सरस्वती मुहूर्तप्रश्न करूंमें कहैगी” ऐसैं प्रसादित-सरस्वतीवाले वे चागला नामक पंडित थे ॥ तिनके पुत्र दामोदरजी परमज्योतिपी भये । तिनके १ लीलाधर २ प्रेमजी औ ३ गोवधन ये तीन पुत्र थे । तिनमें लीलाधरजी परमज्योतिपीऔभगवद्भूत थे । वे आसंवियाग्रामसैं कदाचित् मज्जलग्राममें पर्यटन करने जाते थे । तहां ग्रामाधीशोंकों मुहूर्त-

६ ॥ पंडित श्रीपोतांबरजीका जीवनचरित्र । [विचार-

प्रश्नोंके प्रसंगसे बड़ी भविष्यत्वमन्त्रि दिखाई
थी । निम्न करिके तीनों मत्कारपूर्वक गृह अरु
जमीन देके तिनके मजलग्राममें स्थापित किये ।
ये शार्ङ्गमें तोर्धयात्रा करनेकुं गये । सो पीछे
लोटे नहीं ॥

लीलाधरजीके पुत्र १ गोपालजी तथा
• अमरबिहारी थे । तिनमें गोपालजीके पुत्र
पंडित १ लडागम २ पुरुषोत्तमजी तथा ३ पार-
पया । ये तीन थे । तिनमें पुरुषोत्तमजी जितेंद्रिय
निष्कण्ठ जपनपस्युक्त अरु मुहूर्त प्रश्नमें वाक्-
मिडिगानर तुल्य थे ॥

॥ जन्मवृत्तान्त ॥

पंडितश्यामपुराणमचार्य पुत्र पंडित • मूलराज
तथा • पानारजजा न ग ३ लालजा । ये तीन बने ॥
तिनका मालाका नाम वारवाई (वारयता) था ।
सा ग ३ गतशासन जनित विवकचना थी ॥

चंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ५७

भूलराजके जन्मके अनंतर । सप्तभगिनियां । ८
भईयां । अनंतर पंडितपीतांबरजीका जन्म विक्रम
संवत् १६०३ के ज्येष्ठशुद्ध १० रूपगंगा जयं-
तीके दिन भयाहै ॥ तिनके जन्मदिनमें माता
पिताकूं औ भगिनीयोंकूं औ सुहृदलोकनकूं
“ भगवत्का जन्म भया ” ऐसा उत्साह भया
था ॥ यथाशास्त्र जातकर्म पुण्यदानादि कियागया ॥
वे गर्भवासमें थे तब माताकूं नारायणसर
आदिक तीर्थयात्रा भई थी औ वेदांतश्रवण अह
अनवच्छिन्नसत्संग भयाथा तिस हेतुसँ वे बाल्या
वस्थारूहि वेदांतशास्त्रमें रुचिबाले भये ॥ वृद्ध-
कहते हैं किः—पट्टमासके गर्भके हुये जो माता
कूं सनशास्त्रका श्रवण होतारहे तो पुत्र वी
शास्त्रसंस्कारवान् होता है ॥ यह वार्ता प्रह्लाद-
अप्रावक्रादिमें प्रसिद्ध है ॥

॥ कौमार और पौगण्डसैं लेके किशोरवयका वृत्तांत ॥

पंडितपीतांबरजीके जन्मअनंतर तिनके पिताकी दिनदिन भाग्यवृद्धि होती गई ॥ ऐसे तिनके लालनपालन पोषण करने हुये तिनविपै माता पिताका प्रीति बढती गई ॥ पाचवर्षके अनंतर लघुवयविपै तिनके पिता सुभाषित प्रकीर्ण श्लोकादि मुग्धपाठ पढाते थे सो धारण करते रहे । तदनंतर पिताद्वाराही देवनागरी लिपिका ज्ञान भया । तदनंतर मद्रिगदिकमें जातेआते सन्यासी माधु ब्राह्मणके पास थी स्तोत्रपाठादिकी शिक्षा लन भय आ तिनामें तीर्थादिकको वार्ता थी प्राचीन इतिहास प्रेमते सुनतेरहे ॥ अनंतर अष्टवर्षकी वयमें इनका विधिपूर्वक उपवीत भया ॥ ॥

फेर श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठसद्गुरु श्रीवापु महाराज-
 ब्रह्मचारी जे दशवर्षसँ रामगुरुकी आज्ञाकरि
 सत्सङ्गीजनोंकी भक्तिपूर्वक प्रार्थनासँ मज्जलग्राम
 में रहतेथे । तिनोंकेपास अक्षरवाचनकी परि-
 पक्कता अरु संध्यावंत उपनिषद्पाठ गीतापाठ अरु
 रुद्राध्यायादिवेदके प्रकरणोंका पठन दोवर्षतक
 करतेभये ॥ तिनके साथि अन्य वी सहाध्यायी
 थे । परंतु इनके सदृश किसीकी धारणशक्ति नहीं
 थी । सो देखिके तिनके उपरि गुरुकी पूर्ण कृपा
 रहतीथी । याहितें तिनकी बुद्धिमें ब्रह्मविद्याके
 संस्कार डालते रहतेथे । तवहीं “मैं देहेन्द्रियादि-
 संघातसँ भिन्न साक्षीरूप हों ” । यह निश्चय
 दृढ होरहाथा अरु तिन महात्माविषै तिनकी
 गुरुनिष्ठा वी दृढतर होरहीथी । तत्र कौपीन-
 धारण गुरुसमीपवास गुरुसुश्रूषा इत्यादि ब्रह्म-
 चारीके धर्म संपूर्ण पालनकरिके रहतेथे ॥

५८ ॥ पण्डित श्रीपीताम्बरजीका जीवनचरित्र ॥ [विवा
 आधुनिकरूढिसँ निनहा उद्वाह १० वर्षके अनतर
 भयाथा । तदनतर थीसद्गुरया बटपत्तनमें
 निगमन भया ॥ निनके वियोगके समयमें प्रेम
 पूर्णक गद्गदकडादिप्रेमके चिह्न बी होतेरहे श्री
 आगुरने साथिही अध्ययनके निमित्त जानेका
 बहुत आग्रह भयाथा । परन्तु मानापितान बहुत
 हठलेने निवारण किया ॥

यज्ञोपवीतके अन्तर सोमप्रदोष एकादशी ।
 आदि । शास्त्रालक्षण अनवच्छिन्न करतेरहे श्री
 व्रतक दिनमें याम्यदेवका पूजन श्री प्रतिदिन
 स्वपिताक पचायतनपूजाका स्वीकार आपही
 कियाथा ॥ तिस तिस स्तोत्रादिकके पठनरूप
 भजनमें काल व्यतीत करतेथे ॥ प्रासादिक
 लघुमन्त्रस्तोत्रका पाठ प्रतिदिन नियमस करतेथे
 अ' महाराजर्धीके निर्गमन यथे पीछे श्रीरामगुरु-

चन्द्रोदय]॥परिहृतश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र५१
की चरणपादुका मज्जलग्राममें महाराजकेहीं
स्थानमें स्थापित थी उसकी पूजाअर्चादि वहाँ
करतेरहे ॥ तिस वयमें स्वमित्रोंके पास“चलोहम
स्वगृह छोडिके तीर्थयात्रादिक करें वा विद्याध्ययन
करें वा सत्समागम करें” । ऐसी शुभ वासना
तिनोंके चित्तमें उद्व होती रही परंतु वे-
मित्र सलाह देते नहीं थे ॥ महाराजके गमना-
नंतर तिनोंकेहीं स्थानमें कोई देशांतरवासी राम-
चरण नामक वेदांतसंस्कारयुक्त विरक्तसाधु
रहतेथे । तिनके साथि बहुत परिचय रखतेहीं
रहे ॥ पीछे सो साधुरामगुरुकी पादुकाका पूजन
वी करतेथे औ प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्तमें स्नानादिक
क्रिया तथा संपूर्णगीतापाठ औ अनुक्षण राम-
नामका भजन करतेथे औ रामयण भागवत
वेदांतके प्रकरणग्रन्थोंकी कथा करतेथे ॥

५० ॥परिहृतश्रीपीताचरजीका जीवन चरित्र [विचार

पंडितजीनें कितनेककाल गढ़सीनाग्रामके^१
स्वसत्तापति देवचन्द्र नामक ज्योतिर्विद्के पास
मुहूर्त ज्योतिष आदिकका कछुक अभ्यास किया
था । तिस प्रसंगमें तदासें सन्निरुष्ट एकप्रति
ष्ठित गिरेश्वर नामक महादेवका चित्रबनचित्रै
प्राचीन धाम है तदा पूजनकू गयेथे औ थावण
मासमें बहुतदेशभरके विद्वान्ब्राह्मणपूजननिमित्त
आतहें तिन्होंसें अनेकशास्त्र प्रसंग औ वार्ता
लाए कियाथा ॥

तदनन्तर भजलग्राममें एक व्याकरणशादिक
त्रियाचित्रै कुशल लब्धियजय नामक यतिवर थे
तिनके पास पिताकी आज्ञासें व्याकरणभ्यास
करतेरहे ॥ कदाचित्त तदा देशांतरपर्यटनशील
परमविरक्त क्षमा दया धैर्य मौन तिनिका आदिक

चन्द्रोदय] पण्डित श्रीतीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥ ५३ ॥
 अनेकसद्गुणरत्नाकर पद्मविजयजी नामक यति-
 चरिष्ठ आयेथे। तिनके पास व्याकरणाभ्यासनिमित्त
 जातेआते रहे ॥ इनोंकी सुशीलतादिकशुभगुण
 देखिके तिनोंकी वी परमप्रीति भयोथी ॥ परस्पर
 चित्त बहुत मिलता रहा ॥ फेर कितनेक कालपर्यंत
 वह पिताकी आशासँ तिनके साथि विचरतेरहे
 औ व्याकरणाभ्यास करतेरहे ॥ अंतमें कितनेक
 काल भुजनगरमें तिनके साथि रहतेथे ॥ जितना
 कछु प्रतिदिन पाठ लेतेथे तितना कंठहुं करलेते-
 थे ॥ बहुतसा व्याकरणाभ्यास तहां पूर्ण भया ॥
 फेर तिस महात्माकी देशांतरविषै तीर्थयात्राके
 निमित्त जिगमिषा भई । तिनके साथिहीं पिताकी
 आशासँ पण्डितजी निर्गमन करतेभये । परन्तु
 माताके अतिस्नेहसँ दृढद्वारामध्यसँ बुलायेगये ॥

५४ ॥ पण्डितश्रीपीतांबरजीकां जीवनचरित्र विचार

॥ मध्ययमोवृत्तांतः ॥

फेर साधु श्री रामचरणदासजीके साथि रामा-
पणादिग्रन्थनका विचार करतेरहे ॥ कदाचिन्
काकतालीयन्यायकरि कोइक ब्रह्मनिष्ठपरमहंस
स्वगृहम आयके रहेथे तिनोनें वेदांके संस्कारका
उत्तीवन किया । फेर पिताजीके साथिनौकाद्वारा
श्रीमुम्बईनगरविर्ने गमन किया ॥ तदा नासिक-
नगरनिवासी मसरोपगत श्रीनारायणशास्त्रीके
विद्यार्थी श्रीसुर्यरामशास्त्रीने पाम काव्यकोश
व्याकरण भागवतादि शास्त्रनका अध्ययनकरिके
संस्कृतवाणीविषय व्युत्पन्न मतिवाले मयं ॥ फेर
वेदातार्थकी जिज्ञासाकरिके स्वामीश्री रामगिरीजीके
पाम पञ्चदर्शाका अभ्यास कग्ने रहे ॥

चंद्रोदय]॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥५५

तावत् पूर्णपुरायपुञ्जपरिपाकके वशतैँ सद्गुरु श्रीवापुमहाराजजी अकस्मात् मुम्बईमें पधारे। तिनोंके पास विधिपूर्वक गमनकरिके पञ्चदशी आदिकग्रन्थनका अध्ययन तथा श्रवण करनेहुये श्रीगुरुके साथि नासिकक्षेत्रमें जायआयके नौकाद्वारा श्रीकच्छपदेशविपै आयके स्वकीयश्री-मज्जलग्राममें पधारे ॥ तहां स्वतन्त्र वेदांतग्रन्थनका अध्ययन तथा अनेक मुमुक्षुनके साथि अध्ययन औ श्रवण करतेरहे ॥ तव श्रीसद्गुरु जहां जहां सत्सङ्गीजनोंके ग्रामोंमें विचरतेथे । तहां तहां सहचारी होयके अध्ययन औ श्रवण करतेरहे ॥ दोवर्षपर्यय श्रीगुरु कच्छदेशमें विचरिके फेर जब वटपत्तन (वडोद्वरानगर) के प्रति पधारे तव श्रीभुजनगरपर्यन्त बहुतसत्सङ्गीजनसहित श्रीभुरुके साथि आयके फेर तिनोंकी आज्ञाके अनुसार मज्जलग्राममें आवतेभये ॥

चंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ५७

सत्संगीजनोंकी प्रार्थनासें एकोनविंशति (१६)
मासपर्यंत श्रीमुंघईमें निवास करतेभये ॥ तब
श्रीवृत्तिप्रभाकर तथा श्रीविचारसागर इन दोग्रं-
थनका सम्यक्श्रवण होतारहा श्री अहर्निश तिन
महात्माके पास एकांतवासविषं रहिके तत्कृपा-
पूर्वक अनेकवेदांतके पदार्थनका शंकासमाधान-
कि निर्णय करतेरहे श्री तिन महात्माके
खसैं सुनिके अरु देखिके अनेककल्याणकारी
दृग्गुणोंका स्वचित्तमें आधान करतेभये॥ बीचमें
अचकाश देखिके परिंडतश्रीजयकृष्णजीमहात्मा-
के पास श्रीआत्मपुराणआदिक ग्रंथनका वी
श्रवण करतेरहे ॥ श्री भट्टाचार्यश्रीभिकुशास्त्रीके
विद्यार्थी श्रीभीमाचार्यशर्मनैयायिकके पास
न्यायग्रन्थनका अभ्यास वी करतेरहे श्री तहां
आयके प्राप्त भये निर्मलसाधु श्रीगंगासंगजीके
पास वेदांतके प्रकरण देखतेरहे ॥

३८ ॥ पंडितश्रावणारनाका नीजनचरित्रा ॥ विचार

किन्ती तिन स्वामाराधदानदजीन पंडितनकी
सभा कग्याइथी तहा पंडितजीने वेदातयिपयक
पूवपक्ष कियाथा ताका नमाधान आशुक्रुधि श्री
गडलालोपनामक गोवर्जनशर्जानै कियाथा श्री
अष्टगुडि दखिके प्रसन्न होयके कहा कि -हमारे
वहा कहु अध्ययन करनेहु आतेरहो ॥ तउ
तिनारं पास शररडपनिपद्भाप्यका अध्ययन
करनेरह ॥

फर मध्यत् १६२६ के वर्षमें कर्मंदी मडली
सहित स्वामाशिलाकरामजाके साथि श्री-
प्रयागराजक कक्षपर जायके फरपयाम किया तहा
पतिडुनश्रीकांगामचीक विद्यार्थी प्रयागवासी
महापराम सनापरुष खड्गधारा महा माधवप्र
विमानवा तउ तिनके विषय उत्तमपरमहस

चंद्रोदय]॥पंडित श्रीपीचांवरजीका जोवनचरित्र॥५६

श्रीकाशीवाले अमरदासजी । कनखलवाले अमर-
दासजी । बडे आत्मस्वरूहजी । महापंडित ज्योतिः-
स्वरूपजी । तथा मंडलेश्वर आदित्यगिरिजी ।
आदित्यपुरीजी । फणीन्द्रयति । ब्रह्मानंदजी ।
महंतहरिप्रसादजी । सुमेरगिरिजी । वालदेवा-
नंदजीआदिक अनेकमहात्माओंका समागम
भया ॥ तहां किसी प्रसंगसँ महात्मा काशीवाले
अमरदासजीके पास पंडितजीनँ प्रश्न कियाः—

१ (१) प्रश्नः— किं विदुषो लक्षणं ?

(२) उत्तरः—रागादिदोषराहित्यम् ॥

(१) प्रश्नः—रागाद्यभावे संति इष्टनिष्ठयोः
प्रवृत्तिनिवृत्त्यनुपपत्तेर्विदुषः प्रारब्धः-
भोगो न स्यात् ?

(२) उत्तरः—अद्वैतरागादित्वं विदुषो
लक्षणम् ॥

३० ॥ परिहितभीषीनां परजीका जीवनचरित्राः [विचार-

३ (१) प्रश्न — अदृढरागादे किं लक्षणम् ?

(२) उत्तर — नैरतयेण रागाद्यभावत्वं
(विचारनिघर्त्यरागादित्य) अदृढ-
रागादित्य ॥

४ (१) प्रश्न — सुषुप्तौ सर्वप्राणिनां रागा-
द्यभावेन नैरतयेण रागाद्यभावात्
अज्ञेयपि नञ्शलक्षणस्यातिव्याप्ति-
स स्यति ?

(२) उत्तर — यद्यपि सुषुप्तौ अत करणा-
भावात्त्वेवमस्तु तथापि जाग्रदा-
द्वयत करणस्यधे सति नैरतयेण
रागाद्यभावत्त्वमदृढरागादित्य इति तु
नानिव्याप्ति ॥

५ (१) प्रश्न — सुषुप्तौ संस्काररूपेणान्तरण-
सद्भावेनात करणस्यधसत्त्वाद्नलद-
क्षणस्याज्ञेयतिव्याप्ति ? ॥

दीदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ६१

(२) उत्तरः—स्थूलांतःकरणसंबंधे सति इति स्थूलपदस्य निवेशे कृते नातिव्याप्तिः ॥

३ (१) प्रश्नः—कृष्यादिकर्मणि संलग्नस्याज्ञरयापि स्थूलांतःकरणसंबंधे सत्यपि रागाद्यभावाद्दुक्तलक्षणस्याज्ञेत्वतिव्याप्तिः ?

(२) उत्तरः—स्त्रीशत्रुप्रभृत्यनुकूलप्रतिकूलपदार्थसान्निध्ये स्थूलांतःकरणसंबंधे च सति नैरंतर्येण रागाद्यभावत्वं अदृढरागादित्यं तदेव विदुषो लक्षणम् ॥ .

७ (१) प्रश्नः—पृष्ठसप्तमभूम्योस्तु सर्वथा रागाद्यभावेनादृढरागाद्यभावाद्दुक्तलक्षणस्य तत्राव्याप्तिः ॥

(२) उत्तरः—दृढरागादिराहित्यं विदुषां लक्षणं सिद्धमिति वाच्यम् ॥

इसरीतिसै प्रयागमें प्रश्नोत्तर भयाथा ॥

६० ॥पंडितश्रीपोतांवरजीका जीवनचरित्र॥[विचार

घरपरोजकी तीर्थयात्राके मिषकरि आगेसँ
निर्गम श्री तहाई प्राप्त भये श्रीगुरुका दर्शन
करिके तिनोंकी आशासँ श्रीकाशीपुरीमें पधारे ।
तहा गाँघाटपर स्थित श्रपूर्य परमोपरत स्त्रीदर्श-
नादिरहित एकातवामी समाहित प्राकृतालाप-
रहित किंचित्ममृत्नालापी धीरामनिरजनोप-
नामक पद्वाक्यप्रमाणश स्वामीश्रीमहाद्वाध्रम-
जाक पास जानग्रान रहे ॥ तिनोंके पासजो कुछ
प्रश्नात्तर भया सा पंडितजीरत प्रश्नोत्तरकहन
नामक ग्रन्थमें प्रसिद्ध है ॥

तहा दर्शनस्पर्शन करिके श्रीगणेशभाऊकरि
आय तत्र श्रीकाशीराजक मन्त्रीनै मिलनकी इच्छा
प्रज्ञापन कर श्री । अनत्रराशन मिलाप न भया ।
केर तहासँ गानु तमधुगाश्चादिक प्रजमडलकी
गात्रा करीक पुन मुघई पधार । तहा पुन श्री-
गुरुका कडुकरिन समागम भया ॥

चन्द्रोदय] ॥पंडितश्रोपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ६३

फेर तदाज्ञापूर्वक कच्छदेशमें आयके खानुज-
लालजीका विवाह किया ॥ पीछे रामाबाई
नामक स्वकन्याका जन्म भयाहीथा । तदनंतर
गार्हस्थ्यसुखभोगविषै उदासीन हुये पाश्चि-
वर्षपर्यंत कर्णपुरनामक ग्राममें ग्रामाधीशोंके गृहमें
पूज्य होयके स्थित एकांतभजनशीलताआदिक
अनेकसद्गुणालंकृत देशप्रतिष्ठित महात्मासाधु
श्रीमान् ईश्वरदासजीकूं श्रीवृत्तिप्रभाकररूप भाषा-
ग्रंथ औ श्रीपंचदशीआदिक संस्कृतग्रन्थनका
अध्ययन करतेहुये रहतेथे ॥ वे महात्मा पंडित-
जीविषै देहांतपर्यंत कृतघ्नतानाशक गुरुबुद्धि
धारतेथे ॥ ताके मध्य कोटडी महादेवपुरीविषै
स्थित श्रीमान् अर्जुनश्रेष्ठ नामक महात्माकूं
मिलने गयेथे । तहां तिनोंकी इच्छासँ सार्धद्वि-
मासपर्यंत रहिके सानंदगिरिथ्रीगीताभाष्यका
परस्पर विचार करते भये ॥

फेर तहां कच्छदेशमें द्वितीयवार श्रीगुरुका
 आगमन भया । तब तिनोंके साथि विचरतेहुये
 श्रवणाध्ययन करतेरहे । नव तिनोंके साथिहीं
 श बोझार (पेढ) श्री द्वारिकाक्षेत्रमें जायके
 स्वदेशमें आये ॥ फेर गुरुआज्ञापूर्वक मुंबई पधारे
 तब उत्तमसस्कारवान् उत्तमाधिकारी रा. रा.
 श्रेष्ठशरीफभाई सालेमहमद तथा परमविद्वान्
 मुसुहन् उत्तमाधिकारी रा. रा. मनःसुखरामो
 मूर्यरामभाई त्रिपाठी इन दोश्रधिकारिनकूं
 श्रवणाध्ययन करावनेरहे ॥ तब प्रसंगप्राप्त तैलंग-
 देशीय पदवाक्यप्रमाणज्ञ याज्ञिकमुब्रह्मण्यमर्षोद्द-
 र्माशास्त्रीजी तहां विराजेथे तिनोंके पास
 शरीरभाष्यसहित ब्रह्मसूत्रनका शांतिपाठपूर्वक
 श्रवण करनेरहे । तब श्रीगामीखरूपानदर्जी
 तथाध्यायो ये ॥

चन्द्रोदय]॥परिडम्बश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ६५

अनंतर शरीफभाईआदिककी प्रार्थनासँ श्री-
पंचदशीकी भाषाटीका तथा श्रीविचारसागरके
मंगलके पंचदोहाकी टीकापूर्वक टिप्पणिका तथा
श्रीसुन्दरविलासके विशतित्तमें विपर्ययनामक
अंगकी टीकासहित टिप्पणिका तथा श्रीविचार-
चन्द्रोदय । वृत्तिरत्नावलि । सटीक बालबोध ।
संस्कृत श्रुतिपङ्क्ति संग्रह । श्रीवेदस्तुतिकी
टीका । स्वामीश्रीत्रिलोकरामजीकृत मनोहर-
मालाकी टिप्पणिकासहित सर्वात्मभावप्रदीप
आदिकग्रंथनकूँ रचतेभये ॥ उक्त सर्व ग्रंथ छपेहैं
श्री श्रीवेदांतकोष । बोधरत्नाकर । प्रमादमुग्दरा
प्रश्नोत्तरकदंब । पट्टदर्शनसारवलि । मोहजि-
त्कथा । सदाचारदर्पण । ज्ञानागस्ति । भूमिभाग्यो-
दय रूपकादर्श श्री संशयसुदर्शनआदिकग्रन्थ
किंचित् अपूर्ण होनैतैं छपे नहीं हैं । पूर्ण होयके
छपेंगे ।

६६ ॥ पण्डित श्रीपीताम्बरजी का जीवनचरित्र ॥ [विचार

संवत् १६३० की शालमें आप बडोदामें पधारेथे । सार्धमासपर्यंत रहे ॥ उदास मुर्ख पधारे पीछे श्रीगुरु परब्रह्मसमरसभावकू प्राप्त भये ॥ जय पण्डितजी महोत्सवपर पधारेथे श्री संवत् १६३३ की शालमें भावनगरके महाराजा तरुणसिंहजी तथा महामंत्री गौरीशंकर उदय शंकर तथा उपमंत्री श्यामलदासभाई परमानंददास मुर्खविपै मिले श्री तिसीवर्षमें स्वयंसे भ्राता मूलराज अरु धर्मपत्नीका देहात भया था जूनागढ़के महामंत्री ब्रह्मनिष्ठ श्रीगोकलजी भाला मुर्खगन च न वागमें मिले । तदा प्रथम अज्ञात हुये पीछे फिसा स्वामीके वाक्यसै चिदित भये । यार्ते घातरागताकरि उपमित भये ॥

द्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ६७

त्रिपाठी रा. रा. मनःसुखराम सूर्यराम
शर्माकी श्रीकच्छमहाराजाओंकी आझापूरवक
रात्रोवहादुर दिवानवहादुर महामन्त्री श्री-
मणिभाई यशभाईद्वारा पूर्णसहायताप्रदानपूर्वक
प्रार्थनासँ तथा श्रीभावनगरके महाराज तथा
श्रीवढवाणके महाराज तथा श्रेष्ठ हरमुखराय
खेतसीदास तथा श्रेष्ठ प्रयागजी मूलजीआदिक
सद्गृहस्थनकी सहायताप्रदानपूर्वक इच्छासँ
ईशा केन कठवल्ली प्रश्न मुंडक मांडूक्य तैत्तिरीय
श्रौ ऐतरेय इन अष्टउपनिषद्नका सटीक श्री-
शंकरभाष्यके व्याख्यानसहित व्याख्यानकरिके
छपवाया है ॥

६= ॥पंडितधीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥[विचार-

तदनंतर सवत् १६२६ की शालमें भावनगर
जायक तथा राज्यादिकसं यो यमत्कारम् पायके
धाप्रयागक कु भपर द्वितीयवार प्यारे ॥ वहाँ
महात्मा स्वामी धात्रिलोकरामजी तथा धीमद
मरदासजी तथा खेरपुरके महत जन्मते वाकिस
द्विवान् साधुश्रीगुरुपतिजी ताके शिष्य सगति
दासजी तथा माधरेलाके महत धाहरिप्रसादजी
तथा धात्रिलोकरामजीके शिष्य पंडितअनता,
नदजी तथा पंडित केशवानन्दजी तथा पंडित
भोलारामजी तथा पंडितस्वरूपदासजी तथा
परमविरत महलेश्वर साधुश्रीब्रह्मानन्दजी तथा
साधुश्रीदयालदासजी तथा धीमपारामजी
आदिक अघधूनमडल इत्यादि अनेक महात्मार्थों
का दर्शनसमायण किया ॥

चंद्रोदय]॥ पंडित श्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्राः ६६

फेर श्रीकाशीजीमें आये ॥ तहां स्वामी त्रिलोकरामजीकी मंडलीके साथिही पंचकोशीकी यात्रा करी औ ब्रह्मनिष्ठ महात्मा पंडित अमरदासजी तथा श्रीद्वितीयतुलसीदासजीके शिष्य चरणानदीपग त्रिराजित साधुश्रीलालदास जीका दर्शन भाषण किया । तथा अवधूत दंडीस्वामी श्रीभास्करानंदजीका तथा दंडीस्वामी पंडित श्रीविशुद्धानन्दजीका तथा स्वामी श्रीनारकाश्रमजीका तथा द्रुवेश्वरमठाधीश स्वामी धीरामगिरिजीका तथा तिनके शिष्य योगिराज श्रीवद्धानन्दजीका तथा त्रिशून्यतिके मठमें स्थित स्वामी श्रीवीरगिरिजीका औ भरूचवासी स्वामी श्रीअद्वैतानन्दजी आदिकका दर्शन संभाषण किया ॥ पीछे स्वामी श्रीत्रिलोकरामजीकी आज्ञासँ श्रीअयोध्याके प्रति पधारे ।

७७ ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र । [विचार-

सर्वदा स्वकन्या रामाबाई तथा भ्रातृपुत्री लीला^१
बाई साथ रही ॥ तहां भगवन्मंदिरोंके दर्शन-
पूर्वक सिद्ध श्रीरघुनाथदासजी तथा सिद्ध
श्रीमाधवदासजीके दर्शन तथा सरयूस्नान
करिके धीनेमिपारण्यविषै पर्यटन करिके ब्रज-
मंडलमें विचरिके श्रीपुष्करराज तथा सिद्धपुर
के सन्निध सरस्वतीका स्नानादि करिके श्री-
डाकोरनाथका तथा घडोदानगरगत क्षानमठमें
श्रीरामगुरुकी तथा श्रीमदगुरुव्यापुसरस्वतीकी।
समाधिके तथा। चरणपादुकाके दर्शन पूर्वकमंत्रीवर
श्रीमणिभाईका यशभाई मिलाप करिके फेर
मुम्बईम पधारे ॥ तहांसे श्रीकच्छुदेशविषै आये ।
तहा मणिभाई मंत्रीसहित श्रीकच्छुमहाराश्रीका
मिलाप भया ॥

फेर सयत् १६४० की शालमें महाराजाधिरां-
जश्री ५ मत्तदशुआश्रीशकृष्णप्रतापसाहिवहादुर-

चन्द्रोदय]परिडतश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र।७१

शर्माका प्रेमपत्र आया सो बांचिके बडा हर्ष भया।
फेर श्रीहथुवासै काश्मीरी पंडित जनार्दनजीकूं
दर्शनके निमित्त मज्जलग्राममें भेजा था।
अनंतर बहुत मुमुक्षुजनोंकी जिज्ञासापूर्वक
प्रार्थनासै यजुर्वेदीय श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्के
हिन्दीभाषामें व्याख्यानके लिखानेका स्वपुत्रके
हस्तसै ही प्रारम्भ करिके पाँच वर्षोंमें ताकी
समाप्ति करी ॥ बीचमें श्रीकच्छमहाराजकी
आज्ञासै श्रीसिंहशीशागढग्राममें मकान बनायके
निवास किया। अर्वांतरकालमें ही श्रीहथुआ-
महाराजकी तीव्र जिज्ञासासै आकर्षित हुए
स्वानुज लालजीसहित श्रीकाशीपुरीके प्रति
जिगमिषा करिके मुम्बईमें आये ॥ तहां तीन
दिनके अनंतर महाराजके भेजे परिडत जना-
ईनजी सामने लेनेकूं आये ॥ श्रीपुरीमें
पहुंचे तब श्रीहथुआमहाराज सन्मुख पधारे औ

७२ ॥ पंडितश्रीपीतावरजीका जीवनचरित्र ॥ [विचार-

दडवत प्रणाम किया श्री दुर्गाघाटपर महाराजा
भीडुमगवोके धमीचैर्म थोष्ठसत्कारपूर्वक निवास
करवाया था । तदा प्रतिदिवस आप मुग्धचर्चा-
ध्वण्यर्थ पधारते थे । फेर पंडितजीके साथिही
स्वसद्गुरु दडोस्वामी धीमाघवाधमजीकी
सन्निधिमें चैतन्यमठविपै राजा पधारते थे ।
तदा श्री परमानंदकारी प्रश्नोत्तररूप घवनवि-
लास होता रहा । तिस प्रसंगमें अनेक महा
ग्याशास्त्र दर्शनार्थ महाराजके सहचारी दा-
सगोंद महिन प्रतिदिन पंडितजी पधारते थे ॥
फेर महाराजकी आज्ञासे मुम्बईपर्यंत पंडित
जनादनजीरूप सार्थवाहकमहिन पधारते । मध्यमें
नार दस्तर्ष निरदिन अक्षय् मादानु हरि
भागत न पर्सा मभला शिष्या हरियाई ब्राह्मणी
ए दशन इनअथ मभरा घामन ७ दिन घमिक
मृषइहाग पर व्याकन्वृइगर्म स्वानुजगदिस
आयक उन व्यहयान समान किया ॥

चंद्रोदय] ॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥ ७३

कछुक काल स्वदेशगत सत्संगी जनोंके ग्रामोंमें
विचरते रहे। फेर संवत् १६४७ की शालमें
श्रीहरिद्वारके कुंभपर गमनअर्थसाधु श्रीईश्वर-
दासजीके शिष्य प्रेमदास सहित श्रीकराचीनगरमें
पधारे ॥ तहां पंडित स्याणुरामके तनुज पंडित
श्रीजयकृष्णजीआदिक अनेक सत्संगी जन वाहनोंसे
सन्मुख आयके लेगये ॥ तहां दशदिन कथा-थवण
भया तव हैदराबादके केइक सत्संगी लेनेकूं
आये तिसकरिके तहां पधारे। तव पंडित जय-
कृष्णजी सार्थिही रहे ॥ फेर कोटडीमें आयके
ताकी सन्निधिमें स्थित गोधुमलके ठंडेमें पंडित
स्याणुरामजीके गृहमें एक रात्रिरहे ॥सवेरमें सिध
दफतरदारसाहेबका अवलकारकुन मिस्टर तनुमल
चोइथराम, विष्णुराम, केवलराम औ छत्तूमल ये
गृहस्थ अश्वशकटिकासै लेनेकूं आये तव नदा-
रुह हीयके शहर हैदराबादकी शोभा देखते
हुए नगरसै बाहिर छत्तूमलके शिवालयमें चार

७४। पण्डितश्रीपीतामहजीका जीवनचरित्र । [विचार-

दिवस निवास किया। तदा अहर्निश ईश्वरभजन
परापूर्ण मौनी दुग्धाधारी एक अपूर्व ब्रह्मचारीका
दर्शन भया श्री नगरम् एक परमोपगत ज्ञानादि
गुणसंपन्न कलानन्दनामक भक्तका दर्शन भया
श्री वेङ्क उत्तम भजनयानोंके स्थान देखे ।
स्वनिवासस्थानमें सत्सङ्गीतन प्रतिदिन श्रवण
श्री आन थ अह दर्शननिमित्त नरनारीका प्रवाद
प्रवर्तित भया था वहास चलनके दिनमें पण्डित
मुक्तिरामनामक मतने स्वस्थानमें आग्रहपूर्वक
बुल कर पूजा कर कार किया ॥ तदासँलेअनिवात
गन्ध ही रेलकर छोड़कर आये । फेर तदासँ
शिवर महारम आयक एक रात्रि रहे ॥ साधवेला
नामक मतनक स्थानका दर्शन किया श्री राडो
धामम जायक उदासीनपरमहन्स पण्डित कशवा
नरा जा अमूनकद सजो महाभाके शिष्य थे
उनक मिल श्री परमार्या वसणुभक्तू भी मिले ।

घंटोदय]॥पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र ॥७५

फेर वहांसँ मुलतान तथा लाहोरके मार्गसँ
श्रमृतसरमें आये । तहां शेठ ताराचंद्र चेलारामकी
दुकानपर एक रात्रिरहे॥वहां महाराजा श्रीकृष्ण-
प्रतापसाहिबहादुर शर्माका प्रेमपत्रक आयाथा सो
वांचिकेप्रसन्न भये । प्रातःकालमें श्रीगुरुनानकजी
के दरवारका सरोवरके मध्य दर्शन भया ॥ फेर
वहांसँ श्रीहरिद्वारपुरीमें पधारे । तहां नीलधारा-
पर महात्मा श्रीत्रिलोकीरामजीकी मंडलीका
निवास था । वहां वसति करी॥ब्रह्मकुण्डकास्नान
महजनोंका दर्शन संभाषण भया ॥ फेर वहांसँ
उक्त मंडलीके साथि ही हृषीकेश पधारे ॥ वहां
परोपकारक कमलीवाले महात्मा श्रीविशुद्धानंदजी
मिले औ गंगातीरनिवासी तपस्वीजी श्रीगुरुमुख
दासजी मयारामजी अवधूतआदिक अनेक उत्तम
संतोंका दर्शन भया॥वहांसँ लौटिके श्रीअयोध्या
पुरीमें आये ॥ वहांसँ रेलमें बैठिके श्रीदधुवा-

७६ ॥पंडितभीषोताथरजीक' जीवनचरित्र॥[विचार

नगरमें जानै अर्थ अलीगजमें आये । तहा अश्व-
शरुटिकासहित महाराजका पंडित सामने लेनेवृ
आया था सो थोडथुवानगरमें लेगया ॥ उसी
दिनमें महाराजकी मुलाकात भई ॥ प्रतिदिन महा-
राजका स्वमागम होताहृद्दार्थीचर्म श्रीसालिग्रामी
नागवणा मंडफानामक महानदीपर स्वारीआदिउ
न्नामप्राप्तिके नाम करिआये श्री स्ववापुर
वाभिनी देवाका वशन वा किया ॥ फेर यहासे
महाराजकी आगामै भयानी गये । तहा थाइ

करिके गगतारुर्ति विगाघाटपर महाराजके स्थान
में प गार ॥ उसा दिनमें महाराजाधिगज
आरण्यप्रतापसाहिबहादुर शर्मा या तहा
प गारे अनशननाया नटा भई श्री तीन दिन
महाराजका स्वमागम होताहृहा । फेर यहासे
धानापुर आवकधुन्नशरुटिकामें महाराजकेसाथि
ही प रफ आयागलसीमें आये । तहा विमान

चन्द्रोदय]॥पण्डितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र॥७७

मोचनपर स्थित हथुआधीशके वगीचेमें तीन दिन
निवास भया ॥ गंगास्नान औ महात्माश्रीका
दर्शन सम्भाषण भया ॥

फेर वहांसे महाराजाकी तरफसे मिलित भेटऔ
पोशाक स्वीकार करिके तदाज्ञापूर्वक श्रीप्रयाग
चित्रकूट पुंडरीकपूर औ पुन्यनगरके मार्गसे
श्रीमुम्बईमें आयके शेट श्रीयादवजी जयरामके
स्थानमें चातुर्मास्यपर्यंत बसिके ब्रह्मसत्रकीसामग्री
सम्पादन करिके रेलके रस्ते स्वदेशविषे आयके
संवत् १९४८ के आश्विन शुद्ध १० से आरंभिके
भगवन्महोत्सव नामक ब्रह्मलत्र किया । तहां
केइके अपूर्व संन्यासीसाधु ब्राह्मण औ सत्समा-
गमीजनका अपूर्व समाज एकत्र भया था ॥
संभाषणादि अद्भुत आल्हाद भया था । सो
समाप्त करिके श्रीमुम्बईमें आयके भापाटीका
युक्त श्रीवृहदारण्यक तथा छांदोग्य ये दो उप-
निषद् सार्ध द्विचर्पमें छपवाये ॥

७८ ॥ पण्डितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र विचार

फेर धीप्रयागराजके कु भवर जायके स्वामिधी
त्रिलोकरामजीकी गगापार स्थित मंडलीमें कल्प-
वास किया ॥ वहा हथुगधोशके मनुष्य आये थे
तिनके साथ राजनं परसहित रौप्यशतक भैज्या
था सो स्वामोत्रीके समदा तिनोंकी आशासं
गगातीरस्थ पण्डितनके अर्थ यथाशेग्य विभक्त
किया गया ॥

फेर उद्दामं धे मंडलोसहित धोकाशीपुरीमें
पधारे स्वामीजी दुर्गाघाटपररहे।पण्डितजी पिशा-
चमोचनपर स्थित महा राजके धमीचेमें २५ दिनरहे।
प्रतिदिन महाराजना समागत होनारहा चारयजे
घाट नियम अश्वशरटिकामें महाराजाके सहचारियों,
करिबसहित भिन्न भिन्न स्थानमें महात्माओंके दर्शनकू

चन्द्रोदय]॥परिडतश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र७६

जाते थे ॥ स्वामी श्रीमाधवाश्रमजी । स्वामी
श्रीविशुद्धानंदजी । स्वामी श्रीभास्करानन्दजी ।
स्वामी श्री पूर्णानन्दजी । महात्मा श्रीअमरदास-
जी । पंडित श्रीरामदत्तजी । महान्त श्रीपवारिजी ।
साधु श्रीविक्रमदासजी आदिक अनेक उपरति-
शील महात्माओं का दर्शन भाषण भया ॥ महा
राजकी यज्ञशालाका भी इष्टिसहित दर्शन भया ॥
फेर चलनैके पहिले दिन सायंकालमें परिडत
शिवकुमारजी । राखालदासन्यायरत्नभट्टाचार्य ।
कैलासचन्द्रभट्टाचार्य आदिक उत्तमपरिडतनकी
सभा करवाईथा । तिन विद्वद्वरोंका दर्शन संभा-
षण भया ॥ परिडतनके विदा हुए पीछे स्वकृत
आशीर्वचनरूप श्लोक महाराजके समक्ष अर्थ-
सहित उच्चारया ॥

पञ्चापडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र [विचार-

॥ श्लोकः ॥

श्रीमत्कृष्णप्रनापतुर्यनृपनि-
लोकेऽधुना दुर्लभः
श्रीमद्रामसमांऽत्यसौ शुभगुणैः
सद्धर्मसत्सेतुकृत् ।
स्वाज्ञानैरुक्कुरावणस्य कहरां
मुफयेकलकासुजित्
शांतश्राजनकारमजापिनसहितो
भूयात्स्वधामैकराट् ॥ १ ॥

सा चतुर्धा अर्यमहित मुनिके पडितमभासहित
नृपति परमप्रमद्य भय ॥ उत्थान करिके अभि
षदत क्रिया आनन्दमे आलिंगित दोषके मिले
भट श्री योगेश स्वर्णिके विशा करी । मात -
पालमे प्रशसे प्रयाण करिके पडितजी धीमुर्वर्मि
१३४ पीतु धीकल्पदशमे पथारे ॥ फेर सयत्

चंद्रोदय] पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र। ८१

१९५१ के वर्षमें प्रभासाद्रियात्राकी जिगमिषा करिके गृहसँ निर्गत हुए अगनवोट (धूमनौका)सँ वेरावलपधारे। तहाराववहादुर जूनागढ़के दीवान-जीसाहेव श्रीहरिदास विहारीदास जालीवोटमें विठायके चंद्रपर लेगये ॥ वहां शेठ शरीफ साले-महंमदादि सदगृहस्थों का मिलाप भया ॥ तिनकी भावनासँ २५ रोज तक श्रीजूनागढ़सरकारके मकानमें निवास भया ॥ मध्यमें प्रभास औ प्राची-नामक तीर्थकी यात्रा करि आये ॥ फेर धूम्र-शकटिकाद्वारा श्रीजूनागढ़ पधारे । तहां श्री-दिवानसाहेवकी आज्ञासँ शकटिकासँ छापेखाने का मैनेजर महादेवभाई सामने आयके लेगया ॥ औ नायवदिवानसाहेव श्रीपुरुपोत्तमरायके नवीन गृहमें निवास करवाया ॥ तहां एकमास-भर रहे ॥ वहां श्रीनरसिंहमेहेता, दामोदरकुंड, मुचुकुंदगुफा और शहरके सुंदर स्थानोंका

८० पंडितश्रीपीतांबरजीका जीवनचरित्र [विचार

प्रदर्शन भया और रैयताचल (गिरिनारपर्वत
की यात्रा भई ॥ एकत्र भई सभाके मध्य थी
दिधानसाहेबके गृहमें पंडितजीका वेदांतविषयक
सभापण भया॥फेर घटाँसैं विदा होयके घेरावल
आये ॥ तहां घेवटवारसाहेब और व्यापार-
धिकारी शेठ शरोक भाई रेलवर ग्यामने आयके
निवासस्थानमें लेगये ॥

फिर वहांमें धूमनाकाद्वारा श्रीमु'पेईमें आग-
मन भया । तहां महाराज श्रीजयकृष्णजी तथा
साधु श्रीसगतिदासजी और परमसुहृन् श्रीमनः
सुम्बराम सूर्यरामजी आदिक सज्जनोका समा-
गम भया । और स्वकीय दो पीधनके मांजी
बंधनके प्रसगमें चारि यज्ञकी चिकीर्षाके लिए
गर्भ्यामयो सगाशनरुग्णके स्थडेगुमें पधारे ॥

संवत् १९५२ के वैशाख कृष्णद्वितीया द्वाद-
 शीपर्यंत श्रीगायत्रीपुरश्चरण । श्रीमहारुद्रयज्ञ ।
 विष्णुयज्ञ और शतचंडी ये चारि यज्ञ किये ॥
 तहां स्वामी श्रीआत्मानंदजी और केइक संत
 अरु सत्समागमियोंका वी आगमन भया था ॥
 अंतर् सवत् १९५४ सालसैं आरंभकरिके
 गढ़सीसालें सार्द्धैककोशपर पूर्वदिशामें प्राचीन
 विल्ववनविपै प्राचीनकालमें आविभूत देशप्रति-
 ष्ठित स्वयंभू श्रीविल्वेश्वर नामक महादेवका
 मंदिर स्वल्प होनेतें श्रावणमासमें बहुत पूजक
 ब्राह्मणोंके समावेशके अयोग्य जानिके और
 तहां जन्माष्टमीके दिन होते मेलामें विष्णुदर्शन
 का अलाभ दर्शनार्थीजनोंकूं मार्गका
 कष्ट जानिके कच्छुदेशमें पर्यटन करिके राज्या-
 दिकसैं प्राप्त द्रव्यसैं विस्तीर्ण सुंदर शिवालय
 तथा विष्णुमंदिर तथा वहांसैं गढ़सीसा तोड़ी
 सड़क करावले भये ॥

८४ ॥ परिहर्तव्यीषोतावरजोका जीवनचरित्र ॥

अभी स वत् १९५६ के वर्षमें आप स्वदेशमें ही जीवन्मुक्ति के बिलक्षणअनदश्रय अर्था यास युक्त हुए स्थित भये हैं ॥

उक्तप्रकारके सत्कर्मोंके करनेकी इच्छा इनकू सर्वदा रहती है ॥ ये महात्मा राग, द्वेष, मत्सर, ईर्ष्या, विषमता, निंदा, असूया-आदिक दुर्गुणोंसे रहित है । श्रीर अमानित्व, अदमित्व, अहिंसा, क्षमा, मौशीत्य, सौजन्य, अहोच, शांति, धैर्य, मोहशोकराहित्य, आस्तिक्य, भक्ति, वैराग्य, ज्ञान अरु उपरति आदिक अनेकसद्गुणोंकरि अलटन है ।

॥ इति ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ नवमः आवृत्तिकी अनुक्रमणिका ॥

कलांकः	विषय	आरंभ-पृष्ठांक.
१	उपोद्घातवर्णन ...	१
२	प्रपंचारीपापवाद ...	२०
३	देह तीनका में द्रष्टा हूं ...	२६
४	मैं पंचकोशातीत हूं ...	६६
५	तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं... ..	११४
६	प्रपंचसिध्यास्त्ववर्णन ...	१३३
७	आत्माके विशेषण ...	१६६
८	सत्चित्तआलंदुका विशेषवर्णन ...	१८८
९	अवाच्यमिद्धांतवर्णन ...	२१३
१०	सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ...	२२३
११	'सत्त्वं' पदार्थैक्यनिरूपण ...	२४६
१२	ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ...	२७३

आरभ-पृष्ठांक.

१३ सप्तज्ञानमूमिकावर्णन	..	२७७
१४ जावन्मुक्तिविदहमुक्तिवर्णन		२८४
१५ वदातप्रमय (पदार्थ) वर्णन		२९०
१६ प्रथमविभाग-श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसमह		२९६
१७ द्वितीयविभाग-वदातपदार्थसज्ञावर्णन अथवा लघुवैदांतकाश	.	३७१

॥ पौडशकला प्रथमविभागः ॥

श्रीशुनिषड्लिंगसंग्रहकी अनुक्रमणिका ।

विषय	पृष्ठांक.
१ उपोद्घातकीर्तनम् ...	२६६
२ ईशावास्योपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३१०
३ केनोपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३१३
४ कठोपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३१६
५ प्रश्नोपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३२२
६ मुंढकोपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३२५
७ माण्डूक्योपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३३०
८ तैत्तिरीयोपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३३२
९ ऐतरेयोपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३३६
१० छान्दोग्योपनिषद्लिंगकीर्तनम् ...	३४१
(६) पठ्ठाध्यायलिंगकीर्तनम् ...	३४१
(७) सप्तमाध्यायलिंगकीर्तनम् ...	३४५
(८) अष्टमाध्यायलिंगकीर्तनम् ...	३४६

	पृष्ठांक.
११ बृहदारण्यकोपनिषद्लिङ्गकीर्तनम् ...	३५२
(१) प्रथमाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३५२
(२) द्वितीयाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३५५
(३) तृतीयाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३६०
(४) चतुर्थाध्यायलिङ्गकीर्तनम् ...	३६४

ॐ

॥ श्रीविचारचन्द्रोदय ॥

वमआवृत्तिकी अकारादिअनुक्रमणिका ।

टि:—टिप्पणांकनकूं सूचन करैहै ॥

अन्य सर्व अंक पृष्ठांकनकूं सूचन करैहैं ॥

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
अ		अव्यय	१८५
अंश		अक्ष, आत्मा	१८५
-कल्पित विशेष	१४०।	अखंडआत्मा	१७८
१४४		अख्यातिख्याति	४०७
-तीन	६१ टि	अजन्माआत्मा	१८२
-विशेष	१३६।१४३	अजरअमर	१८२
-सामान्य	१३६।१४३	अजहतूलक्षण	२५४
अकर्म	३८६	—असंभव	२५७
अकृतोपासन	१६८ टि	अजिह्वत्व	४१६
		—आदि	४१६

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
अज्ञान १७४२३।२४ टि		अध्ययपरंपरामहान ७	१४
२६ टि		—का फल	८
—हा अज्ञान २८ टि		—का स्वरूप	९
—कारणरूप ४०४		—का हेतु	७
—का शक्ति ३७६		—की अवधि	१
—क भेद ४०३		—अद्वैतध्याना १८७	
—ज्ञानविदाशक्तिरूप ४०३		—अधिकारी ३६२	
—मूल ३७६		—दो अनुर्थमूर्तिरूप	
—मायाअतिशयरूप ४०३		ज्ञानके १६८ टि	
—मूल ३७६		—विचारका २६	
—विह्वल आवरणरूप ४०३		अधिदैव २१८।७६ टि	
—व्यष्टि ३७६		—साप ३८६	
—समष्टि ३७६		अधिभूत २११।७७ टि	
—समष्टिव्यष्टिरूप ४०४		—साप ३८६	
अतिशयाप्रकृत्यदोष ३६२		अ-अधिष्ठान १४०।१४३	
अप्यन्तनिकृति २३ टि		११८ टि । १३० टि	
अप्यन्ताभाव ४०३।२९ टि		—रूपविशेष १२४ टि	
अध्वयवेदका		अप्यन्तरूप विशेष १२४ टि	
महावाक्य १२६ टि			

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
अध्यात्म	११६।७५	अनिर्वचनीयख्याति	४०८
--ताप	३७३।३८६	अनुपलब्धिप्रमाण	४२०
अध्यारोप	३५ टि	अनुबंध	३६५
अध्यास	१५८।३७३	अनुमानं प्रमाण	४१६
--की निवृत्ति	२६२।२६४	अनुवाद	३८१
—कूटस्थ औ जीवका		अंडज	३६६
परस्पर	२६४	अन्तःकरण	३८१
—दो	१५६	—की कृपा	२२ टि
—ब्रह्मईश्वरका परस्पर	२६१	—की त्रिपुटी	१२१
—पट्	१५६	—के देवता	११८
अनंत	२२१	—के विषय	११६
—आत्मा	१७७	—च्यारि	११७
अनसूया	४३६	अन्धत्व	४१६
अनात्माके धर्म	१३० टि	अन्धपना इन्द्रियका	६५
अनादिपदार्थ	४१६	अन्धमन्दपटुपना	६५
—पट्-वस्तु	३६ टि	अन्नमयकोश	१०१
—स्वरूपमें	३६ टि	अन्यथाख्याति	४०७
अनावृत	४३५	अन्यतराध्यास	१२५ टि
अनित्य	१७१		

पृष्ठांश-

पृष्ठांश

अन्धो. पाश्याम-	१६३।	अपूर्वता	३०१।४७१
१२४ टि		अपूर्वविधिवाक्य	३२७
अन्धोन्धभाव	४०२।५१टि	अमानापादक आवरण	२०टि
अन्धव	६७ टि। १०६ टि	अमात्र	४०२।४२६
अन्धव्यतिरेक		—व्यतिरेककारका	५१ टि
—घानद र्था हु	खमै२०८	अभिनियोग	४०६
—चित्तवृत्ति	२०५	अभिमानो ईश्वरपदैके	२५६
—रूप युक्ति	१६३	अभ्यास	३०५।४२१
मत् अमनसै	१३४	अमुख्यग्रहकार	३७५
अपर्चाकृत पंचमहाभूत	७६	अमृत	१८५।
अपर्चाकृत पंचमहा-		अमृत्य	८५ टि
भूतनक मनसा तन्त्र	७६	अरिवर्ग	४१७
अवरजानि	३७७	अर्थन	४१८
अपरिग्रहः	४१३	अर्थ	३३८
अपराधब्रह्मज्ञान	६	—महावाक्य तीतका	
—अदृष्ट	७		१५६ टि
—दृष्ट	६	—वाच ३०७।३८१।४७२	
अपवाद	४२ टि	अर्थाभ्यास	३७३
अमानव यु	१०३	—शो	१५६

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
अर्थापत्तिप्रमाण	४२०	अवाच्यसिद्धांत-	
अर्थार्थी	३६६	वर्णन	२१३
अल्पज्ञजीव	२२	आवक्रय	४३५
अवधि	३८२	अविद्यक	१५८ टि
—अदृढअपरोक्ष-		अविद्या	२२।४०६
ब्रह्मज्ञानकी	६	—तूला	११४ टि
—उपरामकी	३८२	—मूला	११२ टि
—दृढअपरोक्षब्रह्म-		अविनाशी	१८५
ज्ञानकी	११	अव्यक्तआत्मा	१८४
—परोक्षब्रह्मज्ञानकी	६	अव्यय	४३४
—विचारकी	१२	—आत्मा	१८५
अवस्था	३८२।४१७	अवशात्तिलक्षणदोष	३६१
—चिदाभामकी	४२३	अशुद्धअहंकार	३७४
—जाग्रत्	११६।१२३।	अष्टमकला	१८८
७२ टि		असत्	१६४
—तीन	११४	—ख्यात	४०७
—सुपुत्ति	१२७।६६ टि	अमत्वापादक आवरण	१४८ टि
७४ टि			
—स्वप्न	१२५।७३ टि		

	पृष्ठांश-	पृष्ठांक	श्री
असंगमात्रमा	१८०		
असंगी	४३६		आकारव्यति १८४
असभव-लक्षणदीप	३६२		आकारके पचतन्त्र ३०३६
असभवना	३७४।१६ टि		४७।४६ टि
—प्रमाणगत	३७४		आकाशमद् ४३०
—प्रमेयगत	३७४		आभाति ४१८
असमर्त्ति	२८१		आगामी कर्म ३८६
असिद्ध	४१५		आतिशय ४१६
अस्मिन्	२३२ २३३		आत्मव्यति ४०१
अस्मिता	४२१		आत्ममद् ४३७
अस्तय	४१३		आरमा ११२।१७६
अस्मिता	४०६		—अक्षर १८६
अहकार	४१४।४२६		—अक्षरद्व १७८
—अमुक्तप	३७६		—अजन्मा १८२
—अशुद्ध	३७४		—अज्ञैत १८०
—सुखप	३७६		—अनत १७३
—विशेष	३७४		—अनात्मा का परस्पर
—शुद्ध	३७४		संशय १६६
—सामान्य	३७४		

	पृष्ठांक.		पृष्ठांक.
प्रात्मा-अव्यक्त	१८४	आत्मा-निर्विकार	१८३
—अवग्रह	१८५	—पदका लक्ष्य	१४६ टि
—असंग	१८०	—पदका वाच्य	१४६ टि
—आनंद	१७०	—ब्रह्मरूप	१७०
—आनेरूप	१४३ टि	—सत्	१६६
—उपद्रष्टा	१७६	—साक्षी	१७४
—एक	१७६	—स्वयंप्रकाश	१७२
—का स्वरूप	२६५	—आत्यंतिकप्रलय	४१२
—कूटस्थ	१७३	आधार	१३६।१४२
—के धर्म	१३० टि	आधिताप	३७३
के निषेधविशेषण	१८५	आनंद	१७०।१८६।१८०। २१६
—के विधेयविशेषण	१८६	—आत्मा	१७०
—के विशेषण	२६६। १६८	—श्री दुःखका निर्णय	२०८
—कैसा है ?	११३	—श्री दुःखमें अन्वय-	
—कौन है ?	११२	व्यतिरेक	२०८
—चित्	१६६	—पदका लक्ष्य	१४६ टि
—द्रष्टा	१७५	—पदका वाच्य	१४६ टि
—निराकार	६८५	—पदक	१६६ टि

पृष्ठांक-

आनंदरूप आत्मा	१४३	टि
आनंदमयकोश	११०	
आभ्य	३४४	
आपेक्षिकव्यापक	४१	टि
आरंभवाद	३८६	
आरोप	३५	टि
—शुद्धब्रह्मविषै		
प्रपञ्चका	२६	
आर्त	३६६	
आवरण	४२३	
—अमानापादक	१०	टि
—असम्भवापादक	१४	टि
—दाय	३८१	
—शक्ति	३७६	
आश्रय	४३५	
इ		
इहा	४३२	
इन्द्रिय-का सम्बन्धना	६५	
—का पटवना	६५	

पृष्ठांक

इन्द्रिय—का सम्बन्धना	६५	
—चौदा	११०	
ईशपनके अभिमानों	२२६	
ईशावास्योपनिषद्		
के जिन	३१०	
ईश्वर	२६०	२८ टि
—का कार्य	२६०	
—का देश	२५८	
—का उपाधि	२२	
—क काल	२५८	
—के धर्म	२६०	
—के वस्तु	२५६	
—के शरीर	२५६	
—कृपा	२२	टि
—चेतन	४२४	
—प्रविधान	४१०	
मर्त्य	२२	
उ		
उत्तमजिज्ञासु	३०	टि
उत्पत्ति	३६७	

	पृष्ठांक.		पृष्ठांक.
भूमिका		भ्रमजकी निवृत्ति	३६०
-चतुर्थ	२८०	भ्रांति	१४०।१४४।१५८
-तीसरी	२८०	-कर्ताभोक्तापनेकी	१०६टि
-दूसरी	२७६	—च्यारि	६४ टि
-पांचमी	२८१	--रूप संसार पंच	१४६
--प्रथम	२७६	—विकारकी	१११ टि
--षष्ठ	२८१	--संगकी	११० टि
-सप्तम	२८२		म
-सात	२७८	मज्जा	४३१
मद		मत्सर	४१७
—अज्ञानके	४०३	मद	४१७
-नाश औ चाधका	१७२टि	मन	७५।३६६।४२८
-पांच	१७८	मनन	
-भ्रांतिकी निवृत्ति	१५०	मनोनाश	४३३
-भ्रांतिपंच	१०८ टि	मनोमयकोश	१०६
-सर्वज्ञानीनकी स्थितिका	२७८	मंदपना इंद्रियका	६५
भङ्गका स्थान	१०१	मरीचिकाविषै जल	४१०
भौतिक	२६ टि	मलदोष	१८१।४१०

पृष्ठांक.			
मलिनसर्वगुण	३६ टि	मुदिता	३६६
महानात्मा	३८२	मुंडकोपनिषद्के लिंग	३२५
महाप्रलय	४४१	मुद्द	४११
महावाक्य	१६ टि	मूल	१०३ टि
-अथर्ववेदका	१५६ टि	— अज्ञान	२७६
-गीता अर्थ	१५६ टि	— अविद्या	११५ टि
-यजुर्वेदका	१५६ टि	मेद	४२६
-सृग्वेदका	१५६ टि	मेरा स्वभाव	१२३
माहूकशेषनिषद्के लिंग	३३०	मैत्री	३६६
मांय	३८४	में पंचकोशातीत हैं	६६
माया	२२	मोह	४१७।४४ टि
-अविद्यारूप अज्ञान	३३०	मोक्ष	३६८।१० टि
मायिक	१५७ टि	-का साक्षात्साधन	२६५
मिथ्यात्मा	३८३	-का स्वरूप	२।२६४
मूर्ख		-का हेतु	१२ टि
—अर्थ	२५३	-क अर्वांतरसाधन	२६५
—अहंकार	न ७५		
—पुरुषार्थ	५ टि	य	
मुख्यात्मा	२८३	यजुर्वेदका महावाक्य	१५६५
मुग्धत्व	४१६	यौवन	४१७

चंद्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ११५

	पृष्ठांक.		पृष्ठांक.
र		-अर्थ	२५३
न	४२६	-अर्थ 'तत्' पदका	२६३
राग	४०६	-अर्थ 'त्वं' पदका	२६३
ऋग्वेदका महावाक्य		-आनन्दपदका	१४६ टि
	१५६ टि	-उपद्रष्टापदका	१४६ टि
रूप	२३३	-एकपदका	१४६ टि
रोम	४६ टि	-कूटस्थपदका	१४६ टि
ल		-चिन्पदका	१४६ टि
लक्षणा	३२४	-द्रष्टापदका	१४६ टि
तटस्थ	३८०	-ब्रह्मपदका	१४६ टि
स्वरूप	३८०	-सत्पदका	१४६ टि
लक्षणा		-मात्मीपदका	१४६ टि
-अजहत्	२५४	-स्वयंप्रकाशपदका	१४६ टि
-जहत्	२५३	लघुवेदांतकोश	३७१
-भागत्याग	२५५	लिंग	४२१
-वृत्ति	२५२	-देह	६२ टि
-वृत्ति तीन	२५३	लोकैपणा	६८५
द्वय		लोभ	४१७

११६ ॥ अकारादि अनुक्रमणिका ॥ [विचार-
पृष्ठांक-

प	पृष्ठांक-	वायुके पञ्चतत्त्व	३१।५०।
वस्तु	२४६	वामनानन्द	३८३
— ईश्वरके	२६३	विकर्म	३८६
— जीवके	२४६ टि	विकार	३६७।११७टि
वान्य	२६३	— भ्रान्ति	१११ टि
— अर्थ	२६०	— भ्रान्तिकी नियुक्ति	१५५
— अर्थ 'तत्' पदका	२६३	-- पट्	७१।१८०
— अर्थ 'त्व' पदका	१४६ टि	यित्तेप	५१३।५२३।२१टि
— आनन्दपदका	१४६ टि	— आचरणरूपअज्ञान	३३०
— उपद्रष्टापदका	१४६ टि	— शेष	३८१
— ण रूपदका	१४६ टि	— शक्ति	३७६
— कृतमध्यपदका	१४६ टि	विचार	११
— चिसुपदका	१४६ टि	— का अधिशाही	१६
— द्रष्टापदका	१४६ टि	— का उपयोग	१५
— ब्रह्मपदका	१४६ टि	— का फल	१२
— मनुपदका	१४६ टि	— का विषय	१०
मालापदका	१४६ टि	— का म्यरूप	११
मयप्रकाशपदका	१४६ टि	— का हेतु	१९
वाद	३६४	— की अपधि	१२

वन्द्रोदय] अकारादिअनुक्रमणिका ॥ २१७

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक.
त्रजातीयसंबन्ध	१७६	—अहंकार	३७४
त्रज्ञानमय कोश	१०७	—चैतन्य	२:५।१५३ टि
त्रतंडावाद	३६२	—दो	१५४
त्रदेहमुक्ति	२८६	—वर्णन सत्चित्	
त्रद्वत्संन्यास	३७६	आनन्दका	१८८
त्रेधि-पूर्वक शरण	५२टि	विशेषण	
-ब्रह्मविद्याग्रहणका	५२टि	—आत्माके	१६६
त्रेधेय	१३८टि	आत्माके दो	१६८
-विशेषण आत्माके		विश्व	१२४।३८८
	१६६।१४७ टि	विषय	८० टि
त्रिपरोतभावना	१६टि।१८टि	—अतःकरणके	११६
त्रिवर्त	११६ टि	—अनुबंध	३६५
—उपादान	११८ टि	—कर्मइन्द्रियके	११६
—वाद	३८७	—चांदा	११६
त्रिविदिषासंन्यास	३७६	—ज्ञानइन्द्रियके	११६
त्रिशेष	२२६।४२६	—ज्ञानका	२६५
—अंश	१३६।१४३	—त्रिचारका	१३
—अधिष्ठानरूप	१५४टि	विषयानन्द	३८३
—अध्यस्तरूप	१५४टि	त्रिसंवादाभाव	४०६

पृष्ठांक ।

पृष्ठांक-

य

षायुक पाचतन्त्र २१५०।

वातु

५.

— ईश्वरक	२४६	वासनाजन्द्	३८३
— नीलक	२६३	विकर्म	३८६
वान्य	२४६ टि	विकार	३६७।११७टि
— अर्थ	२६३	— भ्रान्ति	१११ टि
— अर्थ 'तन्' पदका	२६०	— भ्रान्तिकी निवृत्ति	१५५
— अर्थ 'त्व' पदका	२६३।	— पट्	७१।१८०
— आनन्दपदका	१४६ टि	विशेष	४१३।४२३।१६टि
— उपद्रष्टापदका	१४६ टि	— आवरणरूपअज्ञान	३३०
— अरूपपदका	१४६ टि	— शेष	३८१ ।
— कूटस्थपदका	१४६ टि	— शक्ति	३७६
— चिन्पदका	१४६ टि	विचार	११
— द्रष्टापदका	१४६ टि	— का अधिगारो	१६
— ज्ञापदका	१४६ टि	— का उपयाम	१५
— सन्पदका	१४६ टि	— का फल	१०
मात्तापदका	१४६ टि	— का विषय	१०
अवयवकाशपदका	१४६ टि	— का स्वरूप	११
वाद	३६२	— का हेतु	११
		— की अवधि	१२

चन्द्रोदय] अकारादिअनुक्रमणिका ॥ ११७

पृष्ठांक-

पृष्ठांक.

जातीयसंबन्ध	१७६	—अहंकार	३७४
विज्ञानमय कोश	१०७	—चैतन्य	२:५।१५३ टि
वितंडावाद	३६२	—दो	१५४
विदेहमुक्ति	२८६	—वर्णन सत्चित्	
विद्वत्संन्यास	३७६	—आनन्दका	१८८
विधि-पूर्वक शरण	५२टि	विशेषण	
—ब्रह्मविद्याग्रहणार्का	५२टि	—आत्माके	१६६
विधेय	१३८टि	आत्माके दो	१६८
—विशेषण आत्माके		विश्व	१२४।३८८
	१६६।१४७ टि	विषय	८० टि.
विपरोतभावना	१६टि।१८टि	—अतःकरणके	११६
विवर्त	११६ टि	—अनुबंध	३६५
—उपादान	११८ टि	—कर्मइन्द्रियके	११६
—वाद	३८७	—चौदा	११६
विविदिपासंन्यास	३७६	—ज्ञानइन्द्रियके	११६
विशेष	२२६।४२६	—ज्ञानका	२६५
—अंश	१३६।१४३	—विचारका	१३
—अधिष्ठानरूप	१५४टि	विषयानन्द	३८३
—अध्यस्तरूप	१५४टि	विसंवादाभाव	४०६

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक-
वृत्ति शब्दकी	२५२	व्यावहारिकजीव	३८८
वेदकृपा	२२ टि	व्यापृत्ति	८८ टि
वेदात		श	
—पदार्थसंज्ञाघर्णन		शक्ति	१८० टि
	३७१	—अज्ञानकी	३७६
—प्रमेय [पदार्थ]		—आवरण	३७६
घर्णन	२६०	—विक्षेप	३५०
वैश्वदेव	४१६	—वृत्ति	२५०
व्यतिरक्त ६८ टि	१०५ टि	शक्यसर्थ	२५३
—अन्वय	१४२	राज्	
व्यभिचागी	१५६ टि	—की वृत्ति	२५२
व्यष्टिअज्ञान	३७६	—प्रमाण	४२०
व्याधिनाव	३७३	रामादि	४००
व्याप्त रायु	१०४	शरीर	
व्यापक १७०।४५।४।४।४ टि		—इश्वरके	४५६
—आपेक्षिक	४१ टि	—जीवके	२६०
—जाति	३७८	शांतात्मा	३८२
व्याप्त	४३४	शिगु	४१४
—वाले	२५७		

तन्त्रोदय] ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ १०६

पृष्ठाङ्क.

इह	४३५
—अहंकार	३७४
—चेतन	४२४
ब्रह्मविषै प्रपंचआरोप	२६
—सत्त्वगुण	३८ टि
पुमेच्छा	२७६
गोकनाश	४२३
प्रवण	४००
श्रीश्रुतिपट्टलिंगसंग्रह	
—	२६६
प्रुत	४३६

प

पट्ट	
—अध्यास	१५६
—विकार	७१।१८२
पष्ट	
—कला	१३३
—भूमिका	२८१
गोडशकला	२६६
गोडशकला द्वितीय	
विभाग	३७१

पृष्ठाङ्क.

स

संशय	१७ टि
—प्रमाणगत	१५ टि
प्रमेयगत	१५ टि
संमर्गाध्यास	१२७ टि
संसार भ्रान्तिरूपपाँच	१४६
संस्कार	३६७
सगुण उपासना	३७७
संकल्प	४२६
संग	१७८
—भ्रान्ति	११० टि
भ्रान्तिकी निवृत्ति	१५४
सजातीय	१७८
संचितकर्म	२७४।३८६
सत्	१६६।१८६।१८६।
	१६४।२१६
—असत्का निर्णय	१६३
—असत्में अत्र	
व्यतिरेक	१६४

	पृष्ठांक		पृष्ठांक
मत्—आ मा	१६६	सप्तम—कला	१६६
—चित्तज्ञानन्दका		—भूमिका	२८२
विशेषवर्णन	१८८	समवायमन्वय	४२६
--पदका वाच्य	१५६ टि	समष्टि	
—पदका लक्ष्य	१४६ टि	—अज्ञान	३७६
—प्रतिपक्ष	४१४	व्यष्टिरूप अज्ञान	४०४
सतरा नक्षत्र		समानवायु	१०३
—अपचीकृतपञ्चमहा		सर्वध	
भूतनके	७६	—अनुबध	३६५
—समझनेका फल	७६	—विजातीय	१७६
सूक्ष्मदृष्टके	७४	—सजातीय	१७८
सत्ता	४२५	—समवाय	४०६
सर्ववपुण		--सहित समझ-धीका	
--सन्निक	३६ टि	अप्यास	१२१ टि
—शुद्ध	३८ टि	—हगत	१७६
सच पति	२८०	सप्रवाध्यास	७६
सम्यास—विद्वत्	३७३	द्वै	
—वित्रिदिया	३७३	—आरोपकी निवृत्ति	२८
समज्ञानभूमिका		ज्ञानीकी स्थितिका	
वर्णन	२७७	भेद	२७८

चन्द्रोदय] ॥ अकारादि अनुक्रमणिका ॥ १२१

	पृष्ठांक		पृष्ठाङ्क.
सर्वज्ञईश्वर	२२	साधन	
सव्यभिचार	४१४	--मोक्षका साक्षान्	२६५
महजकी निवृत्ति	३६०	साक्षान् अंतरंग-	
साक्षी	१७४।२२०	ज्ञानका	२६६
--आत्मा	१७४	सामयिकाभाव	४१२
--पदका लक्ष्य	१४६ टि	सामान्य	२३०
--पदका वाच्य	१४६	--अंश	१३६।१४३
मात ज्ञानभूमिका	२७८	--अहंकार	३७४
साधन-अन्तरङ्ग ज्ञानके परं-		चैतन्य	२३०।१५५
परासै	२६७	चैतन्यकी प्रकाशता	
--एकादश ज्ञानके	२६७		१५५ टि
--जीवनमुक्तिविदेह-		--विशेषचैतन्य-	
मुक्तिका	२८२	वर्णन	२२३
--जीवनमुक्तिके		सुखप्राप्ति	४०६
--त्रिलक्षणआनन्दके	२८२	सुविचारणा	२७ टि
--तत्त्वज्ञानके	२८२	सुपम्णा	४३६
द्वि-बहिरंगज्ञानके	२६७	सुपुत्ति	
--मोक्षका अत्रान्तर	२६५	--अवस्था	१२७।६६ टि
			७४ टि

	पृष्ठाङ्क		पृष्ठाङ्क
सुपुंति		स्थूलरेह	३०
--अवस्थाका में		—का में द्रष्टा हैं	३०
साक्षी हैं	१२७	—के गौणधर्म	४६
--जाग्रत	३२४	—के धर्म	६४
में ज्ञान	२८ टि	--विद्यै एकीमत्त्व	४६
--सुपुंति	३६४	स्वगतमस्वन्ध	१७६
--स्वप्न	म ६४	व्यपन	
सूक्ष्म		--अवस्था १०१।१३ टि	
--रेह	७४	—अवस्थाका में	
—रेहका में द्रष्टा हैं	७४	साक्षी हैं	१२४
रेहके अंतरा तत्त्व	७४	—जाग्रत	३६४
--भूत	७६	—सुपुंति	३६४
--सूत्रवत्	८६ टि	--स्वप्न	३६४
सूक्ष्म	४३०	स्वप्नकाश	४३४
स्थान		स्वप्नाव शिपुटीनेका	१००
--सादि जीवके	१०३।	स्वप्नकाश	१००।०१३
	१२२।१२७	--आत्मा	१७०
—धी क्रिया सर्वमायक		--परका अद्वय	१७६ टि
	१०४	परका वाच्य	१४३ टि
--भोगका	१-१		

पृष्ठांक-	पृष्ठांक-
ल्प	हेतु ४३५
दृढश्रपरोक्षब्रह्म-	—श्रदृढश्रपरोक्षब्रह्म-
ज्ञानका ६	ज्ञानका ७
-आत्माका २६५	—दृढश्रपरोक्षब्रह्मज्ञानका १०
-ज्ञानका २६६	--परोक्षब्रह्मज्ञानका ५
-दृढश्रपरोक्षब्रह्मज्ञानका ६	विद्याका ११
-परोक्षब्रह्मज्ञानका ४	हेत्वाभास ४१४
-ब्रह्मका २६६	क्षेत्रत्व ३४०
-मोक्षका २, २६४	क्षेप ३४०
-लक्षण ३८०	सोम १, ६ टि
-विचारका ११	ज्ञातव्य ३८५
-सै अनादि ३६ टि	ज्ञान ५८ टि
रूपाध्यास १२, ६ टि	—का विषय २६५
साध्याय ४१०	—का साक्षात् अंतरंग साधन २६
वेदज ३६६	
ह	
निग्रह ३७८	

१२४ ॥ अकारादिअनुक्रमणिका ॥ [विचार-

	पृष्ठांक-		पृष्ठांक
ज्ञान का स्वरूप	२६६	ज्ञानइन्द्रियन	
—के एकादश साधन	२६७	—की त्रिपुरी	१२०
—क परपरासै अतरग-		—के देवता	११७
साधन	२६७	—क विषय	११६
—क बहिरग साधन	२६७	ज्ञानाभ्यास	३८२
क्रियाशक्तिरूप		ज्ञानाभ्यास	३१३
अज्ञान	४०३	ज्ञाना	३६६
—भूमिका सात	२७८	—क कमकी नियुक्ति	२७६
—रक्षा	४०३	ज्ञानीर	
सुषुप्तिमें	६८ टि	—की स्थितिका भर	२७८
ज्ञानइन्द्रिय	६४ टि	के कर्मनियुक्तिका	
—बोव ७४ ७६ ८४ ११७		प्रकारवर्णन	२७३

॥ ॐ गुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ अथ प्रथमकलाप्रारम्भः ॥ १ ॥

॥ उपोद्घातवर्णन ॥

॥ २ मनहर छन्द ॥

गुरुषु इच्छाविषय पुरुषार्थ जोई सोई ।

दुःखनाश सुखप्राप्तिरूप मोक्ष मानहु ॥

हेतु ताको ब्रह्मज्ञान सो परोक्ष अपरोक्ष ।

तामैं अपरोक्ष दृढ अदृढ दो गानहु ॥

मोक्षको साक्षात् हेतु दृढ अपरोक्षज्ञान ।

हेतु ता विचार जीवब्रह्मजग जानहु ॥

निवस्तुरूप जड चेतनदो जड मिथ्या-

माया ब्रह्मचित्त 'सो मैं' पीतांबर स्थानहु ॥

• १ प्रश्न:-पुरुषार्थ सो क्या है ?

उत्तर:-सर्वपुरुषार्थकी इच्छाका जो विषय।
सो पुरुषार्थ है ॥

• २ प्रश्न -सर्वपुरुषार्थकू किसकी इच्छा होवैहै ?

उत्तर.-सर्वपुरुषार्थकू सर्वदु.एनकी निवृत्ति
श्री परमानन्दकी प्राप्तिकी इच्छा होवैहै ॥

• ३ प्रश्न -सर्वदु.एनकी निवृत्ति श्री परमानन्दकी
प्राप्ति सो क्या है ?

उत्तर —सर्वदु.एनकी निवृत्ति श्री परमा-
नन्दकी प्राप्ति । यह मोक्षका स्वरूप है ॥

॥ १ ॥ प्रतिपादन करनेवाग्य अर्थकू मनमें रखिके
तिसके अथ अन्यथाका प्रतिपादन उपोद्घात है ।
जैयें किम्बाकू दूसरेक गृहमें छोड़ खनैकी होयें । तब
वह बात मनमें रखिके तिसके अर्थ "सुगरी सो
दुग्ध वर्ताहै वा नहीं ?" इत्यादिरूप अन्यथाका
कथन उपोद्घात है ॥ नैमें हर्षो प्रतिपादन करनेवाग्य

जो विचार । ताकूं मनमें राखिके तिलके आरंभअर्थ अन्य
मात्तआदिकपदार्थनका कथन उपोद्घात है ॥

॥ २ ॥ कोईवी रागके ध्रुवपदमें गाया जावै है ।

॥ ३ ॥ अन्वयः-ता (दृढअपरोक्षज्ञानका) हेतु
विचार है ।

॥ ४ ॥ ऐसै निश्चय करो ॥

॥ ५ ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष । इन च्यारीका नाम
पुरुषार्थ है ॥ तिनमें प्रथमके तीन गौण हैं । तिनकूं
छोड़िके इहाँ अंतके मुख्य पुरुषार्थका ग्रहण है ।

॥ ६ ॥ अज्ञानसहित जन्ममरणादिक दुःख कहियेहै ।

॥ ७ ॥ मिथ्यापनैका निश्चयरूप बाध निवृत्ति है ।

॥ ८ ॥ परमप्रेमका विषय परमानंद है ।

॥ ९ ॥ इहाँ कंठभूषणकी न्यांई नित्यप्राप्तकी प्राप्ति
मानी है ॥

॥ १० ॥ कर्ताभोक्तापनैआदिकअन्यथाभावक
स्वरूपसे स्थितिहीं मोक्ष है ॥ कितनैक लोक हां
वैकुण्ठ गोलोक ब्रह्मलोक आदिककी प्राप्ति

* ४ प्रश्न मोक्ष किन्हीं होयै ?

उत्तर:—मोक्ष ११ ब्रह्मज्ञानसें होयै है ।

* ५ प्रश्न - १२ ब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर — ब्रह्मज्ञान । सो ब्रह्मस्वरूपकूं यथार्थ जानना ।

* ६ प्रश्न:—ब्रह्मज्ञान कितनै प्रकारका है ?

उत्तर:—ब्रह्मज्ञान । परोक्ष औ अपरोक्ष भेदतें दो प्रकारका है ।

* ७ प्रश्न.—परोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ।

उत्तर:—(१ परोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

जानतहैं । सो वेदसें विरुद्ध है ॥ ऊपर कहा मोक्षका स्वरूप वेदधनुसारी है ॥

॥ ११ ॥ कर्म औ उपासनारी चित्तकी शुद्धि औ एकाग्रतारूप ज्ञानके साधन हावै है । मोक्ष नहीं ॥

॥ १२ ॥ ब्रह्मसें अभिन्न आत्माका ज्ञान । मोक्ष का हेतु ई ॥

“सच्चिदानन्दरूप ब्रह्म है ” ऐसा जो जानना ।

सो १३ परोक्षब्रह्मज्ञान है

* ८ प्रश्न :- परोक्षब्रह्मज्ञान किससे होवै है ?

उत्तर :- (२ परोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

सद्गुरु औ सत्शास्त्रके वचनमें विश्वासके रखनसे परोक्षब्रह्मज्ञान होवै है ॥

* ९ प्रश्न :- परोक्षब्रह्मज्ञानसे क्या होवै है ?

उत्तर :- (३ परोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

१४ असत्त्वापादक आवरणकी निवृत्ति होवै है ॥

* १० प्रश्न :- परोक्षब्रह्मज्ञान कब पूर्ण होवै है ?

॥ १३ ॥ परोक्षज्ञान । “ तत्त्वमसि ” महावाक्यगत “ तत् ” पदके अर्थकू जनावत है । यार्ते सो अपरोक्ष-अद्वैतज्ञानविषे उपयोगो है ॥

॥ १४ ॥ “ ब्रह्म नहीं है ” इसरीतिसे ब्रह्मके असद्भावकी आपादक कहिये संपादक आवरण ।

पादक आवरण है ॥

उत्तर:- (४ परोक्षब्रह्मज्ञानकी अधधि)

परोक्षब्रह्मज्ञान । ब्रह्मनिष्ठगुरु श्री वेदांत शास्त्रके अनुसार ब्रह्मस्वरूपके निर्धार किये पूर्ण होवैहै ॥

* ११ प्रश्न -अपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर:-“सच्चिदानंदरूप ब्रह्म मैं हूँ” ऐसा जो जानना । सो अपरोक्षब्रह्मज्ञान है ॥

* १२ प्रश्न.-अपरोक्षब्रह्मज्ञान किससे होवैहै ?

उत्तर:-गुरुके मुपसे “ तत्त्वमसि ” आदिकमहावाक्यके अधरणसे अपरोक्षब्रह्मज्ञान होवैहै ॥

* १३ प्रश्न -अपरोक्षब्रह्मज्ञान कितने प्रकारका है ?

उत्तर:-अपरोक्षब्रह्मज्ञान अदृढ और दृढ इसभेदसे दोप्रकारका है ॥

* १४ प्रश्न -अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर:-

(१ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

१५ असंभावना औ १६ विपरीतभावनासहित
 १ ब्रह्मआत्माकी एकताका निश्चय होवै । सो
 अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान है ।

१५ प्रश्न:-अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान किससँ होवै
 है ?

उत्तर:-

(२ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

। १५ ॥

- १ " वेदांतविषै जीवब्रह्मका भेद प्रतिपादन किया है
 किंवा अभेद ? " यह प्रमाणगतसंशय है ॥ औ
 २ " जीवब्रह्मका भेद सत्य है वा अभेद सत्य है ? "
 यह प्रमेयगतसंशय है ।

यह दोनूँ प्रकारका संशय असंभावना कहिये है ।

॥ १६ ॥ " जीवब्रह्मको भेद सत्य है औ देहादि-
 प्रपंच सत्य है " ऐसा जो विपरीतनिश्चय । सो
 विपरीतभावना है ।

१ फलुक मलविशेषदोषके होते श्रुतिनानात्वका ज्ञान । श्री

२ ब्रह्मकी अद्वैतताके असम्भवका ज्ञान श्री

३ भेदवादी अरु पामरपुरुषके सङ्गके सस्कार । इनकरि सहित पुरपट्टु गुरुमुखद्वारा महावाक्यके अग्रणसे अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञान होवेहे ॥

●१६ प्रश्न - अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञान से क्या होवेहे ?

उत्तर —

(३ अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञानसे

१ उन्नमलाकरी प्राप्ति होवेहे श्री

२ पवित्रथीमान्कुलविषे जन्म होवेहे । अथवा निष्कामताके हुये शानीपुरुषके कुलविषे जन्म होवेहे ॥

●१७ प्रश्न - अद्वैतअपरोक्षब्रह्मज्ञान कथ पूर्ण होवेहे ?

उत्तर:—

(४ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि) ✓

सत्-चित्-आनन्द आदिक ब्रह्मके विशेषण-
के अपरोक्षमान हुये वी १७संशय औ १८विपरीत
भावनाका सद्भाव होवै । तब अदृढअपरोक्ष
ब्रह्मज्ञान पूर्ण होवैहै ॥

* १८ प्रश्न:—दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तर:—

(१ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

असंभावना औ विपरीतभावनासँ रहित जो
ब्रह्मआत्माकी एकताका निश्चय होवै । सो
दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान है ॥

* १९ प्रश्न:—दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान किससँ होवैहै ?

॥ १७ ॥ दोकोटिवाला ज्ञान संशय कहिये है ?

॥ १८ ॥ विपरीतनिश्चयक विपरीतभावना कहै ॥

उत्तर:—

(२ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

गुरुमुखसँ १६महावाक्यके अर्थके श्रवण
मनन औ निदिध्यासनरूप विचारके कियेसँ दृढ-
अपरोक्षब्रह्मज्ञान होवैहै ।

* २० प्रश्न:—दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानसे क्या होवै है ?

उत्तर:—

(३ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

२०अभानापादकआवरण औ २१विज्ञेयरूप

॥ १६ ॥ जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वाक्य । महा-
वाक्य कहिये है ।

॥ २० ॥ “ ब्रह्म भावता नहीं ” इसरीतिसँ अभान
जो ब्रह्मकी अप्रतीति । ताका आपादक कहिये संवादन
करनैवाला आवरण । अभानापादकआवरण है । ५/

॥ २१ ॥ स्थूलसूक्ष्मशरीरसहित चिदाभास औ ताके
धर्म कर्त्तापना भोक्तापना जन्ममरणआदिका विज्ञेय है ।

कला] ॥ उपोद्घातवर्णन ॥ १ ॥ ११

कार्य सहित अविद्याकी कहिये अब्रानकी निवृत्ति होयके ब्रह्मकी प्राभिरूप मोक्ष होवैहै ।

* २१ प्रश्न:-दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानकय पूर्ण होवेहै ?

उत्तर:-

(४ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि)

देहविषे अहंपनैके ज्ञानकी न्याई । इस ज्ञान का वाधकरिफे ब्रह्मसँ अभिन्न आत्माविषे जव ज्ञान होवै । तव दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान पूर्ण होवैहै ।

* २२ प्रश्न:-विचार सो क्या है ?

उत्तर:- (१ विचारका स्वरूप)

आत्मा औ अनात्माकूँ भिन्नकरिके जानना । सो विचार है ।

* २३ प्रश्न:-यह विचार किससँ होवै है ?

उत्तर:- (२ विचारका हेतु)

यह विचार। ईश्वर। वेद। गुरु श्री अपना
प्रन्तकरण। इन २२व्यारीकी कृपासँ होवैहै ॥

* २४ प्रश्न - इस विचारसँ क्या होवै है ?

उत्तर:—(विचारका फल)

इस विचारसँ दृढअपरोक्षग्रह्यज्ञान होवैहै ॥

* २५ प्रश्न.—एह विचार कय पूर्ण होवैहै ?

उत्तर:—(४ विचारकी अवधि)

॥ २२ ॥

१ सद्गुरुआदिकज्ञानसामग्रीकी प्राप्ति ईश्वरकृपा है ॥

२ शास्त्रार्थके धारणकी शक्ति वेदकृपा है ।

३ शास्त्र श्री स्वअनुभवके अनुसार वयार्थ उपदेशका
करना गुरुकृपा है ॥ श्री

४ शास्त्रगुरुके वचनअनुसार साधनोंका सपादन करना
अपने अन्तःकरणकी कृपा है ।

यह विचार दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानके भये पूर्ण होवैहै ॥

* २६ प्रश्न:—विचार किसका करना ?

उत्तर:—(५ विचारका विषय)

१ मैं कौन हूँ ? २ ब्रह्म कौन है ? औ
३ प्रपंच क्या है ? इन तीनवस्तुनका विचार करना ॥

* २७ प्रश्न:—इन तीनवस्तुका साधारणरूप क्या ?

उत्तर:—

१—२ “ मैं औ ब्रह्म ” सो चैतन्य है । अरु

३ २३प्रपंच सो जड है ॥

* २८ प्रश्न:—चैतन्य सो क्या है ?

उत्तर:—

(१) जो ज्ञानरूप है । औ

॥ २३ ॥ समष्टिव्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणदेह औ ि
अवस्था अरु धर्म । प्रपंच कहिये है ॥

(०) सर्वघटादिकप्रपञ्चकं जानताहै । श्री

(३) त्रिमकू अन्य मनइन्द्रियश्चादिक
कोई जानि सकने नहीं ।

सो शैलन्य है ।

० - ६ प्रश्न - जड़ सा क्या है ?

उत्तर:—

(१) जो आप्तु न जानै । श्री

(२) दूमरेदु घोन जानै

जैसे जा २४ अमान श्री तिनके कार्य २२ भूत
२१ भानिकपदार्थ । सो जड़ है ।

॥ २४ ० ' नहीं जानताहूँ ' ऐसी स्थिति रखा हेतु
आशास्यविशेषशक्तिवाद्या अनादिभवह्य अज्ञान
पदार्थ है

॥ २२ ० ० क काशादिदृशंभूत ?

॥ २६ ॥ भूतवद कार्य चिद्रवद्यांशदिद का
भी उक्त है ।

३० प्रश्न:-ऊपर कहे तीनवस्तुके विचारका किसरीतिसँ उपयोग है ?

उत्तर:- (६ विचारका उपयोग)

१ " तत्त्वमसि " महावाक्यमें स्थित " त्वं " पद और " तत् " पदका वाच्यार्थ जो २७ जीव और २८ ईश्वर । तिनकी उपाधिरूप जो २९ प्रपंच । तिसकूँ जेवरीनँ सर्पकी न्याई और ठाँठमें पुरुषकी न्याई और मरुभूमिमें मृगजलकी न्याई । विचारकरि मिथ्या जानि के त्याग करना । यह प्रपंचके विचारका उपयोग है ।

॥ २७ ॥ चिदाभासयुक्त अंतःकरणसहित कूटस्थ-चैतन्य । सो जीव है ।

॥ २८ ॥ चिदाभासयुक्त मायासहित ब्रह्मचैतन्य । सो ईश्वर है ।

॥ २९ ॥ समष्टि और अष्टिरूप तीनशरीर । पंचकोश तीन अवस्थायादिकनामरूप । प्रपंच कहिये हैं ।

(१०) सामान्यचैतन्य औ विशेषचैतन्य ।

(११) “ त्व ” पद औ “ तन् ” पदका
वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थ अरु दोनूके
लक्ष्यअर्थकी एकता ।

(१२) क्षातीके कर्म की निवृत्ति ।

(१३) सप्तज्ञानभूमिका ।

(१४) जीवन्मुक्ति औ विदेहमुक्ति ।

(१५) श्रोत्रुतिपदलिंगसंप्रदः ।

(१६) वेदांतप्रमेय ।

ये तिन ३२प्रक्रियाके नाम हैं ।

इति श्रीविचारचन्द्रोदये उपोद्धातवर्णन-
नामिका प्रथमकला समाप्ता ॥ १ ॥

॥ ३२ ॥

१ प्रपञ्चका विचार प्रथम द्वितीय पण्ड द्वादश औ
त्रयोदशवीं प्रक्रियाविषयै किये हैं । औ

“प्रपंचसहित मैं कौन हूं” याका विचार तृतीय चतुर्थ औ पंचम प्रक्रियाविषै किया है । औ

शरमात्मा कौन है ? याका विचार दशम प्रक्रियाविषै किया है । औ

ब्रह्म-आत्मा दोनोंके स्वरूपका विचार सप्तम अष्टम नवम एकादश औ चतुर्दशवीं प्रक्रियाविषै किया है । औ

प्रपंच औ ब्रह्मआत्माके स्वरूपका विचार पंचदशवीं प्रक्रियाविषै किया है ।

सर्वप्रक्रियाका “तत्” “त्वं” पदार्थका शोधन औ तिनकी एकताका निश्चय प्रयोजन है ।

॥ अथ द्वितीयकलाप्रारम्भः ॥ २ ॥

॥ प्रपंचारोपापवाद ॥

॥ मनहर छन्द ॥

प्रपंचारोपापवाद करि निष्पन्न वस्तु
ब्रह्मजानिके अवस्तु-मायादिक भागिने ॥
ब्रह्म माया सम्बन्ध रु जीवईशभेद निना
पट् गे अनादि तार्मि ब्रह्मानंत भागिने ॥
वस्तुमै अद्यम्तु कर कथन आरोप ॥ १ ॥
अद्यम्तु वस्तुकथन अपवाद भागिने ॥
गुरुके प्रवाद यह युक्ति जानि पितरंघर ।
॥ १ ॥ न जनमका रज आरज निज जानिगे ॥ २ ॥

॥ १ ॥ ॥ अर्थ — वस्तु बाधि वस्तुव्ययन अपवाद
॥ १ ॥

॥ २ ॥ ॥ अर्थ — हे अरज करिने सिद्धी
॥ १ ॥ न जनमका रज आरज निज जानिगे ॥ २ ॥

* ३३ प्रश्नः—शुद्धब्रह्मविषै प्रपंचका ३५ आरोप कैसे हुआ है ?

उत्तरः—अनादिशुद्धब्रह्मकेविषै ३६ अनादि-
 ३७ कल्पितप्रकृतिहै । तिस प्रकृतिका ब्रह्मके साथि
 अनादिकल्पिततादात्म्यसंबंध है कहिये कल्पित-
 भेदसहित वास्तवअभेदरूप संबध है ॥

सो प्रकृति १ माया औ २ अविद्या औ ३ तमः-

॥ ३५ ॥ ब्रह्मरूप वस्तुविषै अज्ञानतत्कार्यरूप
 अवस्तुका कथन आरोप है । याहीकूँ अध्यारोपवी
 कहें हैं ॥

॥ ३६ ॥ उत्पत्तिरहित वस्तु । स्वरूपसँ अनादि
 है ॥ ऐसै शुद्धब्रह्म । प्रकृति । तिनका संबंध । ईश्वर ।
 शिव औ तिनका भेद । ये पद हैं । अरु प्रवाहरूपसँ
 ॥ ३७ ॥ अनादि है ॥

॥ ३७ ॥ जो होवै, नहीं औ स्वप्नपदार्थ की न्यांई
 ताँतिसँ भासे सो कल्पित है ।

प्रधानप्रकृतिरूपकरि विभागकू पावती है । तिनमें

१ जो " शुद्धसत्त्वगुणयुक्त । सो माया है । औ

२ जो " मलिनसत्त्वगुणयुक्त सो अविद्या है औ

३ जो तमोगुणकी मुख्यताकरि युक्त है । सो तम प्रधानप्रकृति है ।

१ मायाविषै जो ब्रह्मका प्रतिबिंब है । सो अधिष्ठान(ब्रह्म)औ " मायासहित जगत्कर्त्ता सर्वज्ञईश्वर कहिये है ॥ औ

२ अविद्याविषै जो ब्रह्मका प्रतिबिंब है । सो अधिष्ठान (कूटस्थ)औ अविद्यासहित भोक्ता अल्पज्ञजीव कहिये है ॥

१ सो ईश्वर औ जीव बी अनादिकल्पित हैं ॥

तिनमें ईश्वरकी उपाधि माया एक है औ

" आपत्तिकव्यापक है । तिसमें ईश्वर बी एक

है औ व्यापक है ॥ औ

॥३८॥ क्षत्रिय औ शूद्ररूप मंत्रानसै ब्राह्मण राजाकी न्यांई जो रजतमसै दवै नहीं । किन्तु रजतमकूँ आप दवावै । ऐसा सत्वगुण । शुद्धसत्वगुण है ॥

॥ ३९ ॥ जो रजतमकूँ दवावै नहीं । किंतु शूद्ररूप दोनूँ राजकुमारनसै ब्राह्मणरूप एकमंत्री की न्यांई, रजतमसै आप दवै । ऐसा सत्वगुण । मलिनसत्वगुण है ॥

॥ ४० ॥ इहां मायाशब्दकरि माया औ तमःप्रधान प्रकृति । इन दोनूँ ईश्वर की उपाधिनका ग्रहणहै तिनमें १ मायाउपाधिकूँ लेके ईश्वर । कुलात्त की न्यांई

जगत्का निमित्तकारण है । औ

२ तमःप्रधानप्रकृतिकूँ लेके ईश्वर । मृत्तिकाकी न्यांई **जगतका उपादानकारण है ॥**

॥४१॥ जो किसीकी अपेक्षासै व्यापक होवै औ किसीकी अपेक्षासै परिच्छिन्न होवै । सो आपेक्षिक-व्यापक कहियेहै ॥ जैसे गृह जो है । सो घटादिककी अपेक्षासै व्यापक है औ ग्रामकी अपेक्षासै

२ जायकी उपाधि अविद्या नाना ह थी परिच्छिन्न हैं । तिसनें जीव वी नाना है श्री परिच्छिन्न है ॥

तिन जीवईश्वरका अनादिकल्पितभेद है ॥

१ सृष्टिसँ पूर्व सो जिवनकी उपाधि अविद्या । जीवनेके कर्मसहितहीं मायाविषै लीज होयके रहतीहै । सो माया सुपुत्रियिप अविद्याकी न्य इ ब्रह्ममें भिन्न प्रतात नाम सिद्ध होवै नहीं । यानैसृष्टिन पहिले सजातीय विजानोय स्वगतभेदरहित एकहीं अद्विनाय नञ्चिदानन्द रूप ब्रह्म था ॥

परिच्छिन्न है । यान प्र पत्रिक्यापक है ॥ तैसँ माया जो गुण अथादिककी अपचारै व्यापक कहिय अधिकार बना है या ब्रह्मका अवेस मे परिच्छिन्न है । यानै अ पत्रिक्यापक है ॥

- २ तिस ब्रह्मकूँ सृष्टिके आरंभविषै जीवनके परिपक्व भये कर्मरूप निमित्तसँ “मैं एकहूँ सो बहुरूप होऊँ” ऐसी इच्छा भयी ॥
- ३ तिस इच्छासँ ब्रह्मकी उपाधि मायाविषै लोभ होयके क्रमतँ आकाश वायु तेज जल औ पृथ्वी । ये पंचमहाभूत उत्पन्न भये ॥
- ४ तिनका पंचीकरण नहीं भयाथा । तब अपंचीकृत थे । तिनतँ समष्टिव्यष्टिरूप सूक्ष्मसृष्टि होयके । पीछे ईश्वरकी इच्छासँ जब तिनका पंचीकरण भया । तब सो भूत पंचीकृत भये । तिनतँ समष्टिव्यष्टिरूप स्थूलसृष्टि भयी ॥
- तिनमें समष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचका अभिमानी जीवकी दृष्टिसँ ईश्वर है औ व्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचका अभिमानी जीव है ।

तिनमें ईश्वर सर्वज्ञ होनेमें नित्यमुक्त है औ जीव अल्पज्ञ होनेमें बद्ध है ॥

इसरीतिमें शुद्धब्रह्मविषै प्रपंचका आरोप हुआ है ॥

* ३४ प्रश्न — यह आरोप सत्य है वा मिथ्या है ?

उत्तर:—यह आरोप जेयरीविषै सर्पकीन्याई औ साक्षीविषै स्वप्नकी न्याई औ दर्पणविषै नगरके प्रतिबिम्बकी न्याई मिथ्या है ।

* ३५ प्रश्न:—यह आरोप किसमें होवै ?

उत्तर:—यह आरोप अब्रह्ममें होवै ॥

* ३६ प्रश्न:—यह आरोप कबका औ कबहुँ हुवा होवैगा । यह विचार कैमें होवै ?

उत्तर:—जैसे कोई पुरुषके घरके ऊपर नैलका दाग लग्याहोवै । तिसकुं जानिके ताकुं मिटावने का उपाय कियाचादिये औ “ यह दाग कबका

काहेकूँ लग्याहोवैगा?" इस विचारका कछु प्रयोजन नहीं है ॥ तैसँ "यह प्रपंचका आरोप कवका औ काहेकूँ हुवा होवैगा?" इस विचारका बी कछु प्रयोजन नहीं है । परंतु इसकी निवृत्तिका उपाय करना योग्य है ॥

* ३७ प्रश्न:—इस सर्वआरोपकी निवृत्ति किस रीतिसँ होवैहै ?

उत्तर:—

- १ ब्रह्मज्ञानसँ माया औ अविद्या की निवृत्ति होवैहै ।
- २ तिसतँ कार्यसहित प्रकृतिकी निवृत्ति होवै है ।
- ३ तिसतँ प्रकृति औ ब्रह्मके संबंधकी निवृत्ति होवैहै ।
- ४ तिसतँ जीवभाव औ ईश्वरभावकी निवृत्ति होवैहै ।

५ तिसरें जीवईश्वरके भेदकी निवृत्ति होवैहै ।

६ तिसरें बंधकी निवृत्ति होयके मोक्ष सिद्ध होवैहै ॥

हमरीतिस एक्कालविपरीत सर्व आरोपकी निवृत्तरूप ४२ अपवाद होवैहै ।

● ३८ प्रश्न — यह ब्रह्मज्ञान किससँ होवैहै ?

उत्तर — यह ब्रह्मज्ञान आगे कहियेगा जो विचार । तिससँ होवैहै ॥

इति आदिचारचन्द्रोदये प्रपंचारोपापवाद वर्णननामिका द्वितीयकला समाप्ता ॥ २ ॥

॥४२॥ यपका श्री ताके ज्ञानका बाधकरिके रज्जु रूप अधिष्ठनक अवशेषकी न्याहै । प्रपंच श्री त के ज्ञानका बाधकरिके अधिष्ठानरूप शुद्धब्रह्मका जो अवशेष । सो अपवाद है ॥

॥ अथ तृतीयकलाप्रारंभः ॥ ३ ॥

॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥

॥ मनहर छन्द ॥

द्रष्टा तीनदेहको मैं स्थूल सूक्ष्म कारण ये
तीनदेह दृश्य अरु अनात्मा मानियो ॥

पंचीकृतपंचभूतके पचीसतत्त्वको
स्थूलदेह एह भोगआयतन मानियो ॥

अपंचीकृतभूतके सप्तदशतत्त्वको
सूक्ष्मदेह होइ भोगसाधन प्रमानियो ॥

अज्ञान कारणदेह घटवत दृश्य एह ।

पीतांबर द्रष्टा आप जानि दृश्य मानियो

* ३६ प्रश्नः-पहिली प्रक्रिया । “ देह तीनका मैं
द्रष्टा हूं ” ॥ सो देह तीन कौनसे हैं ?

उत्तर:—स्थूलदेह सूक्ष्मदेह और कारण देह । ये देह तीन हैं

॥ १ ॥ स्थूल देह का मैं द्रष्टा हूँ ॥

* ४० प्रश्न:—स्थूलदेह सो क्या है ?

उत्तर:—पञ्चीकृतपञ्चमहाभूतके पञ्चीस-तत्त्वनामका स्थूलदेह है ।

* ४१ प्रश्न:—पञ्चमहाभूत कौनसे हैं ?

उत्तर:—आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी । ये पञ्चमहाभूत हैं ।

* ४२ प्रश्न—पञ्चमहाभूत के पञ्चीसतत्त्व नाम पदार्थ कौनसे हैं ?

उत्तर:—

१-५ आकाश के पाँचतत्त्व:—काम^{४३}, क्रोध शोक, मोह^{४४} औ भय ।

॥ ४३ ॥ कोई भी भोगकी इच्छा । काम कहिये है ॥

॥ ४४ ॥ अहंतामनसारूप छुदि । मो मोह है ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ३१

- ६-१० वायुके पांचतत्त्वः—चलन, बलन,
धावन, प्रसारण और आकुंचन ॥
- ११-१५ तेजके पांचतत्त्वः—जुधा, तृणा,
आलस्य, निद्रा, औ कांति ।
- १६-२० जलके पांचतत्त्वः—शुक्र कहिये
वीर्य । शोणित नाम रुधिर । लाल ।
मूत्र औ स्वेद कहिये पसीना ।
- २१-२५ पृथ्वीके पांचतत्त्वः—अस्थि नाम
हाड, मांस, नाडी, त्वचा औ रोम ।
- ये पंचमहाभूतके पचीसतत्त्वके नाम हैं ।
- * ४३ प्रश्नः—पंचीकृतपंचमहाभूत कौनकं कहिये?
उत्तरः—जिन भूतनका पंचीकरण^{४५} भया
है तिनभूतनकूं पंचीकृतपंचमहाभूतकहिये हैं ।

॥ ४५ ॥ प्रथम अपंचीकृतपञ्चमहाभूत थे । तिनका
ईश्वरकी इच्छासे स्थूलसृष्टिद्वारा जीवनके भोगश्चर्य
परस्परमिलापरूप पंचीकरण भया है ।

४४ प्रश्न - पचीकरण सो क्या है ?

उत्तर — पचभूतनमेंसँ एकएक के दोदोभाग किये । सो भये दश ॥ तिनमेंसँ पहिले पाचभाग रहनेदिये औ दूसरेपाचभागनमेंसँ एकएकभागके च्यारीच्यारीभाग किये ॥ सो च्यारीच्यारी भाग । शाकाशादिकभूतनका आपआपका जो अर्धअर्धमुख्यभाग रहनदिया है । तिसविषै न मिलायके आपआपमें भिन्न च्यारीभूतनके अर्धअर्धभागनविषै मिले । सो पचीकरण कहियेहै ॥

* ४५ प्रश्न पाचभूतनका परस्परमिलाण किम रीतिसँ है ?

उत्तर — दृष्टान्तः— जैसे कोइक पाचभिन्न । आवमलाआदिक एकएक फलकू इकठ्ठे खानैलागे तब सर्व आपआपके फलके दोदोभाग करीने - अर्धअर्धभाग आपने वास्ने रये औ अवशेष

कला] देह तीनका मैं दृष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ३३

अर्धअर्धभागमें लें च्यारीच्यारीभाग करीके च्यारी-
मित्रनकूं विभाग करोदेवैं । तब पाँचफलनका
परस्परमिलाप होवैहै । तैसैं

सिद्धान्तः—

१ आकाशके दोभाग किये । तिनमेंसैं

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमेंसैं आकाशविषै न मिले । औ

[१] एक वायुविषै मिले ।

[२] एक तेजविषै मिले ।

[३] एक जलविषै मिले । अरु

[४] एक पृथ्वीविषै मिले ॥

२ ऐसैहीं वायुके दोभाग किये । तिनमेंसैं

१) एक भाग रहनैदिया । औ

- (२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।
 तिनमेंसँ वायुविपै न मिले । औ
- [१] एक आकाशविपै मिले ।
 [२] एक तेजविपै मिले ।
 [३] एक जलविपै मिले । अरु
 [४] एक पृथ्वीविपै मिले ।

३ ऐसेही तेजके दोभाग किये । तिनमेंसँ

- (१) एकभाग रहनैदिया । औ
- (२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।
 तिनमेंसँ तेजविपै न मिले । औ
- [१] एक आकाशविपै मिले ।
 [२] एक वायुविपै मिले ।
 [३] एक जलविपै मिले । अरु
 [४] एक पृथ्वीविपै मिले ।

४ ऐसैहीं जलके दोभाग किये । तिनमेंसँ

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमेंसँ जलविषै न मिले । औ

[१] एक आकाशविषै मिले ।

[२] एक वायुविषै मिले ।

[३] एक तेजविषै मिले । अरु

[४] एक पृथ्वीविषै मिले ।

५ ऐसैहीं पृथ्वीके दो भाग किये । तिनमेंसँ

(१) एकभाग रहनैदिया । औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।

तिनमेंसँ पृथ्वीविषै न मिले । औ

[१] एक आकाशविषै मिले ।

[२] एक वायुविषै मिले ।

[३] एक तेजविषै मिले । अरु

[४] एक जलविषै मिले ।

इसरीतिसें पचीसतत्त्व होयके पञ्चमहाभूतन
कापरम्परामिलाप हे ॥

* ४६ प्रश्न - पचमहाभूतनके पचीसतत्त्व कैसें भये?

उत्तर:—सर्वभूतनका आपका एकएक मुख्य
भागहूया अमुख्यच्यारीभाग अन्यभूतनके मिलेहू॥
तिसत एकएकभूतनक पाचपाचतत्त्व भये । सो
सर्वमिलिक पचीसतत्त्व भये ॥

* ४७ प्रश्न स्थूलदेहविषये ये पचीसतत्त्व कैसें
रहतह ?

उत्तर —

१-५ ४१ आकाशक पांचतत्त्व:- (१) शोक

(२) काम (३) क्रोध (४) मोह श्री

(५) भय । अननमम

। ४२ । बाह्य देहविषयिणिरुक्ते ह्य उदर कटिदश
तत्त्वकाश यथाकाशक पाचतत्त्व हे । तिसरे

- १ शिरोदेशगतआकाश आकाशका मुख्यभाग है
अनाहतशब्दका आश्रय होनैतै ॥
- २ कंठदेशगतआकाश वायुका भाग है । श्वासप्रश्वासका
आश्रय होनैतै ॥
- ३ हृदयदेशगतआकाश तेजका भाग है । पित्तका आश्रय
होनैतै ॥
- ४ उदरदेशगतआकाश जलका भाग है । पान किये
जलका आश्रय होनैतै ॥
- ५ कटिदेशगतआकाश पृथ्वीका भाग है । गन्धका
आश्रय होनैतै ॥

इसरीतिसे कामक्रोधादिक स्थूलदेहके तत्त्व नहीं । किन्तु
लिंगदेहके धर्म हैं श्री अन्यग्रन्थनकी रीतिसे तो कामादिक
लिंगदेहके मुख्यधर्म हैं श्री स्थूलदेहविषे घटमें जलकी
शीतलताके आदेशकी व्यांई इनका आदेश होवैहै । यातै
स्थूलदेहके श्री गौणधर्म कहियेहैं ॥

इसरीतिसें पचीसतरय होयके पञ्चमहाभूतन
कापरम्परामिलाप ह ॥

* ४६ प्रश्न - पचमहाभूतनके पचीसतरय कैसें भये?

उत्तर:—सर्वभूतनका आपका एकरूपक मुख्य
भागहूँ और अमुख्यच्यारीभाग अन्यभूतनके मिलेहूँ ॥
तिसतं एकएकभूतके पाचपाचतरय भये । सो
सर्वमिलिके पचीसतरय भये ॥

* ४७ प्रश्न - स्थूलदेहविषै ये पचीसतरय कैसें
रहतेहैं ?

उत्तर.—

१-५ ४१ आकाशके पांचतरय:— (१) शोक

(२) काम (३) क्रोध (४) मोह और
(५) भय । तिनममें

॥ ४६ ॥ कोई प्रथमविषै शिर कठ हृदय उदर कटिदेश-
गत आकाश । य आकाशके पाचतरय ह । तिनमें

मिल्या है। काहेतैं कामनारूप वृत्ति चंचल है औ वायु वी चंचल है। यातैं यह वायुका भाग है।

(३) क्रोधः—आकाशविषै तेजका भाग मिल्या है। काहेतैं क्रोध आवता है तब शरीर तपायमान होता है औ तेज वी तपायमान है। यातैं यह तेजका भाग है ॥

(४) मोह—आकाशविषै जलका भाग मिल्या है। काहेतैं मोह पुत्रादिकविषै प्रसरता है औ जलका विटु वी प्रसरता है। यातैं यह जलका भाग है।

(५) भयः—आकाशविषै पृथ्वीका भाग मिल्या है। काहेतैं भय होवै तब शरीर जड कहिये अक्रिय होयके रहता है औ पृथ्वी वी जड़तास्वभाववाली है। यातैं यह पृथ्वीका भाग है।

(१) *श्लोकः—आकाश का मुख्यभाग है।
 काहेतें शोक उत्पन्न होयै तब शरीर शून्य
 जैसा होयैहे श्री आकाश वी शून्य जैसा
 हे । यातें यह आकाशका मुख्यभागहै ॥

(२) *कामः—आकाशविषे वायुका भाग

॥ ४७ ॥ यद्यपि वायुआदिकभूतनके भागनविषे वी
 आकाशके अन्वेषारीभाजनमेंवै एकएकभाग मिल्ल
 हे । सो आकाशका मुख्यभाग नहीं कहियेहे । तथापि
 शोक श्री आकाशकी अतिशयतुल्यता हे । यातें शोक
 आकाशका मुख्यभाग हे ।

कहिंऊ लोभ वी आकाशकी न्याई पदार्थकी प्राप्ति
 करि अपूर्ण हानैतै आकाशका मुख्यभाग कहाहे ॥

इस रीतिसें अन्व भूतनविषे वी जानि लेना ।

॥ ४८ ॥ पिताके तुल्य पुत्रकी न्याई । काम । वायुके
 तुल्य हे । यातै वायुका भाग हे । ऐसें अन्वतत्त्वनविषे
 वी जानि लेना ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४१

(६) चलनः-वायुविषै जलका भाग
मिल्याहै । काहेतैं चलन नाम चलनैका है
औ जल वी चलताहै । यातैं यह जलका
भाग है ।

(१०) आकुंचनः-वायुविषै पृथ्वीका भाग
मिल्याहै । काहेतैं आकुंचन नाम संकोच
करनैका है औ पृथ्वी वी संकोचकूं पायी
हुयी है । यातैं यह पृथ्वीका भाग है ।

११-१५ तेजके पांचतत्त्वः-[११]

निद्रा [१२] तृषा [१३] जुधा [१४]
कांति और [१५] आलस्य । तिनमेंसैं

(११) निद्राः-तेजविषै आकाशका भाग
मिल्याहै । काहेतैं निद्रा आवे तत्र शरीर
शून्य होवैहै औ आकाश वी शून्यतावाला
है । यातैं यह आकाशका भाग है ।

६-१० वायुके पांचतत्त्वः-[६] प्रसारण
 [७] धावन [८] चलन [९] चलन शी
 [१०] आकुंचन । तिनमेंसें

(६) प्रसारणः-वायुविषै आकाशका भाग
 मिल्याहै । काहेतै प्रसारण नाम प्रसरनैका
 है श्री आकाश वी प्रसरण हुवाहै । यातै
 यह आकाशका भाग है ॥

(७) धावनः-वायुका मुख्यभाग है ।
 काहेतै धावन नाम दौड़नैका श्री वायु
 वी दौड़ता है । यातै यह वायुका मुख्य-
 भाग है ।

(८) चलनः-वायुविषै तेजका भाग मिल्या
 है । काहेतै चलन नाम अङ्गके चलनैका
 है । श्री तेजका प्रकाश वी चलताहै ।
 यातै यह तेजका भाग है ॥

१६-२० जलके पांचतत्वः- [१६]

ल [१७] स्वेद [१८] मूत्र [१९]

त औ (२०) शोणित । तिनमेंसँ

(१६) लालः-जलविषै आकाशका भाग
मिल्याहै । काहेतँ लाल ऊंचा नीचा होवै
है आकाश वी ऊंचा नीचा है । यातँ
यह आकाशका भाग है ।

(१७) स्वेदः-जलविषै वायुका भाग मिल्या-
है । काहेतँ पसीना श्रम करनसँ होवैहै
औ वायु वी पंखाआदिकसँ श्रम करनसँ
होवैहै । यातँ यह वायु का भाग है ।

(१८) मूत्रः-जलविषै तेजका भाग मिल्याहै ।
काहेतँ घर्म है औ तेज वी घर्म है ।
यातँ यह तेजका भाग है ।

(१) शुक्रः-जलका मुख्यभाग है ! काहेतँ

- (१२) तृषाः तेजविरै वायुका भाग मिल्या-
 है । काहेतें तृषा फंडकूं शोषण करैहै औ
 वायु की गीलेयखादिककूं सुकावैहै ।
 यातें यह वायुका भाग है ।
- (१३) क्षुधाः—तेजका मुख्य भाग है । काहे
 तें क्षुधा लगे तब जो खाये सो भस्म होवैहै
 औ अग्निविरै की जो डारै सो भस्म
 होवैहै । यातें यह तेजका मुख्यभाग है ।
- (१४) कान्तिः—तेजविरै जलका भाग मिल्या-
 है । काहेतें कान्ति धूपसैं घटैहै औ जल की
 धूपसैं घटैहै । यातें यह जलका भाग है ।
- (१५) आलस्यः—तेजविरै पृथ्वीका भाग
 मिल्याहै । काहेतें आलस्य खाये तब शरीर
 जड होय जायैहै और पृथ्वी की जडस्यमातै-
 पाली है । यातें यह पृथ्वीका भाग है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४५

(२२) त्वचा:—पृथ्वीविषै वायुका भाग मिला है । काहेतै त्वचासँ शीत उष्ण कठिन कोमल स्पर्शकी मालुम होवै है औ वायु वी स्पर्शगुणवाला है । यातँ यह वायुका भाग है ।

(२३) नाडी:—पृथ्वीविषै तेजका भाग मिला है काहेतै नाडीसँ तापकी परीक्षा होवै है । औ तेज वी तापरूप है । यातँ यह तेजका भाग है ॥

(२४) मांस:—पृथ्वीविषै जलका भाग मिला है । काहेतै मांस गीला है औ जल वी गीला है । यातँ यह जलका भाग है ।

(२५) ५० अस्थि:—पृथ्वीका मुख्य भाग है ।

॥ ५० ॥ नख औ दंतनका हड्डीमें अंतर्भाव है ॥

शुक्र श्वेतवर्ण है औ गर्भका हेतु है औ
जल भी श्वेतवर्ण है औ वृक्षका हेतु है।
याने यह जलका मुख्य भाग है।

(२) शोणितः जलविषै पृथ्वीका भाग
मिल्याहै। काहेतें शोणित रक्तवर्ण है औ
पृथ्वी की कटिक रक्त है। याने यह
पृथ्वीका भाग है।

२१-२५ पृथ्वीके पांचनत्वः-[२१]

रोम [२२] त्वचा [२३] नाडी [२४]
मान्। और [२५] अस्थि। तिनमें

(२२) ४२रोम'-पृथ्वीविषै आकाशका भाग
मिल्याहै। काहेतें रोम शून्य है। काट-
नेमें पाड़ा होयै नहीं औ आकाश की
शून्य है। याने यह आकाशका भाग है।

॥४६॥ कण जो मस्तकके पास। ताका रोम नाम
शरीरके बाह्यविषै अन्तर्भाव है।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४५

(२२) त्वचा:—पृथ्वीविषै वायुका भाग मिला है । काहेतैं त्वचासँ शीत उष्ण कठिन कोमल स्पर्शकी मालुम होवै है औ वायु वी स्पर्शगुणवाला है । यातैं यह वायुका भाग है ।

(२३) नाडी:—पृथ्वीविषै तेजका भाग मिला है काहेतैं नाडीसँ तापकी परीक्षा होवै है । औ तेज वी तापरूप है । यातैं यह तेजका भाग है ॥

(२४) मांस:—पृथ्वीविषै जलका भाग मिला है । काहेतैं मांस गीला है औ जल वी गीला है । यातैं यह जलका भाग है ।

(२५) ५० अस्थि:—पृथ्वीका मुख्य भाग है ।

॥ ५० ॥ नख औ दंतनका हड्डीसँ अंतर्भाव है ॥

काहेनै कठिनहै औ पीतवर्ण है औ पृथ्वी
 भी कठिन है अरु कर्दाक पीतरगवाल
 है । यानै यह पृथ्वी का मुख्यभाग है

इसरीतिसँ स्थूलदेहविषै पचीस तत्व रहतै

* ४७ प्रश्न - पचीसतत्त्व जाननैका क्या प्रयोजन है

उत्तर :-

१ पचीसतत्त्व में नहीं । औ

२ ये पचीसतत्त्व मेरे नहीं ।

३ ये पचीसतत्त्व पचीरृतपचमहाभूतके हैं ॥

४ इन पचीसतत्त्वनका जाननैद्वारा मैं डा
 घटद्रष्टाकी न्यारै इनतै न्यारा हूँ ।

एसा निश्चय करना । यह पचीसतत्त्व जाननै
 का प्रयोजन है ॥

* ४८ प्रश्न - 'पचीसतत्त्व में नहीं औ ये मेरे न
 सो किसरीतिसँ जानना ?

उत्तर: —

१-५ आकाशके पांचतत्त्वविषै:—

- १ [१] शोक होवै तव वी मैं जानताहूँ । औ
[२] शोक न होवै तव तिसके अभावकूं
वी मैं जानताहूँ ।

यातैं

- [१] यह शोक मैं नहीं । औ
[२] यह शोक मेरा नहीं ।
[३] यह शोक आकाशका है ।
[४] मैं इस शोकका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूँ ॥

ऐसैं शोक मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

- २ [१] काम होवै तव वी मैं जानताहूँ । औ
[२] काम न होवै तव तिसके ५१अभावकूं
वी मैं जानताहूँ

॥ ५१ ॥

१ कार्यकी उत्पत्तिसैं पूर्व जो अभाव । सो प्रागभाव है

यातै

[१] यह काम मैं नहीं । श्री

[२] यह काम मेरा नहीं ।

[३] यह काम आकाशका है ।

[४] मैं इस कामका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टा की न्याई इसनै नशरा ह ॥

ऐसैं काम मैं नहीं श्री मेरा नहीं । यह जानना ।

३[१] प्रोध होयै तव धी मैं जानताहं । श्री

[२] मोध न होयै तव निसके अभावकूं धी
मैं जानता हूं ।

यातै

२ नाशके अन्तर जो अभाव सो प्रध्व साभाव है ॥

३ तै नशालयै जो अभाव सो अत्यन्ताभाव है ॥

४ अन्यवस्तुसैं जो अन्वयस्तुका भेद । सो अन्यो-
न्याभाव है ५

हमतीतिर्षे अभाव च्यारीप्रकारका है ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ४६

[१] यह क्रोध मैं नहीं । औ

[२] यह क्रोध मेरा नहीं ।

[३] यह क्रोध आकाशका है ।

[४] मैं इस क्रोधका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ॥

ऐसैं क्रोध मैं नहीं औ मेरा नहीं यह जानना ॥

४ [१] मोह होवै तव वी मैं जानताहूँ । औ

[२] मोह न होवै तव तिसके अभावकूं वी मैं जानता हूँ ।

यातैं

[१] यह मोह मैं नहीं । औ

[२] यह मोह मेरा नहीं ।

[३] यह मोह आकाशका है ।

[४] मैं इस मोहका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ॥

ऐसैं मोह मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

- ५ [१] भय होवे तब धी में जानताहूँ । श्री
 [२] भय न होवे तब तिसके अभावकू धी में जानताहूँ ।

यातें

- [१] यह भय मैं नहीं । श्री
 [२] यह भय मेरा नहीं ।
 [३] यह भय आकाशका है ।
 [४] मैं उस भयका जाननेद्वारा द्रष्टा घट
 द्रष्टाकी न्यारें हसतें न्यारा हूँ ॥
 ऐसे भय मैं नहीं और मेरा नहीं । यह जानना ॥

६-१० वायुके पाचतत्त्वविषै -

- ६ [१] प्रसारण -शरीर प्रसरै तब धी में
 जानताहूँ । श्री
 [२] शरीर न प्रसरै तब तिस प्रसरणेके
 अभावकू धी में जानताहूँ ।

यातें

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ५१

[१] यह प्रसारण मैं नहीं । औ

[२] यह प्रसारण मेरा नहीं ।

[३] यह प्रसारण वायुका है ।

[४] मैं इस प्रसारणका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं प्रसारण मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

७ [१] धावनः—शरीर दौडै तव वी मैं
जानताहूं । औ

[२] शरीर न दौडै तव तिस दौडनैके
अभावकूं वी मैं जानताहूं । यातैं

[१] यह धावन मैं नहीं । औ

[२] यह धावन मेरा नहीं ।

[३] यह धावन वायुका है ।

[४] मैं इस धावनका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं धावन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

८ [१] चलनः--शरीर-चलै तव धी में जानताह । औ

[२] शरीर न-चलै तव तिस-चलनैके श्रमा
घरू धी में जानताह ।

यातै

[१] यह चलन मैं नहीं । औ

[२] यह चलन मेरा नहीं ।

[३] यह चलन वायुका है ।

[४] मैं इस चलनका जाननैद्वारा द्रष्टा घट-
दृष्टकी न्याई इमनै न्यारा ह ॥

येसै चलन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

९ [१] चलन --शरीर चलै तव धी में जानताह । औ

[२] शरीर न चलै तव तिस चलनैके
श्रमाघरू धी में जानताह ।

यातै

- [१] यह चलन मैं नहीं । औ
- [२] यह चलन मेरा नहीं ।
- [३] यह चलन वायुका है ।
- [४] मैं इस चलन का जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं चलन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

- १० [१] आकुंचनः — शरीर संकोचकूं पावै
तव वी मैं जानताहूं । औ
- [२] शरीर संकोचकूं न पावै तव तिसके
अभावकूं वी मैं जानताहूं । यातैं
 - [१] यह आकुंचन मैं नहीं । औ
 - [२] यह आकुंचन मेरा नहीं ।
 - [३] यह आकुंचन वायुका है ।
 - [४] मैं इस आकुंचनका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

सैं आकुंचन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

११-१५ तेजके पांचतन्वधिपैः—

- ११ [१] निद्रा होवै तिसकुं धी में जानताह । औ
 [२] निद्रा न होवै तय तिसके अभावकुं
 धी में जानताह ।

याति

- [१] यह निद्रा म नहीं । औ
 [२] यह निद्रा मेरी नहीं ।
 [३] यह निद्रा तेजकी है ।
 [४] में इस निद्राका जाननैद्वारा द्रष्टा
 घटद्रष्टाकी न्यारै इसतै न्यारा हूँ ॥

ऐसै निद्रा में नहीं औ मरी नहीं । यह जानना ॥

- १२ [१] तृषा लगै तिसकुं धी में जानताह । औ
 [२] तृषा न होवै तय तिसके अभावकुं
 धी में जानताह ।

याति

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ५५

[१] यह तृषा मैं नहीं । औ

[२] यह तृषा मेरी नहीं ।

[३] यह तृषा तेजकी है ।

[४] मैं इस तृषा का जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं तृषा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

१३ [१] जुधा लगै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] जुधा न होवै तव तिसके अभावकूं
वी मैं जानताहूं ।

यातैं

[१] यह जुधा मैं नहीं । औ

[२] यह जुधा मेरी नहीं ।

[३] यह जुधा तेजकी है ।

[४] मैं इस जुधा का जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं जुधा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

- १४ [१] कांति होवे तिसकू यी में जानता
हू । औ
- [२] काति न होवे तय तिसके अभावकू यी
में जानताहू ।

घाति

- [१] यह काति मं नहीं । औ
- [२] यह काति मेरी नहा ।
- [३] यह काति तेजकी है ।
- [४] म इस कातिका जाननैहारा द्रष्टा घट
द्रष्टाकी न्याई इसत न्यारा हू ॥

ऐस काति मं नहा औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

- १५ [१] आलस्य होवे तिसकू यी में
जानताहू । औ
- [२] आलस्य न होवे तय तिसके अभावकू
यी में जानताहू ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ५७

[१] यह आलस्य मैं नहीं । औ

[२] यह आलस्य मेरा नहीं ।

[३] यह आलस्य तेजका है ।

[४] मैं इस आलस्यका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इसतै न्यारा हूँ ॥

ऐसैं आलस्य मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१६-२० जलके पांचतत्त्वविषै:-

१६ [२] लाल गिरे तिसकूँ वी मैं जानताहूँ । औ

[२] लाल न गिरे तव तिसके अभावकूँ
वो मैं जानताहूँ । यातै

[१] यह लाल मैं नहीं । औ

[२] यह लाल मेरा नहीं ।

[३] यह लाल जलका है ।

[४] मैं इस लालका जाननैहारा द्रष्टा घट
द्रष्टाकी न्याई इसतै न्यारा हूँ ॥

ऐसैं लाल मैं नहीं औ मेरा नहीं ! यह जानना ॥

१७ [१] स्वेद नाम प्रसीना होवै तिसकूं वी
मं जानताहूँ । श्री

[२] प्रसीना न होवै तव तिसके अभाव-
कूं वी में जानताहूँ ।

याते

[१] यह प्रसीना में नहीं । श्री

[२] यह प्रसीना मेरा नहीं ।

[३] यह प्रसीना जलका है ।

[४] मैं इस प्रसीनेका जाननेद्वारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यारि इसलिये न्यारा हूँ ।

एसें स्वेद में नहीं श्री मेरा नहीं । यह जानना ।

१८ [१] मूत्र श्रावै तिसकू मं जानताहूँ । श्री

[२] मूत्र न श्रावै तव तिसके अभाव
कू वी में जानताहूँ ।

याते

- १० [१] शोणित नाम रुधिर शरीरविषै घटै ।
 तिसकू वी मैं जानताहू । औ
 [२] रुधिर घटै तब तिसके श्रभावकू वी
 मैं जानताहू ।

यातै

- [१] यह रुधिर मैं नहीं । औ
 [२] यह रुधिर मेरा नहीं ।
 [३] यह रुधिर जलका है ।
 [४] म इस रुधिरका जाननैद्वारा द्रष्टा
 घटद्रष्टाकी न्याई इननै न्याराहू ।

ऐसे शोणित मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानता ।

२१-२५ पृथ्वीके पाचतत्त्वविषैः—

- २१ [१] राम बहुत होवै तिनकू वी मैं
 जानताहू । औ
 [२] रोम कमती होवै तब तिनके कमती
 पनैकू वी मैं जानताहू । यातै

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ६१

[१] ये रोम मैं नहीं । औ

[२] ये रोम मेरे नहीं ।

[३] ये रोम पृथिवीके हैं ।

[४] मैं इन रोमनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याईं इनतैं न्यारा हूँ ।

ऐसैं रोम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

२२ [१] त्वचा स्पर्शकृं ग्रहण करै तिसकृं वी
मैं जानताहूँ । औ

[२] स्पर्शकृं ग्रहण न करै तव तिसके
अभावकृं वी मैं जानताहूँ । यातैं

[१] यह त्वचा मैं नहीं । औ

[२] यह त्वचा मेरी नहीं ।

[३] यह त्वचा पृथिवीकी है ।

[४] मैं इस त्वचाका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याईं इसतैं न्यारा हूँ ।

ऐसैं त्वचा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ।

२३ [१] नाडी गले तिमक की में जानताहैं

[२] नाडी न चले तब तिमके अभाव
की में जानताह । यों

[१] ये नाडी में नहीं । थी

[२] ये नाडी मेरी नहीं ।

[३] ये नाडी पृथ्वीकी है ।

[४] मैं इन नाडीनका जाननेद्वारा इष्टा ५
इष्टाकी न्याई इनने न्यारा ।

ऐस नाडी में नहीं थी मेरी नहीं । यह जान

२४ [१] मांस बढ़े तिमक की में जानताहैं

[२] मांस गटे तब तिमके अभाव
की में जानताह ।

यों

[१] यह मांस में नहीं । थी

[२] यह मांस मग नहीं ।

[३] यह मांस पृथ्वीका है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६३

[४] मैं इस मांसका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं मांस मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ।

२५ [१] अस्थि नाम हाड सूधे होवैं तिसकू'
वी मैं जानताहूं । औ

[२] हाड सूधे न होवैं तव तिनके अभाव-
कू' वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) ये हाड मैं नहीं । औ

(२) ये हाड मेरे नहीं ।

(३) ये हाड पृथ्वीके हैं ।

(४) मैं इन हाडनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाको न्याई इनतैं न्याराहूं ।

ऐसैं हाड मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ।

इसरीतिसैं पन्चीसतत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह
जानना ।

* ४९ प्रश्न - "पचीसतरु में नहीं औ मेरे नहीं"

इस जाननेमें क्या निश्चय भया ?

उत्तर - स्मृतदेह औ निसरे धर्म १ नाम ।

२ जाति । ३ आश्रम । ४ वर्ण । ५ स्रग्ध ।
६ परिमाण । ७ जन्ममरण । इत्यादिक ही में
नहीं औ मेरे नहीं । यह निश्चय भया ।

* ५० प्रश्न - ? नाम में नहीं औ मेरा नहीं । यह
कैसे जानना ?

उत्तर -

- १ जन्ममें प्रथम नाम नहीं था । औ
- २ जन्मके अनंतर नाम कल्पित है । औ
- ३ शरीरके भिन्नभिन्न अंगनायिके विचार किये
नाम मिलता नहीं

गामें

- १ यह नाम में नहीं । औ
- २ यह नाम मरा नहीं ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ६५

३ यह नाम स्थूलदेहविषै कल्पित है ।

४ मैं इस नामका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी
न्याईं इसतै न्यारा हूँ ॥

एसैं नाम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

* ५१ प्रश्न:—२ जाति जो वर्ण सो मैं नहीं औ
मेरी नहीं । यह कैसेँ जानना ?

उत्तर:—

१ ब्राह्मणादिकजाति स्थूलदेहका धर्म है । सूक्ष्म-
देह औ आत्माका धर्म नहीं । काहेतै लिंगदेहऔ
आत्मा तौ जो पूर्वदेहविषै होवै सोई इस वर्त्त-
मानदेहविषै औ भावीदेहविषै रहताहै औ जाति
तौ जो पूर्वदेहविषै थी सो इस देहविषै नहीं है
औ जो इस देहविषै है सो आगिलेदेहविषै रहेगी
नहीं । यानै जातिस्थूलदेहकाही धर्म है ।
लिंगदेहका औ आत्माका धर्म नहीं है औ

२ शरीरके अद्भुतविषयै चिन्तारिके देखिये तो स्थूल
देहविषयै जाति मिलै नहीं ।

मानै

- १ यह जाति में नहीं । औ
- २ यह जाति मेरी नहीं ।
- ३ यह जाति स्थूलदेहविषयै आरोपित है ।
- ४ में इस जातिकी जाननेद्वारा ब्रह्मा घटदृष्टाकी
न्याई इसनै न्यारा ह ॥
- ऐसे जाति में नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥^१
- १ ५० प्रश्न - ३ आश्रम में नहीं औ मेरा नहीं ।
यह कैसा जानना ?

उत्तर —

- १ ब्रह्मचारी गृहस्थ धानप्रस्थ औ सन्यासी । ये
च्यारीआश्रम भिक्षुभिक्षुर्म्म करानेके लिये
आराधनिके स्थूलदेहविषयै मानैहैं ।
- २ जो भी मनुष्यमात्रविषयै सम्भवतै नहीं । यार्ति

- १ ये आश्रम मैं नहीं । औ
- २ ये आश्रम मेरे नहीं ।
- ३ ये आश्रम स्थूलदेहविषै आरोपित हैं ।
- ४ मैं इन आश्रमनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इनतै न्यारा हूँ ॥

ऐसै आश्रम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* पृ३ प्रश्न:-४ वर्ण नाम रंग मैं नहीं औ मेरे
नहीं । यह कैसै जानना ?

उत्तर:—

१ गौर श्याम रक्त पीत इत्यादि जो रङ्ग हैं ।

सो स्थूलदेहविषै प्रत्यक्ष देखियेहैं । औ

२ सो स्थूलदेह मैं नहीं । यातैं

१ ये रङ्ग मैं नहीं । औ

२ ये रङ्ग मेरे नहीं ।

३ ये रङ्ग स्थूलदेहके हैं ।

४ मैं इन रङ्गोंका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी
न्यांई इनतै न्यारा हूँ ॥

ऐसें वर्ग में नहीं श्री मेरे नहीं । यह जानना ।
 ६ पृष्ठ प्रश्न -५ सम्बन्ध में नहीं श्री मेरे नहीं ।
 यह कैसे जानना ?

उत्तर:—

- १ पितापुत्र गुरुशिष्य स्त्रीपुरुष स्वामितेवक ।
 इत्यादिसम्बन्ध स्थूलदेहके परस्पर प्रसिद्ध
 मिथ्या मानेहैं ।
- २ प्रियार क्रियेस मिलते नहीं । श्री
- ३ म स्थूलदेहसे न्यारा असङ्ग ह ।

गाने

- १ य सम्बन्ध म नहीं । श्री
 - २ य सम्बन्ध मर नहीं ।
 - ३ ये सम्बन्ध स्थूलदेहचिपे आरोपित हैं ।
 - ४ म इन सम्बन्धोंका जाननेहारा द्रष्टा पटद्रष्टा
 की न्यार ईनते न्यारा ह ॥
- एवं सम्बन्ध में नहीं श्री मेरे नहीं । यह जानना ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ६६

* ५५ प्रश्न:-६ परिणाम जो आकार सो मैं नहीं
औ मेरे नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर:—

- १ लंबाटूँका जाडापतला देहासूधा । इत्यादि-
आकार वी प्रसिद्ध स्थूलदेहविषै देखियेहैं । औ
- २ मैं स्थूलदेहतै न्यारा निराकार हूँ ।

यातै

- १ ये आकार मैं नहीं । औ
- २ ये आकार मेरे नहीं ।
- ३ ये आकार स्थूलदेहके हैं ।
- ४ मैं इन आकारोंका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टा
की न्याई इनतै न्यारा हूँ ॥

ऐसै परिणाम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ५६ प्रश्न:-७ मैं जन्ममरणवान नहीं औ मेरे
कूँ जन्ममरण होवै नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर —

१) आत्माका जन्म मानिये तो आत्मा अनित्य होवैगा । मो घात मोमांसकस आदिलेके परलोकयादी जे आस्तिक हँ । तिनकू एए नहीं । काहेतै जो आत्मा उत्पत्तिघान् होवै तो नाशघान् यी होवैगा । तातै

१) पूर्वजन्मविषै नहीं किणं कर्मसँ सुख-
दुःखका भोग । औ

२) इसजन्मविषै किये कर्मका भोगसँ
बिना नाश ।

ये दोदृषण होवैगे । गर्त कर्मवादीके मतसँ आत्माकू जा कर्त्ताभोक्ता मानिये । ती यी जन्ममरणरहितहीं मानना होवैगा । औ

२) आत्माके जन्मका कोई कारण यी सम्भवै नहीं । काहेतै आत्माका जो कारण होवै सो आत्मानै भिन्नहीं चाहिये औ

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ७१

(१) आत्मानें भिन्न तौ अनात्मा नामरूप हैं । सो तौ आत्माविषै रज्जुसर्पकी न्याई कल्पित हैं । यातैं कारण बनै नहीं । औ

(२) ब्रह्म तौ घटाकाशके स्वरूप महाकाशकी न्याई आत्माका स्वरूपही है । तिसतैं भिन्न नहीं । यातैं सो कारण बनै नहीं ।

तातैं आत्माका जन्म नहीं ॥ औ

३ जातैं जन्म नहीं तातैं आत्माका मरण भी नहीं । औ

४ जातैं आत्माविषै जन्ममरणका अभाव है । तातैं जायतैं [जन्म] । अस्ति (प्रगटता) वर्धते (वृद्धि) । विपरिणामते (विपरिणाम) अपक्षीयते (अपक्षय) । नश्यति (मरण) । इन षट्‌विकारनतैं बी आत्मा रहित है ॥

याते

- १ म जन्ममरणवान् नहीं । श्री
- २ मेरेकू जन्ममरण होवै नहीं ।
- ३ य जन्ममरण स्थूलदेहकू कर्मस होवैँ ।
- ४ म इन जन्ममरणोंका जाननैदारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इननै न्यारा ह ॥
- एस म जन्ममरणवान् नहीं श्री मेरेकू जन्म-
मरण होवै नहीं । यह जानना ॥

* ५७ प्रश्न - पंचमहाभूतनकी निवृत्तिविषै दृष्टात
क्या है ?

उत्तर:—दृष्टात:—जैसै कोईकू भूत
लग्याहोव । सो धान कूँनाम पारधीकू बुलायके।
डमरू यजायके। लवणादि पाच वस्तु मिलायके।
तिसका बलिदान देव । भूतकी निवृत्ति करैहै ।
सिद्धान्त -तैसे आकाशादिपंचमहाभूत-
शरीररूप होयके जीवकू लगेह । तिनकी निवृत्ति

कला] ॥ देह तीन का मैं द्रष्टा हूँ ॥३॥ ७३

स्ते ब्रह्मनिष्ठगुरुरूप ध्यानके १२विधिपूर्वक
रण जायके । वेदशास्त्ररूप डमरू कहिये डाक
जायके ऊपर कहे जो पचीसतत्त्व तिनमें सैं पांच-
गंचतत्त्वरूप बलिदान एकएकभूतकूं आप-
आपका भाग अर्पण करिके । मैं इन पचीसतत्त्वनका

॥ १२ ॥ विवेकादिशुभगुणसहित मोक्षकी इच्छा-
वाला अधिकारी

१ हाथमें भेटा लेके गुरुके शरण होयके ।

२ साष्टांग नमस्कार करीके ।

३ “ हे भगवन् ! मेरेकूं ब्रह्मविद्याका उपदेश करो ,”
ऐसैं कहिके “ बंध किसकूं कहिये ? मोक्ष किसकूं
कहिये ? अविद्या किसकूं कहिये ? औ विद्या
किसकूं कहिये ? इत्यादिप्रश्न करे । औ

४ गुरुकी प्रसन्नता वास्ते तन मन धन वाणी अर्पण-
वरिके सेवा करै ।

यह ब्रह्मविद्याके प्रहणका विधि है ।

द्रष्टा ह । इसरीतिसे निश्चय करनेसे स
 पचमहाभूतनकी २२ अक्षयतनिवृत्ति होती है ।
 इसरीतिसे स्थूलदेहका मैं द्रष्टा ह ।

॥ २ ॥ सूक्ष्मदेहका मैं द्रष्टा ह ।

• ५८ प्रश्न—सूक्ष्मदेह सो क्या है ?

उत्तर—अपचीयतपचमहाभूतके सतरातत्व
 तथा सूक्ष्मदेह है ।

• ५९ प्रश्न—सूक्ष्मदेहके सतरातत्व कौनसे हैं ?

उत्तर—१-५ पाचज्ञानइन्द्रिय । ६-१०

पाचकर्मइन्द्रिय । ११-१५ पाचप्राण । १६ मत्
 श्री १७ बुद्धि । ये सतरातत्व हैं ।

• ६० प्रश्न—२४ पाचज्ञानइन्द्रिय कौनसे हैं ?

उत्तर—१-५ आत्र त्वचा चक्षु जिह्वा
 श्री घ्राण । ये पाचज्ञानइन्द्रिय हैं ।

॥ २३ ॥ पाते लगे नहीं । यह अक्षयतनिवृत्ति है ।

॥ २४ ॥ इनके साधन इन्द्रिय ज्ञानइन्द्रिय है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३॥ ७५

* ६१ प्रश्न:-२५ पांचकर्मइन्द्रिय कौनसे हैं ?

उत्तर:-६-१० वाक् पाणि पाद उपस्थ
श्रो गुद । ये पंचकर्मइन्द्रिय हैं ।

* ६२ प्रश्न:-पांचप्राण कौनसे हैं ॥

उत्तर:-११-१५ प्राण अपान समान
उदान श्रो व्यान । ये पांचप्राण हैं ॥

* ६३ प्रश्न-मन कौनकूं कहिये ?

उत्तर:-१६ संकल्पविकल्प रूप जो वृत्ति ।
ताकूं मन कहिये ॥

* ६४ प्रश्न:-बुद्धि किसकूं कहिये ?

उत्तर:-१७ निश्चयरूप जो वृत्ति । ताकूं
बुद्धि कहिये ॥

* ६५ प्रश्न:-अपंचीकृतपंचमहाभूत कौनकूं कहिये ?

॥ २५ ॥ कर्मके साधन इन्द्रिय कर्मइन्द्रिय हैं ।

उत्तर — जिन भूतनका पूर्व कही रीतिमें पचीकरण न भयाहोवे ।

१ तिनभूतनक् अपचीकृतपचमह।भूत कहेहैं

२ तिनहोक् सूक्ष्मभूत कहेहैं । औ

३ तिनहोक् तन्मात्रा धी कहेहैं ॥

* ६६ प्रश्न — अपचीकृतपचमहामूतनके सतरा तरय केमें जानने ?

उत्तर:—

पांचजानइन्द्रिय औ पांचकर्मइन्द्रिय(विषे:);

१ आकाशके २६सत्त्वगुणका भाग औत्रहै

२ आकाशके २जोगुण का भाग चारु है ॥

[१] धात्रइन्द्रिय शब्दकू सुनना है । औ

[२] वाक्इन्द्रिय शब्दकू धारणहै ॥

[१] धोत्र ज्ञानइन्द्रिय है । औ

॥ २६ ॥ अपचमहामूतनमें सत्त्व रज तम । य तीन

गण बसतहैं ॥

कला] ॥ देह तीनको मैं दृष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ७७

[२] वाक् कर्मइन्द्रिय है ।

इन दोनूँकी मित्रता है ॥

३ वायुके सत्वगुणका भाग त्वचा है । औ

४ वायुके रजोगुणका भाग पाणि है ।

[१] त्वचाइन्द्रिय स्पर्शकं ग्रहण करैहै । औ

[२] हस्तइन्द्रिय तिसका निर्वाह करैहै ॥

[१] त्वचा ज्ञानेंद्रिय है । औ

[२] हस्त कर्मेंद्रिय है ॥

इन दोनूँकी मित्रता है ।

५ तेजके सत्वगुणका भाग चक्षु है ॥

६ तेजके रजोगुणका भाग पाद है ॥

[१] चक्षुइन्द्रिय रूपका ग्रहण करैहै । औ

[२] पादइन्द्रिय तहां गमन करैहै ॥

[१] चक्षु ज्ञानेंद्रिय है । औ

[२] पाद कर्मेंद्रिय है ॥

इन दोनूँकी मित्रता है ॥

७ जलके सत्वगुणका भाग जिब्हा है ।

८ जलके रजोगुणका भाग उपस्थ है ॥

[१] जिब्हाइन्द्रिय रसका ग्रहण करेहै । श्री

[२] उपस्थइन्द्रिय रसका त्याग करेहै ॥

[१] जिब्हा [रसना] ज्ञानेन्द्रिय है । श्री

[२] उपस्थ कर्मेन्द्रिय है ॥

इन दोनू की मित्रता है ॥

९ पृथिवीके सत्वगुणका भाग घ्राण है ।

१० पृथिवीके रजोगुणका भाग गुद है ॥

[१] घ्राणइन्द्रिय गंधका ग्रहण करेहै । श्री

[२] गुदइन्द्रिय गंधका त्याग करेहै ॥

[१] घ्राण ज्ञानेन्द्रिय है । श्री

[२] गुद [पायु] कर्मेन्द्रिय है ॥

इन दोनू की मित्रता है ॥

पांचप्राण औ मनबुद्धिविषै:-

११-१५ इन पांचभूतनके रजोगुणके भाग मिलिके पांचप्राण भयेहैं । औ

१६-१७ इन पांचभूतनके सत्त्वगुणके भाग मिलिके अंतःकरण भयाहै ॥ यहहीं अंतःकरण मन औ बुद्धिरूप है ॥ इहां चित्त औ अहंकारका मन औ बुद्धिविषै अंतर्भाव है ।

पेसैं अपंचीकृतपंचमहाभूतनके कार्य । सतरातत्त्व जानै ॥

* ६७ प्रश्न:-सतरातत्त्वके समजनैका क्या फल है ?

उत्तर:-सतरातत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये अपंचीकृतपंचमहाभूतनके हैं । यह सतरातत्त्वनके समजनैका फल है ।

* ६८ प्रश्नः—ये सतरातस्व में नहीं और मेरे नहीं ।

यह किस कारणसे जानना ?

उत्तरः—इन सतरातस्वनका में जाननेद्वारा
हैं ॥ जो जिसकूँ जानै सो तिसतेँ न्यारा दोरै-
दि । यह नियम है ॥ इस कारणसेँ ये सतरातस्व
में नहीं और मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ६९ प्रश्नः—इयविषै दृष्टांत क्या समझना ?

उत्तरः—

दृष्टान्तः—जैसे [१] नृप्यशालाविषै स्थित
[२] दीपक । [३] राजा । [४] प्रधान ।
[५] अनुचर [६] नायिका [७] याजंघ्री
औ [८] अन्य सभाके लोक [९] वे दंष्टेदोष
तय पी प्रकाशैदेँ और [१०] तय उठि जायेँ तय
शान्यगृहकूँ पी प्रकाशैदेँ ॥

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ =१

सिद्धान्तः—मैं [१] स्थूलदेहरूप नृत्य-
शालाविपै [२] सान्नीरूप जो मैं दीपकहूँ ।
[३] सो चिदाभासरूप राजा औ [४] मनरूप
प्रधान औ [५] पांचप्राणरूप अनुचर औ [६]-
बुद्धिरूप नायिका औ [७] दशइन्द्रियरूप
वाजंत्री औ [८] शब्दादिपंचविषयरूप सभाके
लोक [९] ये जाग्रत्स्वप्नसमयविपै होवें तब
इनकं प्रकाशताहूँ औ [१०] सुषुप्तिसमयविपै ये
नहोवें तब तिनके अभावकूं वा मैं प्रकाशताहूँ ।

इसविपै यह उक्त दृष्टांत समजना ॥

* ७० प्रश्नः—सौ कैसैं समजना ?

उत्तरः—

१ जाग्रत्स्वप्नस्थिति विपै इन्द्रिय-औ अंतःकरण
दोनूकी सहायतासैं मैं प्रकाशताहूँ कहिये

२ स्वप्नअवस्थाविषै इन्द्रियनसँ विना केवल
अत करणकी सहायतासँ में प्रकाशनाहँ । औ

३ सुषुप्तिअवस्थाविषै इन्द्रिय और अन्त.करण
दोनों की सहायता विना केवल मेंही प्रकाशना
ह । ऐसँ समजना ॥

* ७१ प्रश्न — इसविषै और दृष्टान्त क्या है ?

उत्तर:-दृष्टान्त:-जैसे [१] पांचछिद्र
वाले घटके भीतर पात्र तैल औ घर्तिसहित
दीपक जलता है । [२] सो दीपक । पात्र तैल
वन्ती घटके भीतरके अवयव औ घटके छिद्रनकं
प्रकाशनाहुआ घटकेबाहिर छिद्रनकेसन्मुखप्रमतँ
धरे जो घीणा । पुष्पनका गुच्छ । मणि । रस
पात्र औ । अक्षरकी सीसी । तिन सर्वकू छिद्र-
द्वारा प्रकाशनीहै औ [३] सूर्यरूपसे सारै
ब्रह्मण्डकू प्रकाशना है औ [४] महातेजमय
सामान्यरूपसँ सर्वव्यापी है ॥

कला] ॥ देह तीनका में द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ८३

सिद्धांतः— तैसैं [१] पांचज्ञानेंद्रियरूप छिद्रवाले स्थूलदेहरूप घटके भीतर हृदयकमलरूप पात्र है । तामें मनरूप तैल है औ बुद्धिरूप वत्ती है । तापर आरूढ़ आत्मारूप दीपक है ॥ [२] सो हृदयरूप पात्रकूं औ मनरूप तैलकूं औ बुद्धिरूप वत्तीकूं औ देहके भीतरके अवयवकूं औ इंद्रियरूप छिद्रनकूं प्रकाशता (जानता) हुआ । इंद्रियनसैं संबंधवाले शब्दादिकविषयनकूं वी इंद्रियद्वारा प्रकाशताहै औ [३] ईश्वररूपसैं ब्रह्मांडादिसर्वबाह्यप्रपंचकूं प्रकाशताहै औ [४] सामान्यचैतन्य ब्रह्मरूपसैं सर्वव्यापी है ॥ यह इसविषै और २७दृष्टांत है ॥

॥ २७ ॥ इहां और यज्ञशालाका दृष्टान्त है । सो आगे ७ वी कलाविषै उपद्रष्टारूप आत्माके विशेषणके प्रसंगमें कहियेगा ॥

* ७० प्रश्न —वेसँ कहनैसँ क्या निर्णय भया ?

उत्तर —ये कहे जे सतरातरय घे में नहौं
श्री ये मेरे नहौं । ये एवमहाभूतनके हैं ॥ में
इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इनसँ
न्यारा हू । यह निर्णय भया ।

* ७१ —सतरातरय में नहौं श्री मेरे नहौं । सो
कितरीतिसँ समझना ?

उत्तर —

॥ १-५ ॥ पाँचज्ञानइन्द्रियविषैः—

१ श्रेष्ठ —

[१] शब्दक् सुनै नितक् यी में जानताह ।

[२] न सुनै तय निस सुननैके अभाषक्
यी में जानताह ।

यानै यह श्रेष्ठ में नहौं श्री मेरा नहौं । यह
आशाशका है । में इनका जाननैद्वारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्याई इनसँ न्याग ह ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥ ८५

२ त्वचा:—

[१] स्पर्शकूं ग्रहण करै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] ग्रहण न करै तव तिस ग्रहण करनेके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह त्वचा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह वायुकी है । मैं इसका जाननेहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ।

३ चक्षु:—

[१] रूपकूं देखै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] न देखै तव तिस देखनेके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह चक्षु मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह तेजका है । मैं इसका जाननेहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ।

४ जिह्वा:—

[१] रसका स्वाद लेवै तिसकूं बी मैं जानताहू । औ

[२] स्वाद न लेवै तव तिस स्वाद लेनेके अभावकूं बी मैं जानताहू ।

यातें यह जिह्वा मे नह्य औ मेरी नहीं । यह जलकी है । मैं इसका जाननेहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसत न्यारा हू ।

५ घ्राण:—

[१] गंधका ग्रहण करै तिसकूं बी मैं जानताहू । औ

[२] न ग्रहण करै तव तिम ग्रहण करनेके अभावकूं बी मैं जानताहू ।

यात यह घ्राण मे नहीं औ मेरा नहीं । यह पृथ्वीका है । मैं इसका जाननेहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसत न्यारा हू ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ८७

॥ ६-१० ॥ पांचकर्महंद्रियविषैः—

६ वाक्ः—(वाचा)

[१] बोलै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] न बोलै तव तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह वाक् मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह आकाशकी है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ।

६ पाणिः—(हस्त)

[१] लेना देना करैं तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

[२] न करैं तव तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं ये हस्त मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये वायुके हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इनतैं न्यारा हूं ।

८ पाद'—

[१] चलें तिसकू धी में जानताहू । औ

[२] न चलैं तय तिसके अभावकू धी में जानताहू ।

यानें ये पाद में नहीं औ मेरे नहीं । ये लेजके हैं । मैं इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यारै इनतें न्यारा हू ।

९ उपस्थः--

[१] रस (भूष और वीर्य) का त्याग करै तिसकू धी में जानताहू । औ

[२] त्याग न करै तय तिसके अभावकू धी में जानताहू ।

यानें यह उपस्थ में नहीं औ मेरा नहीं । यह जलवा है । मैं इसका जाननैद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यारै इसतें न्यारा हू ।

कला] ॥ देह तीनको मैं द्रष्टा हूँ ॥ ३ ॥ ८६

१० गुदः—

[१] मलका त्याग करै तव तिसकूँ वी मैं जानताहूँ । औ

[२] त्याग न करै तव तिसके अभावकूँ वी मैं जानताहूँ ।

यातैं यह गुद मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह पृथ्वीका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूँ ।

॥११-१७॥ प्राण औ अंनःकरणविषै

११-१५ पांनप्राणः—

[१] क्रिया करै तिसकूँ वी मैं जानताहूँ । औ

[२] क्रिया न करै तव क्रियाके अभावकूँ वी मैं जानताहूँ ।

यातैं ये प्राण मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये मिले-हुये पंचमहाभूतनके हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इनतैं न्यारा हूँ ।

१६ मनः—

[१] सकल्पविकल्प करै तिसकु मैं जानताहूँ

[२] रुकल्पविकल्प न करै तब तिसके
श्रमायकू घी मैं जानताहूँ ।

यातँ यह मन मैं नहीं श्री मेरा नहीं । यह मिले
हुये पंचमहाभूतनका है । मैं इसका जाननैहारा
द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतँ न्यारा हूँ ।

१७ बुद्धि.—

[१] निश्चय करै तिसकु घी मैं जानताहूँ श्री

[२] निश्चय न करै तब तिसके श्रभावकू
घी मैं जानताहूँ ।

यातँ यह बुद्धि मैं नहीं श्री मेरी नहीं । यह मिले
हुये पंचमहाभूतनकी है । मैं इसका जाननैहारा
द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतँ न्यारा हूँ ॥

इस रीतिसँ ये सतरानत्य मैं नहीं श्री मेरे
नहीं । यह स्वमजना ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६१

* ७४ प्रश्न:-ऐसें कहनैसैं क्या भया ?

उत्तर:-

- १ लिंगदेह औ तिसके धर्म पुण्यपापका कर्त्तापना । तिनके फलसुखदुःखका भोक्तापना । औ
- २ इसलोक परलोकविषै गमनआगमन । औ
- ३ वैराग्यशमद्रमादिसात्विकीवृत्तियां औ रागद्वेषहर्षादिराजसीवृत्तियां । औ निद्राआलस्यप्रमादादितामसीवृत्तियां ।
- ४ तैसैं जुधातृषा अंधपनाआदि अरु मंदपना औ पटुपना

इत्यादिक मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह निश्चय भया ॥

* ७५ प्रश्न:-पुण्यपापका कर्त्ता औ तिनके फलसुखदुःखका भोक्ता मैं कैसें नहीं औ कर्त्तापना भोक्तापना मेरा धर्म नहीं । यह कैसें जानना ?

उत्तर:—१ जो वस्तु विकारी होवै सो जियावान् होनैतैं कर्त्ता कहिये है ॥ में निर्विकार कृत्स्य होनैतैं जियाका आशय नहीं । यानैं पुण्यपापरूप जियाका में कर्त्ता नहीं । औ जो कर्त्ता नहीं सो भोक्ता बी होवै नहीं । यानैं ये अत करणके धर्म ह । मेरे नहीं । में इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इनतैं न्यारा ह । ऐसैं जानना ॥

* ७६ प्रश्न -इसलोक परलोकजिपै गमनआगमन मेरे धर्म नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर —२ अतकरण (लिंगदेह) परिच्छिन्न है । तिसका प्रारब्धकर्मके चलसैं गमन-अगमन सभवे है औ में आकाशकी न्याई व्यापक ह । यानैं मेरे धर्म गमनआगमन नहीं । ऐसै जानना ॥

बला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६३

* ७७ प्रश्नः—सात्विकी राजसी औ तामसी
वृत्तियां मैं नहीं औ मेरा धर्म नहीं । यह
कैसे जानना ?

उत्तरः—३ दृष्टांत जैसे [१] किसी
महलमें बैठे [२] राजाके विनोदार्थ [३]
कोई कारीगर [४] कारंजा बनावैहै । [५]
तिस कारंजेकी कलके खोलनैसैं जलकी तीन-
धारा निकसतीयां हैं । [६] तिन तीनधाराके
भीतर प्रवाहरूपसैं अनंतधारा निकसतीयां
हैं । [७] जब सो कल बंध करिये तब तीन-
धारा बंध होयके अकेला राजाहीं बाकी रहता
है ।

सिद्धांतः—तैसे [१] स्थूलशरीररूप
महलमें [२] अधिष्ठान कूटस्थरूपकरि स्थित
परमात्मारूप राजा है । तिसके विनोदार्थ

[३] माया [अज्ञान] रूप कारागरनै [४] अंतःकरणरूप कारंजा किया है । [५] जाग्रत स्वप्नविषै तिसकी प्रारब्धरूप कलके खोलनैसँ तीनगुणके प्रवादरूप तीनधारा निकसतीयां हैं । [६] तिन तीनधाराके भीतरसँ अगाणित-वृत्तिपां उठतीयां हैं । [७] श्री सुषुप्तिविषै प्रारब्धकर्मरूप कलके बंध हुयेतँ तिन वृत्तियांके भावअभावका प्रकाशक आनंदस्वरूप केवलपर-मात्मारूप राजा बाकी रहताह ॥ सोई मैं हूँ । यातँ ये सात्विकी राजसी तामसी वृत्तिपां मैं नहीं श्री मेरी नहीं । ये अंतःकरणकी हैं । मैं इनका जाननैद्वारा द्रष्टा घट्टद्रष्टाकी न्याईं इनतँ न्यारा हूँ । ऐसँ जानना ॥

* ७८ प्रश्न:-अन्धपनाआदि अरु मन्दपना औ पटुपना मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह कैसे जानना ?

उत्तर:—४

- (१) नेत्रादिकइंद्रिय आपआपके विषयकूँ कछू वी ग्रहण न करै सो तिनका अन्धपनाआदि है । तिसकूँ वी मैं जानता हूँ । औ
- (२) विषयकूँ स्वल्प ग्रहण करै सो तिनका मन्दपना है । तिसकूँ वी मैं जानता हूँ । औ
- (३) विषयकूँ स्पष्ट ग्रहण करै सो तिनका पटुपना है । तिसकूँ वी मैं जानता हूँ ।

यातैं ये मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये इंद्रियनके धर्म हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याईं इनतैं न्यारा हूँ ॥

इसरीतिसैं सूक्ष्मदेहका मैं द्रष्टा हूँ ॥ २ ॥

॥ ३ ॥ कारणशरीरका मैं द्रष्टा हूँ ॥

* ७६ प्रश्न:-कारणदेह से क्या है ?

उत्तर:-

१ पुरुष जब सुपुत्रितें उठे तब कहताहै कि
“आज मैं कछू भी न जानताभया”^१इसमें
सुपुत्रिविषय अज्ञान है। ऐसा सिद्ध होवे-
है। श्री

२ जाग्रत्विषय की “ मैं ब्रह्मकं जानता नहीं ”
श्री ‘मेरी मुजकं खबर नहीं है।’ ‘मैं यह नहीं
जानताहूँ।’ ‘ मैं यह नहीं जानताहूँ’ इस
अनुभवका विषय अज्ञान है। श्री

॥ २८ ॥ सुपुत्रितें उठया जो पुरुष । तिसकं “ मैं
कछूभी न जानताभया ” ऐसा ज्ञान होवेहै । सो ज्ञान
अनुभवरूप नहीं है । किंतु सुपुत्रिकाकविषय अनुभव
किये अज्ञानकी स्मृति है । तिस स्मृतिका विषय
सुपुत्रिकाकविषय अज्ञान है ।

कला] ॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥३॥ ६७

३ स्वप्नका कारण वी निद्रारूप अज्ञान है ।

ऐसा जो अज्ञान २६कारणदेह है ।

* ८७ प्रश्न:-कारणदेह मैं नहीं औ मेरा नहीं ।

यह कैसें जानना ?

उत्तर:-“मैं जानताहूं” औ “ मैं न जानताहूं”
ऐसी जे अंतःकरणकी वृत्तियां हैं । तिनकूं

॥ २६ ॥

१ अज्ञान । स्थूलसूक्ष्मदेहका हेतु है । यातें इसकूं
कारण कहतैहैं ॥

२ तत्त्वज्ञानसें इस अज्ञानका दाह होवेहै । यातें इसकूं
देह कहतैहैं ॥

यह अज्ञान गर्भमंदिरके अन्धकारकी न्यांई ब्रह्मके
आश्रित होयके ब्रह्मकूंही आवरण करताहै ॥

घातश्रुतवस्तुरूप विषयसहित में जानताहूँ ।
 यानि यह कारणदेह में नहीं श्री मेरा नहीं । यह
 ६० अज्ञानका है । मैं इसका जाननेद्वारा द्रष्टा घट-
 द्रष्टाकी न्याई इसतै न्यारा हू । यह ऐमें
 जानना ॥

इसरीतिसैं कारणदेहका मैं द्रष्टा हू ॥ ३ ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये देहत्रयद्रष्टृ-
 घर्णनामिका तृतीयकला समाप्ता ॥३॥



॥ ६० ॥ कारणदेह आप अज्ञान है । तिसकूँ
 " अज्ञानका हूँ मैमें जो कया । सो जीवै राहुकूँही'
 राहुका मसनक कहतई । तै नै है ॥

॥ अथ चतुर्थकलाप्रारंभः ॥ ४ ॥



॥ मैं पंचकोशातीत हूँ ॥

॥ मनहर छन्द ॥

पंचकोशातीत मैं हूँ अन्न प्राण मनोमय
विज्ञान आनंदमय पंचकोश ६१नातमा ॥
स्थूलदेह अन्नमय-कोश ६२लिंगदेह प्राण-
मन रु विज्ञान तीनकोश कहें सातमा ॥
कारण आनंदमय-कोश ये ६३कारज जड ।
विकारी विनाशी व्यभिचारीहीं अनातमा
अज चित्त अविहारी नित्य व्यभिचारहीन
पीतांबर अनुभव करता मैं आतमा ॥४॥

* ८१ प्रश्न — पाचकोशातीत कहिये क्या ?

उत्तर — पाचकोशातीत कहिये पाचकोशनर्त में अतीत नाम न्यारा हू ॥

* ८२ प्रश्न — कोश कहिये क्या है ?

उत्तर:—

१ कोश नाम तलवारके म्यानका । औ

२ धनके भंडारका । औ

३ कोशकार नामक कीड़ेके गृहका है ॥

निगमी न्याई पाचकोश आमाकू ढापैहैं । यान
अनमयादिक वी काश कहायैहैं ॥

* ८३ प्रश्न — पाचकोशके नाम क्या हैं ?

॥ ८१ ॥ आत्मा नहीं । अथ यह जा अनारमा है ॥

॥ ८२ ॥ महारमा लिंगदेहक प्राण मन अरु विज्ञान
तीनकाशरू कहैहैं ॥

॥ ८३ ॥ पाचकोश ॥

ग्ला] ॥ में पञ्चकोशातीन हूँ ॥ ४ ॥ १०१

उत्तर:—१ अन्नमयकोश । २ प्राणमयकोश ।
३ मनोमयकोश । ४ विज्ञानमयकोश । औ
५ आनन्दमयकोश । ये पांचकोशके नाम हैं ।

* ८४ प्रश्न:—१ अन्नमयकोश सो क्या है ?

उत्तर:—

- १ मातापितानै खाया जो अन्न । तिसतैं भया
जो रजवीर्य । तिसकरि जो माताके उदरविपै
उत्पन्न होताहै ।
- २ फेर जन्मके अनंतर क्षीरादिकअन्नकरिके जो
वृद्धेकूं पावनाहै ।
- ३ फेर मरणके अनंतर अन्नमयपृथिवीविपै
लीन होताहै ।

ऐसा जो स्थूलदेह । सो अन्नमयकोश है ॥

* ८५ प्रश्न:—अन्नमयकोश कैसा है ?

उत्तर:—सुखदुःखके अनुभवरूप भोगका
स्थान है ॥

* ८६ प्रश्न—अन्नमयकोशमें मैं न्यारा हूँ। यह कैसे जानना ?

उत्तर:—

१ जन्ममें प्रथम औ मरणमें पीछे अन्नमयकोश (स्थूलशरीर) का अभाव है। यार्तें यह उत्पत्तिनाशवान् होनेमें घटकी न्यार्दें कार्य है। औ

२ में सदा भायरूप हू। तार्तें उत्पत्तिनाशरहित होनेमें इसमें विलक्षण हू।

यार्तें यह अन्नमयकोश में नहीं औ मेरा नहीं। यह स्थूलदेहरूप है। में इसका जाननेद्वारा आत्मा इसमें न्यारा हू ॥ इस रीतिसँ अन्नमयकोशमें मैं न्यारा हू। यह जानना ॥

* ८७ प्रश्न—२ प्राणमयकोश सो क्या है ?

उत्तर.—पाचकर्मइन्द्रियसहित पाच प्राण। सो प्राणमयकोश है ॥

कला] ॥ मैं पञ्चकोशातीत हूँ ॥४॥ १०३

* ८८ प्रश्न:-पांचकर्मइंद्रिय और पांचप्राण कौनसेहैं?

उत्तर:-पांचकर्मइंद्रिय और पांचप्राण पूर्व सूक्ष्मदेहकी प्रक्रियाविषय कहेहैं ॥

* ८९ प्रश्न:-पांचप्राणके स्थान और क्रिया कौनहैं ?

उत्तर:-

१ प्राणवायु:-

[१] हृदयस्थानविषय रहताहै । और

[२] प्रत्येकदिनरात्रिविषय २१६:० श्वास-
उच्छ्वास लेनेरूपक्रियाकैं करताहै॥

२ अपानवायु:-

[१] गुद्स्थानविषय रहता है । और

[२] मलमूत्रके उत्सर्ग (त्याग) रूप
क्रियाकैं करताहै ॥

३ समानवायु:-

[१] नाभिस्थानविषय रहताहै । और

- [२] कृपजलकं रगीचेविषै मालीकी न्याईं भोजन क्रिये अन्नके रसकं निष्ठासिके नाडीद्वारा सर्वशरीरविषै पहुचावनैरूप क्रियाकू करताहै ॥

४ उदानवायुः—

- [१] कंठस्थानविषै रहताहै श्री
[२] खाणपिण अन्नजलके विभागकं करताहै । तथा स्वप्न हीचकी आदिकके दिषावनैरूप क्रियाकू करताहै ।

५ अपानवायुः—

- [१] सर्वाङ्गस्थानविषै रहताहै । श्री
[२] सर्वअगनकी संधिनके फेरनैरूप क्रियाकू करताहै ॥

इसरीनिश्च पांचप्राणके मुख्यस्थान श्री क्रिया है ॥

* ६० प्रश्न:- प्राणादिवायु शरीरविषै क्या करते हैं?

उत्तर:- प्राणादिवायु

१ सारे शरीरविषै पूर्ण होयके शरीरकूँ बल देते हैं । औ

२ इन्द्रियनकूँ आपआपके कार्यविषै प्रवृत्तिरूप क्रियाके साधन होते हैं ॥

* ६१ प्रश्न:- प्राणमयकोशतैं मैं न्यारा हूँ । यह कैसे जानना ?

उत्तर:-

१ निद्राविषै पुरुष सोयाहोवै । तव प्राण जागता- है । तौ वी कोई स्नेही आवै तिसका सन्मान करता नहीं । औ

२ चोर भूषण लेजावै तिसकूँ निषेध करता नहीं ।

उत्तर:- तव प्राणमयकोश तवकी न्याई जड है । औ

में चैतन्यरूप इसमें विलक्षण है। यहाँ यह प्राणमयकोश में नहीं और मेरा नहीं। यह सूक्ष्म दृढरूप है ॥ मैं इसका जाननेद्वारा आत्मा इसमें न्यारा है। इसरीतिमें प्राणमयकोशमें मैं न्यारा हूँ। यह जानना ॥

* ६२ प्रश्न — ३ मनोमयकोश तो क्या है ?

उत्तर — पाचज्ञानइन्द्रियसहित मन। तो मनोमयकोश है।

* ६३ प्रश्न — ५ चक्षानइन्द्रिय और मन कौन है ?

उत्तर — ये पूर्व सूक्ष्मदेहकी प्रक्रियाविधि कहैहैं ॥

* ६४ प्रश्न — मन कैसा है ?

उत्तर — देहविषय अहता और गृहादिकर्मों ममत्तारूप अभिमानरूप करताहुवा इन्द्रियद्वारा बाहीर गमन करताहुवा कारणरूप है ॥

कला] ॥ मैं पञ्चकोशातीत हूँ ॥ ४ ॥ १०७

* ६५ प्रश्न:—मनोमयकोशतैं मैं न्यारा हूँ । यह किसरीतिसैं जानना ?

उत्तर:—

१ कामक्रोधादिवृत्तियुक्त होनैतैं मन नियमरहित-
स्वभाववाला है तातैं विकारी है । औ
मैं सर्ववृत्तिनका साक्षी निर्धिकार हूँ ।
तैं यह मनोमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं
हूँ सूक्ष्मदेहरूप है । मैं इसका जाननैहारा
आत्मा इसतैं न्यारा हूँ ॥ इसरीतिसैं मनोमय-
कोशतैं मैं न्यारा हूँ । यह जानना ॥

* ६६ प्रश्न:—४ विज्ञानमयकोश सो क्या है ?

उत्तर:—पांचज्ञानइंद्रियसहित बुद्धि । सो
विज्ञानमयकोश है ॥

* ६७ प्रश्न:—ज्ञानइंद्रिय औ बुद्धि कौन है ?

उत्तर:—ये पूर्व लिगदंडकी प्रक्रियात्रिपै
कहेहैं ॥

* ६३ प्रश्न — बुद्धि कैसी है ?

उत्तर:—

१ सुषुप्तिविरै चिदाभासयुक्त बुद्धि विलीन होचिहै । श्री

२ जाग्रतविरै नयके अग्रभागसँ लेके शिखा पर्यंत शरीरविरै व्यापिके वर्त्ततीहुयी कर्ता रूप है ॥

* ६६ प्रश्न:—विज्ञानमयकोशमें मे न्यारा हू । यह कैसे जानना ?

उत्तर —

१ बुद्धि । घटादिककी न्याई विलयआदिअवस्थावाली होनैतँ विनाशी है । श्री

२ में विलयआदिअवस्थारहित होनैतँ इमतेँ विलक्षण अविनाशी हँ ।

यानै यह विज्ञानमयकोश में नहीं श्री मेरा नहीं । यह सूक्ष्मदेहरूप है । में इसका जाननैहारा

आत्मा इसतै न्यारा हूं ॥ इसरीतिसै ६४विज्ञान-
मयकोशतै मैं न्यारा हूं । यह जानना ॥

* १०० प्रश्न:—५. आनंदमयकोश सो क्या है ?

उत्तर:—

१ पुण्यकर्मफलके अनुभवकालविषै कदाचिन्
बुद्धिकी वृत्ति अंतर्मुख हुयी आत्मस्वरूपभूत
आनंदके प्रतिविंबकूं भजतीहै । औ

॥ ६४ ॥

१ जैसे दीपकका प्रकाश औ आकाश अभिन्न प्रतीत
होवैहैं । तौ बी भिन्न है । औ

२ जैसे तप्तलोहविषै अग्नि औ लोह अभिन्न प्रतीत
होवैहैं । तौ बी भिन्न हैं ।

तैसे अन्तःकरण औ आत्मा अभिन्न प्रतीत होवैहैं तौ
बी भिन्न हैं । काहेतै सुषुप्तिविषै अन्तःकरणके लय हुवे
आत्माकूं अज्ञानका साक्षी होनैकरि प्रतीयमान होनैतै ।

२ जो प्रिय मोद प्रमोदरूप कहियेहै ।

३ सोई वृत्ति पुण्यकर्मफलके भोगकी निवृत्तिके
हुये निद्रारूपसँ धिलीन होयैहै ।

सो वृत्ति आनंदमयकोश है ॥

* १०१ प्रश्न — आनंदमयकोश कैसा है ?

उत्तर —

१ इष्टवस्तुके दर्शनसँ उत्पन्न प्रियवृत्ति जिसका
शिर है । औ

२ इष्टवस्तुके लाभसँ उत्पन्न मोदवृत्ति जिसका
एक (दक्षिण) पक्ष है । औ

३ इष्टवस्तुके भोगसँ उत्पन्न प्रमोदवृत्ति जिसका
द्वितीय (वाम) पक्ष है । औ

४ बुद्धि या अज्ञानकी वृत्तियिचै आत्मस्वरूपभूत
आनंदका प्रतिबिम्ब जिसका स्वरूप है । औ

५. विवरूप आत्माका स्वरूपभूत आनंद जिसका
६५ पुच्छ (आधार) है ।

ऐसा पक्षीरूप भोक्ता ६६ आनंदमयकोश है ॥

* १०२ प्रश्न:—आनंदमयकोशतैं में न्यारा हूं ।
यह किसीरीतिसैं जानना ?

उत्तर:—

१ आनंदमयकोश वादलआदिकपदार्थनकी न्यांई
कदाचित् होनैवाला है । यातैं क्षणिकहै । औ

२ में सर्वदा स्थित होनैतैं नित्य हूं ।

॥ ६५ ॥ ब्रह्मरूप आनंद आधार होनैतैं तैत्तिरीय-
श्रुतिविषै पुच्छशब्दकरि कहाहै ॥

॥ ६६ ॥ ऐसैं अन्वयारीकोशनकी पक्षीरूपता
अस्मत्कृत तैत्तिरीयउपनिषद्की भाषाटीकाविषै सविस्तर
लिखीहै । जाकूं इच्छा होवै सो तहाँ देखलेवै ।

यार्ते यह आनन्दमयकोश में नहीं औ मेरा नहीं ।
 यह कारणदेहरूप है । मैं इसका जाननेद्वारा
 आत्मा इसर्ते न्यारा हू ॥ इसरीतिसँ आनन्दमय
 फोशर्ते मैं न्यारा हू । यह जामना ॥

* १०३ प्रश्न — विद्यमानअन्नमयादिकोश जब
 आत्मा नहीं। तब कौन आत्माहै?

उत्तर —

१ बुद्धिआदिविषयै प्रतिबिम्बरूपमरि स्थित । औ

२ प्रियआदिकशब्दसँ कहियेहै ।

पेसा जो आनन्दमयकोश है । तिसका विम्बरूप

कारण जो आनन्द है । सो निय होनेर्ते आत्माहै।

* १ ४ प्रश्न — पाचकोश जे हँ वेहों अनुभवविषयै

आवतेहै । तिनर्ते न्यारा कोई

आत्मा अनुभवविषयै आवता नहीं।

यार्ते पाचकोशर्ते न्यारा आत्माहै ।

यह निश्चय कैमें दायै ?

कला] ॥ मै पंचकोशातीत हूँ ॥ ४ ॥ ११३

उत्तर:—यद्यपि पांचकोशहीं अनुभवविषै आवते हैं। इनतें न्यारा कोई आत्मा अनुभवविषै आवता नहीं। यह वार्त्ता सत्य है। तथापि जिस अनुभवतें ये पांचकोश जानियेहैं। तिस अनुभव-कूं कौन निवारण करैगा? कोई बी निवारणकरि-शके नहीं। यातें पांचकोशनका अनुभवरूप जो चैतन्य है। सो पांचकोशनतें न्यारा आत्मा है ॥

* १०५ प्रश्न:—आत्मा कैसा है ?

उत्तर:—सत् चित् आनंद आदि स्वरूप है ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये पंचकोशातीत-
वर्णननामिका चतुर्थकला समाप्ता ॥४॥



॥ अथ पंचमकला प्रारम्भः ॥ ५ ॥

॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

॥ मनहर छन्द ॥

अवस्था तीनको साक्षी आत्मा

६० अन्वय गाकी ।

अभिचारीअवस्थाको ६० अतिरेक पाईयो

त्रिपुटी चतुरदश करि अघहार जहाँ ।

स्पष्ट सो जायत् जूठ नाकृ दृश्य ध्याईयो ॥

देखे सुने घस्तुनके संस्कारसे सृष्टि जहाँ

अस्पष्टप्रतीति स्वप्न सृष्टा लांक गाईयो ॥

सकलकरण लय हांग ७१ जहाँ स्पुति सो ।

पीतांबर तुरीयही ७० प्रत्यक ७१ प्रत्याईयो ५

* १०६ प्रश्न —तीन अवस्था कौनसी हें ?

उत्तर — १ ७० जायत् । २ ७१ स्वप्न । श्री

३ ७० स्पुति ये तीन अवस्था हैं ॥

॥ ६७ ॥ या (आत्मा) को अन्वय कहिये पुष्प-
मालामैं मूत्रकी न्यांई तीनअवस्थामैं अनुस्यूतपना है ।
यह अर्थ है ॥

॥६८॥ पुष्पनकी न्यांई तीनअवस्थाका परस्पर श्री
अधिष्ठानतैं भेद ॥

॥६९॥ पदयोजनाः—जहां सकलकरण लय होय ।
सो सुपुति है ॥

॥ ७० ॥ अन्तरात्मा ॥ ७१ ॥ निश्चय कीयो ॥

॥ ७२ ॥ स्वप्न श्री सुपुषिततैं भिन्न इंद्रियजन्य
ज्ञानका श्री इंद्रियजन्यज्ञानके संस्कारका आभारकाल ।
सो जाग्रत्अवस्था कहियेहै ॥

॥ ७३ ॥ इंद्रियतैं अजन्य । विषयगोचर अन्तः-
करणकी अपरोक्षवृत्तिका काल । स्वप्नअवस्था
कहियेहै ॥

॥ ७४ ॥ सुषुप्तगोचर श्री अविद्यागोचर अविद्याकी
वृत्तिका काल । सुपुषि अवस्था कहियेहै ॥

॥ १ ॥ जाग्रतअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥

* १०७ प्रश्न—जाग्रतअवस्था सो क्या है ?

उत्तर —

१ चौदहन्द्रिय ०१ अध्यात्म है ॥

२ तिनके चौदादेवता ०१ अधिदेव हैं ॥

३ तिनके चौदाविषय ०० अधिभूत हैं ॥

इन बेवालीसतत्त्वनहीं जिसविषै व्यवहार होवे ।

सो ०८ जाग्रतअवस्था है ॥

॥ ७१ ॥ आत्माकू आधयकरिके वर्तमान जे
इन्द्रियारिक । वे अध्यात्म कहियेहैं ॥

॥ ७२ ॥ स्वप्न घातमें भिन्न होवे श्री चतुर्न्द्रियका
अविषय होवे । सो अधिदेव कहियेहैं ॥

॥ ७३ ॥ स्वप्न घातमें भिन्न होवे श्री चतुर्न्द्रिय-
इन्द्रियका विषय होवे । सो अधिभूत कहियेहैं ॥

॥ ७४ ॥ यह एषुन्नरतिशाने पुरुषनकू जाननैयोग्य
जाग्रतका अर्थ है । तैमें हो स्वप्नपुरुषविषै श्री जानना ॥

कला] ॥ तीन प्रवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥ ५ ॥ ११७

* १०८ प्रश्नः—चौदाइन्द्रिय कौनसी हैं ?

उत्तरः—

१-५- ज्ञानइन्द्रिय पांचः—१ श्रोत्र । त्वचा ।
३ चक्षु । ४ जिह्वा । औ ५ घ्राण ॥

६-१० कर्मइन्द्रिय पांचः—६ वाक् ।
७ पाणि । ८ पाद । ९ उपस्थ । औ १० गुदा ॥

११-१४ अंतःकरण च्यारीः—११ मन ।
१२ बुद्धि । १३ चित्त । औ १४ अहंकार ॥

ये चौदाइन्द्रिय अध्यात्म हैं ॥

* १०९ प्रश्नः—चौदाइन्द्रियनके चौदादेवता कौनसैं हैं ?

उत्तरः—

१-५ ज्ञानइन्द्रिय पांचके देवताः—

[१] श्रोत्रइन्द्रियका देवता । दिशा * ॥

[२] त्वचाइन्द्रियका देवता । वायु ॥

[३] चक्षुइन्द्रियका देवता । सूर्य ॥

* दिक्पाल :।

(४) जिह्वाइन्द्रियका देवता वरुण ॥

(५) घ्राणइन्द्रियका देवता । अश्विनीकुमार

६-१० कर्मइन्द्रिय पाँचके देवताः—

(६) घ्राणइन्द्रियका देवता । अग्नि ॥

(७) हस्ताइन्द्रियका देवता । इन्द्र ॥

(८) पादइन्द्रियका देवता । धामनजी ॥

(९) उपस्थइन्द्रियका देवता । प्रजापति ॥

(१०) गुदइन्द्रियका देवता । यम ॥

११-१४ अन्त करण च्यारी के देवताः—

(११) उभयमनइन्द्रियका देवता । चन्द्रमा ॥

(१२) बुद्धिइन्द्रियका देवता । ब्रह्मा ॥

(१३) चित्तइन्द्रियका देवता । वायुदेव ॥

(१४) अहकारइन्द्रियका देवता रुद्र ॥

य चौदादेवता अधिदैव ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥ ५॥ ११६

* ११० प्रश्न:—चौदाइन्द्रियनके चौदाविषय कौनसैंहैं?

उत्तर:—

१-५ ज्ञानइन्द्रिय पांचके विषय:—

१ शब्द । २ स्पर्श । ३ रूप । ४ रस ।
५ गंध ॥

६-१० कर्मइन्द्रिय पांचके विषय:—

६ वचन । ७ आदान । ८ गमन । ९ रति-
भोग । १० मलत्याग ।

११-१४ अंतःकरण चारोंके विषय:—

११ संकल्पविकल्प । १२ निश्चय ।
१३ चिंतन । १४ अहंयना ॥

ये चौदाविषय अधिभूत हैं ॥

॥ ८० ॥ मनका संकल्पविकल्प विषय नहीं । किंतु

जिस वस्तुका संकल्प होवे । सो वस्तु विषय है ।

सैंहीं बुद्धि चित्त अहंकार औ कर्मइन्द्रियनविषै वीं
जानना ॥

* १११ प्रश्न-अध्यात्म अधिदैव अधिभूत । ये
तीनतीन मिलिके क्या कहिये हैं ।

उत्तर.—अध्यात्मादितीन-पुट [आकार]
मिलिके त्रिपुटी कहिये हैं ॥

* ११२ प्रश्न - चौदात्रिपुटी किसरीतिसे जाननी ?

उत्तर: -

१-५ ज्ञानइन्द्रिय की त्रिपुटी ॥

इन्द्रिय — देवता — विषय—
अध्यात्म ॥ अधिदैव ॥ अधिभूत ॥

- | | | |
|-----------------|----------------|----------|
| [१] श्रोत्र । | दिशा । | शब्द । |
| [२] त्वचा । | वायु । | स्पर्श । |
| [३] चक्षु । | सूर्य । | रूप । |
| [४] जिह्वा । | वस्त्र । | रस । |
| [५] घ्राण । | अश्विनीकुमार । | गंध । |

कला] ॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १२१

६-१० ॥ कर्मइन्द्रियनकी त्रिपुटी ॥

इन्द्रिय — देवता — विषय—

अध्यात्म ॥ अधिदैव ॥ आधिभूत ॥

[६] वाक् । अग्नि । वचन(क्रिया) ॥

[७] हस्त । इन्द्र । लेना देना ॥

[८] पाद । वामनजी । गमन ॥

[९] उपस्थ । प्रजापति । रतिभोग ॥

[१०] गुद । यम । मलत्याग ॥

११-१४ ॥ अंतःकरण ४ की त्रिपुटी ॥

[११] मन । चन्द्रमा । संकल्पविकल्प ॥

[१२] बुद्धि । ब्रह्मा । निश्चय ॥

[१३] चित्त । वासुदेव । चिंतन ॥

[१४] अहंकार । रुद्र । अहंपना ॥

इसरीति सैं चौदात्रिपुटी जाननी ॥

• १११ प्रश्नः—अध्यात्म अधिदैव अधिभूत ।
तीनतीन मिलिके क्या कहिये हैं ।

उत्तर.—अध्यात्मादितीन-पुट [आकार
मिलिके त्रिपुटी कहियेहैं ॥

• ११२ प्रश्न -चौदात्रिपुटी किसरीतिसँ जाननी

उत्तरः -

१-५ ज्ञानइन्द्रिय की त्रिपुटी ॥

इन्द्रिय — देवता — विषय—

अध्यात्म ॥ अधिदैव ॥ अधिभूत ॥

[१] श्रोत्र । दिशा । शब्द ॥

[२] त्वचा । वायु । स्पर्श ॥

[३] चक्षु । सूर्य । रूप ॥

[४] निन्हा । घण्टा । रस ॥

[५] प्राण । अश्वनीकुमार । गंध ॥

कला] ॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥५॥ १२३

४ व्यवहार न चलै तिसकूँ वी मैं जानताहूं ।

ऐसा मेरा स्वभाव है । यह जानना ॥

* ११५ प्रश्नः— इस कथनसेँ क्या सिद्ध भया ?

उत्तरः— त्रिपुटीसेँ जिसविषै व्यवहार चलता है ऐसी जाग्रतअवस्था है । यह सिद्ध भया ॥

* ११६ प्रश्नः— जाग्रतअवस्थाविषै जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ जाग्रत के अभिमानसेँ तिस [जीव] का नाम क्या है ?

उत्तरः— जाग्रतअवस्थाविषै जीवका

१ नेत्र दशस्थान है ।

२ वैखरी वाचा है ।

॥ ८१ ॥ यद्यपि जाग्रतविषै इस चिदाभासरूप जीवकी नखसेँ लेके शिखापर्यंत सारेदेहविषै व्याप्ति है । तथापि मुख्यताकरिके सो नेत्रविषै रहताहै । यातेँ ताका नेत्र स्थान कहियेहै ॥

३ स्थूल भोग है ।

४ क्रिया शक्ति है ।

५ रजो गुण है । औ

६ जाग्रत्के अभिमानसे विरव नाम है ॥

• ११७ प्रश्न.—जाग्रत्अवस्थाके कहनैसे क्या सिद्ध भया ?

उत्तर:—

१ यह जाग्रत्अवस्था होवे तिसकुं धी में जानताह । औ

२ स्वप्नसुषुप्तिविषं न होवे तथ तिसके अभावकुं धी में जानता ह ।

याने जाग्रत्अवस्था में नहीं औ मेरी नहीं । यह स्थूलदेह की है । में इसका जाननैद्वारा साक्षी घटसाक्षीकी न्यार्इ इसने न्यारा ह ।

इसर् तिनै जाग्रत्अवस्थाका में सीक्षी ह ॥

कला] ॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १२५

॥ २ ॥ स्वप्नअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥

* ११८ प्रश्न:—स्वप्नअवस्था सो क्या है ?

उत्तर:—जाग्रत्अवस्थाविषै जो पदार्थ देखे-
होवें । सुनेहोवें । भोगेहोवें । तिनका संस्कार
वालके हजारवें भाग जैसी बारीक हितनामक
नाडी जो कंठविषै है तिसविषै रहताहै । तिससँ
निद्राकालमें पांचविषयआदिकपदार्थ औ तिनका
ज्ञान उपजताहै । तिनसँ जिसविषै व्यवहार
होवै । सो स्वप्नअवस्था है ॥

* ११९ प्रश्न:—स्वप्नअवस्थाविषै जीवका स्थान
वाचा भोग शक्ति गुण औ स्वप्नके अभि-
मानहैं तिस [जीव] का नाम क्या है ?

उत्तर:—स्वप्नअवस्थाविषै जीवका

१ कंठ स्थान है ।

२ मध्यमा वाचा है ।

३ सूक्ष्म [वासनामय] भोग है ।

४ ज्ञान शक्ति है ।

५ ८२सत्य गुण है । औ

६ स्वप्नके अभिमानसें तैजस नाम है ॥

• १२० प्रश्न — स्वप्नश्रवस्याके कहनेसें क्या सिद्ध भया ?

उत्तर:—

१ स्वप्नश्रवस्या होवे तिसहूँ भी मैं जानताहूँ औ
२ ज्ञानत्सुपुसिविषे न होवे तब तिसके अभावहूँ
भी मैं जानताहूँ ।

याने' यह स्वप्नश्रवस्या मैं नहीं औ मेरी नहीं ।
यह सूक्ष्मदेहकी है । मैं इसका जाननेद्वारा
साक्षी घटनाक्षीकी न्यारे' इतने' न्यारा हूँ । यह
स्वप्नके कहनेमें सिद्ध भया ॥

इसरीतिमें स्वप्नश्रवस्याका मैं साक्षी हूँ ।

॥ ८२ ॥ कितनहुँ राजोगुण भी करतेहैं ॥

कला] ॥ तीन अवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १२७

॥ ३ ॥ सुषुप्तिअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥

* १२१ प्रश्न:-सुषुप्तिअवस्था सो क्या है ?

उत्तर:-पुरुष जब निद्रासँ जागिके उठे तब सुषुप्तिविषै अनुभव किये सुख औ अज्ञानका स्मरणकरिके कहताहै । जो " आज मैं सुखमें सोयाथा औ कछु वी न जानताभया " यह सुख औ अज्ञान का प्रकाश साक्षीचेतनरूप अनुभवसँ जिसविषै होवैहै । ऐसी जो बुद्धिकी विलयअवस्था

सो सुषुप्तिअवस्था है ॥

* १२२ प्रश्न:-सुषुप्तिअवस्थाविषै जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ सुषुप्तिके अभिमानसँ तिस [जीव] का नाम क्या है ?

उत्तर:-सुषुप्तिअवस्थाविषै जीवका

१ हृदय स्थान है ।

२ पश्यंती वाचा है ।

३ आनंद भोग है ।

४ द्रव्य शक्ति है ।

५ तमो गुण है । श्री

६ सुपुस्तिके अभिमानसँ प्राज्ञ नाम है ॥

• १२३ प्रश्न-सुपुतिश्रवस्याविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तर:—प्रथमदृष्टान्त-[१] जैसे कोईका भूषण कूपविषै गिन्याहोवै तिसके निकासनैकूँ कोई तारूपुरुष कूपविषै गिरे । सो पुरुष भूषण मिले तिसकूँ भी जानताहै श्री भूषण न मिले तिसकूँ भी जानताहै । [२] परन्तु कहनैका साधन जो वाक्इन्द्रिय है तिसके देवता शक्ति जलके साधि विरोध होनैतैँ तिरोधान होवैहै । यातैँ कहता नहीं । श्री [३] जय पुरुष जलसँ वाहीर निकसै तय कहनैका साधन देवतासहित वाक्इन्द्रिय है । यातैँ भूषण मिल्या अथवा न मिल्या सो कहताहै ॥

कला] ॥ तीन अवस्था का मैं साक्षी हूँ । ५॥ १२६

सिद्धान्तः-तैसेँ [१] सुपुतिअवस्थाविपै सुख औ अज्ञानका साक्षीचेतनरूप सामान्यज्ञान है । [२] परन्तु विशेषज्ञानके साधन जे इन्द्रिय औ अन्तःकरण तिनका तव अभाव है । यातैँ सुख औ अज्ञानका विशेषज्ञान होता नहीं । [३] जब पुरुष जागताहै तव विशेषज्ञानके साधन इन्द्रिय औ अन्तःकरण होवैहै । यातैँ सुपुतिविपै अनुभवकिये सुख औ अज्ञानका स्मृतिरूप विशेषज्ञान होवैहै ॥

द्वितीयदृष्टान्तः- जैसेँ [१] आतपविपै पिगल्या घृत होवै । [२] सो छायाविपै स्थित होवै तौ गट्टारूप होवैहै । [३] फेर आतपविपै स्थित होवै तौ पिगलताहै ॥

सिद्धान्तः-तैसेँ (१) सुपुतिविपै कारणशरीर रूप अज्ञान है । [२] सो जाग्रत्स्वप्नविपै बुद्धिरूप होवैहै । [३] फेर सुपुतिविपै अज्ञानरूप होवैहै ॥

नृतीपट्टान्तः - जैसे [१] कोई बालक लडकनके साथ खेल करनेकू जावै । [२] सो जर धमकू पावै तब माताके गोदमें सोयके गृहके सुपका अनुभव करताहै । [३] फेर जर लडके बुलावै तब घाहीर जायके खेलकू करताहै ।

सिद्धान्तः-जैसे [१] कारणशरीर जो अज्ञान तिररूप माता है । तिसका बुद्धिरूप बालक कर्मरूप लडकनके साथ जाग्रत्स्वरूप बहिर्भूमि विषै व्यवहाररूप खेलकू करताहै । [२] जर विदोषरूप धमकू पावै । सुषुप्तिअवस्था रूप गृहविषै अज्ञानरूप मानामें लीन होयके प्रज्ञानरुका अनुभव करताहै । [३] फेर जर कर्मरूप लडक बुलावै तब जाग्रत्स्वरूप बहिर्भूमि विषै व्यवहाररूप खेलकू करताहै ॥

चतुर्थदृष्टान्तः - जैसे [१] समुद्रजलगरि पूर्ण पट्ट [-] गलेमें गम्भी बाधिके समुद्रविषै

कला] ॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूँ ॥५॥ १३१

लीन करें (३) तब घटविषै स्थित जल समुद्रके जलसँ एकताकूं पावता है । (४) तौ बी घटरूप उपाधिकरि भिन्नकी न्याई है (५) फेर जब रस्तीकूं खीचीयें तब भेदकूं पावता है । (६) परन्तु जलसहित घट औ समुद्रका आधार जो आकाश सो भिन्न होता नहीं । (७) किंतु तीनकालविषै एकरस है ॥

सिद्धांतः—तैसेँ (१) अज्ञानरूप समुद्र-जलकरि पूर्ण जो लिंगदेहरूप घट है । (२) सो अदृष्टरूप रस्तीसँ वांघ्याहुआ सुप्तिकालविषै औ तिसके अवांतरभेदरूप मरण मूर्छा अरु प्रलयकालविषै समष्टिअज्ञानरूप ईश्वरकी उपाधि मायाविषै लीन होवैहै । (३) तब सो व्यष्टि-अज्ञानरूप जीवकी उपाधि अविद्या । समष्टि-अज्ञानसँ एकताकूं पावैहै । (४) तौ बी लिंग-शरीरके संस्काररूप उपाधिकरि भिन्नकी न्याई है ।

(५) फेर जब अट्टरूप रस्सीकूं अंतर्गामी प्रेरता-
 है। तब भेदकूं पावैहै। ६) परंतु व्यष्टिअज्ञानरूप
 जलसहित लिग्देहरूप घट औ समष्टिअज्ञानरूप
 समुद्रका आधार जो बिदाकाश सो भिन्न होता
 नहीं। (७) किंतु नीनकालविषे एकरस है ॥

● १२४ प्रश्नः—सुषुप्तिके कहैसैं क्या सिद्ध भया

उत्तरः—

१ सुषुप्तिअवस्था होवै तिसकूं घी में जानताहूं। औ
 २ जाग्रदस्वप्नविषे यह न होवै तब तिसके
 अभावकूं घी में जानताहूं।

यातैं यह सुषुप्तिअवस्था में नहीं औ मेरी नहीं।
 यह कारणदेहकीहैं मैं इसका जाननैद्वारा साक्षी
 घटसाक्षीकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

इसरीतिसैं सुषुप्तिअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये अवस्थात्रयसाक्षी
 वर्णननामिका पंचमकला समाप्ता ॥५॥

॥ अथ षष्ठकलाप्रारंभः ॥ ६ ॥

॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णनं ॥

॥ ५३ललित छंदः ॥

सकलदृश्य सो-ऽध्यास छोडना ।

जगअधारमें चित्त जोडना ॥

५४त्रयदशाहि जो जाग्रदादि हैं ।

सवप्रपंच सो भिन्न नाहिं हैं ॥६॥

रजन आदि हैं सीपिमैं यथा ।

५५त्रयदशा सु हैं ब्रह्ममें तथा ॥

रजनआदिवत् दृश्य ये मृषा ।

शुगतिकादिवत् ब्रह्म ५६अमृषा ॥ ७ ॥

व्यभिचरैः ५७मिथो ५८रजन आदि ज्यो ।

इनहिकी मिथो ५९व्यावृत्ती जु त्यों ॥

शुगति ६०सूत्रवत् अनुग एक जो ।

६०अनुवृत्तीयुतो ब्रह्म आप सो ॥८॥

शुगतिकामहीं ११तीनअंश ज्युं ।

अजडयहमें तीनअंश त्युं ॥

१२उभयअंशकूं सत्य जानिले ।

१३त्रतिथ त्यागदे मोक्ष ती मिले ॥६॥

१४भेदभ्रमादि जो १५पंचधाभवं ।

त्रिविधतापता तप्त सो १६दवं ॥

१७परशु पंचधा-युक्तिपों करी ।

करि विचार तूं छेद ना करी ॥१०॥

नहि जू जाहिमें तीनकालमें ।

तहंहि भान बहै मध्यकालमें ॥

शुगति रौप्यवत् ध्यास सो भ्रमं ।

१८अरथ ज्ञान दो-भांतिका क्रमं ॥११॥

१९द्विविधवेम है ज्ञान अर्थको ।

१००अरथभ्रांति वा पहिवधा धको ॥

सकलध्यास जे जगनमें १०१दसे ।

सयसु याहिके धीचमें १०२घसे ॥१२॥

कला] ॥ प्रपञ्चमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १३५

निजे चिदात्मकूं ब्रह्म जानिके ।
सकलवेमको १०३मूल भानिके ॥
१०४परममोदकूं आप वूजिले ।
इहहि सुक्ति पीतांबरो मिले ॥१३॥

॥ ८३ ॥ श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके एकतःसर्वे
अध्यायगत गोपिकागीतकी न्याई यह छंद है ॥

॥ ८४ ॥ तीनअवस्था ॥

॥ ८५ ॥ सत्य ॥ ॥ ८६ ॥ परस्पर ॥

॥ ८७ ॥ इहां आदिशब्दकरि भौडल (अत्ररत्न)
श्री कागजका ग्रहण है ॥

॥ ८८ ॥ भेद कहिये अन्योन्याभाव ॥

॥ ८९ ॥ पुष्पमःलामें सूत्रकी न्याई ॥

॥ ९० ॥ अनुस्यूतताकरि युक्त ॥

॥ ९१ ॥ सामान्य । विशेष । कल्पितविशेष । ये
तीनअंश हैं ॥

॥ ९२ ॥ सामान्य श्री विशेष । इन दोअंशनकूं ॥

॥ ९३ ॥ तृतीय कल्पितअंशकूं ।

॥ ६४ ॥ भेदध्वांतिसै आदिसेके । इहां आदि-
शब्दकरि कर्ताभोरतारनैकी ध्वांति । शीघ्रध्वांति ।
विकारध्वांति । प्रकृतै' भिन्न जगत्के सत्पताकी ध्वांति ।
इन च्यारीध्र निनया प्रकृत्य है ॥

॥ ६५ ॥ पांचप्रकारका संवार है ॥ ६६ ॥ वन है ।

॥ ६७ ॥ अन्वय,—पचधा कहिये पांचप्रकारकी
सुखितयो कहिये दृष्टांतरूप परशु कहिये कुशारकरी ॥

॥ ६८ ॥ अन्वय,—सो ध्रम कहिये अभ्यास ।
अरथ कहिये अर्थाभ्यास श्री ज्ञान कहिये ज्ञानाभ्यास ।
या क्रमसै दोभांतिका है ॥

॥ ६९ ॥ अन्वय —ज्ञान कहिये ज्ञानाभ्यास श्री
अर्थ कहिये अर्थाभ्यास । निनहो वेम कहिये अभ्यास ।
प्रत्येक कहिये एक एक द्विविध है ॥

॥ १०० ॥ वा अरथध्वांति कहिये अर्थाभ्यास ।
प द्वधा कहिये पदप्रकारको । वको नाम कहो ॥

॥ १०१ ॥ दिखाये ॥

॥ १०२ ॥ प्रवेशकृ पायेहै ॥ ॥ १०३ ॥ अज्ञान ॥-

॥ १०४ ॥ परमानंदरूप ब्रह्मकृ आत्मा जानीले ॥

१२५ प्रश्नः—आत्माविषै तीनअवस्था किसकी न्याई भासती हैं ?

उत्तरः—दृष्टान्तः—जैसें सीपीविषै रूपा अथवा भोडल [अभ्रक] अथवा कागज । ये तीन सीपीके अज्ञानसें कल्पित भासतैहैं । तिन तीनवस्तुनका

१ परस्पर वा सीपीके साथि व्यतिरेक है । औ
२ सीपीका तीनवस्तुनविषै अन्वय है ॥

जैसें किः—

१ [१] सीपीविषै जब रूपा भासै तब भोडल औ कागज भासता नहीं । औ

[२] जब भोडल भासै तब रूपा औ कागज भासता नहीं । औ

३] जय कागज भासै नय रूपा श्री भोडल
 भासता नहीं । यह तीनवस्तुनका
 परस्पर व्यतिरेक है ॥ सीपीविरी
 आदिमध्यश्रंतमै इन तीनवस्तुनका
 व्यावहारिक श्री पारमार्थिक अत्यंत-
 श्रभाव है । यह सीपीविरी यो तिन
 तीनवस्तुनका व्यतिरेक है । श्री

२ श्रान्तिकालविरी

[१] “ यह रूपा है ”

[२] “ यह भोडल है ”

[३] “ यह कागज है ”

इसरीतिसें सीरीका इदंश्रंत तिन तीनवस्तुनविरी
 अनुसूत भासताहै । यह तिन तीनवस्तुनविरी
 सीपीका अन्वय है ॥

इहां सीपीके तीनअंश हैं:-१ सामान्यअंश ।

२ विशेषअंश । ३ कल्पितविशेषअंश ॥

१ इदंपना सामान्यअंश है । काहेतें जो अधिक-
कालविषै प्रतीत होवै सो सामान्यअंश
है ॥ इदंपना जातें

(१) भ्रांतिकालविषै प्रतीत होवैहै । औ

(२) भ्रांतिके अभावकाल विषे वी “ यह
सीपी है ” ऐसैं प्रतीत होवैहै ।

यातें यह इदंपना सामान्यअंश है औ
आधार वी कहियेहै ॥

२ नीलपृष्ठतीनकोणयुक्त सीपी विशेषअंश है ।
काहेतें जो न्यूनकालविषै प्रतीत होवै सो
विशेषअंश है ॥

(१) भ्रांतिकालविषयै इन नीलपृष्ठआदिककी प्रतीति होयै नहीं ।

(२) किंतु इनकी प्रतीतिसँ भ्रांतिकी निवृत्ति होयै ।

यार्तें यह विशेषअंश है । औ अधिष्ठान की कहियेहै ॥

३ रूपाआदिक कल्पितविशेषअंश है । काहेतें जो अधिष्ठानके ज्ञानकालमें प्रतीत होयै नहीं । सो कल्पितविशेषअंश है ॥ जैसे

(१) रूपाआदिक । सीपीके अज्ञानकाल-विषयै प्रतीत होयैहै । औ

(२) सीपीके ज्ञानकालविषयै इनकी प्रतीति नैके जन्म ।

सिद्धांतः—तैसँ अधिष्ठानआत्माविपै जाग्रत्
अथवा स्वप्न अथवा सुषुप्ति । ये तीनभ्रान्ति आत्मा-
के अज्ञानसँ होवैहँ । तिनका

१ परस्पर औ अधिष्ठानआत्माके साथि
१०५व्यतिरेक है । औ

२ आत्माका तिनविपै १०६अन्वय है ॥
जैसँ किः—

१ (१) जाग्रत् भासैहै तव स्वप्न औ सुषुप्ति
भासैनहीं । औ

(२) स्वप्न भासैहै तव जाग्रत् औ सुषुप्ति
भासैनहीं । औ

(३) सुषुप्ति भासैहै तव जाग्रत् औ स्वप्न
भासैनहीं ।

यह तीनअवस्थाका परस्परव्यतिरेक है । औ

॥१०५॥ अभाव वा व्यावृत्ति । सो व्यतिरेक है ॥

॥१०६॥ भाव वा अनुवृत्ति । सो अन्वय है ॥

अधिष्ठानविषै इन तीनअवस्थाका पारमार्थिक अत्यन्तअभाव (नित्यनिवृत्ति) है ॥ यह तीनअवस्थाका अधिष्ठानविषै त्र्यतिरंक है । श्री

२ आत्मा इन तीनअवस्थाविषै अनुस्यूत होयके प्रकाशताहै । यह आत्माका तीनअवस्थाविषै अन्वय है ।

इहा आत्माके अधिद्याउपाधिसँ आरोपित तीनअश हैं - १ सामान्यअश । २ विशेषअश । ३ कटिपतविशेषअश ॥

१ सत् ("है" पनै) रूप सामान्यअश है । काहेतें

(१) " जाग्रत् है " " स्वप्न है " " सुषुप्ति है " । इसरीतिसँ आत्माका सत्पना स्रातिकालविषै यी प्रतीत होवैहै । श्री

(२ , भ्रान्तिकी निवृत्तिकालविषै “ मैं सत्
 हूँ ; मैं चित् हूँ । मैं आनन्द हूँ । मैं
 परिपूर्ण हूँ । मैं असंग हूँ । मैं नित्य-
 मुक्त हूँ । मैं ब्रह्म हूँ ” । इसरीतिसँ
 आत्माके सत्पनैकी प्रतीति होवैहै ।
 यातँ यह सत् रूप सामान्यश्च है औ
 आधार वी कहियेहै ।

२ चेतन आनन्द असंग अद्वितीयपनैसँ आदिलेके
 जे आत्माके विशेषण हैं । सो विशेषअंश
 है । काहेतँ

(१) भ्रान्तिकालविषै इनकी प्रतीति होवै
 नहीं । किन्तु

(२) इनकी प्रतीतिसँ भ्रान्तिकी निवृत्ति
 होवैहै ।

यातँ यह विशेषअंश है औ अधिष्ठान वी
 कहिये ॥

३ तीनश्रवस्थारूप प्रपञ्च कल्पितविशेषअंश है ।
काहेतै

(१) ब्रह्मसँ अभिन्न आत्माके अज्ञानकाल-
विषै प्रतीत होवैहै । औ

(२) "मैं ब्रह्म हूँ" ऐसँ आत्माके ज्ञानका-
लमें आत्मासँ भिन्न सत् प्रतीत होवै
नहीं ।

यातँ यह तीनश्रवस्थारूप प्रपञ्च कल्पित
विशेषअंश है औ आंति वो कहियेहै ॥

इसरीतिसँ ये तीनश्रवस्था आत्माविषै मिथ्या
प्रतीत होवैहँ ॥

• १२६ प्रश्न -आत्माविषै मिथ्याप्रपञ्चकी प्रतीति
में अन्यदृष्टात कौनसे हैं ?

उत्तर — जैसे

१ स्याणुविषै पुन्य प्रतीत होवैहै । औ

- २ साक्षीविषै स्वप्न प्रतीत होवैहै । औ
- ३ मरुभूमिविषै जल प्रतीत होवैहै । औ
- ४ आकाशविषै नीलता प्रतीत होवैहै । औ
- ५ रज्जुविषै सर्प प्रतीत होवैहै । औ
- ६ जलविषै अधोमुखपुरुष वा वृक्ष प्रतीत होवैहै । औ
- ७ दर्पणविषै नगरी प्रतीत होवैहै ।
सो मिथ्या है ॥

तैसँ आत्माविषै अपने अज्ञानतँ प्रपञ्च प्रतीत होवैहै । सो मिथ्या है ॥

इस रीतिसँ प्रपञ्चके मिथ्यापनैका निश्चय करना । सोई प्रपञ्चका १०७वाध है ॥

॥१०७॥ मिथ्यापनैके निश्चयका नाम बाध है ।

सो शास्त्रीय यौक्तिक औ अपरोक्ष भेदतँ तीनभांति का है ॥

• १२७ प्रश्न:- स्र्ांतिरूप संसार कितने प्रकारका है ?

उत्तर:—

- १ १०८ भेद स्र्ांति ।
 - २ १०१ कर्त्ता भोक्तापनैकी स्र्ांति ।
 - ३ ११० सगकी स्र्ांति ।
 - ४ १११ विकारकी स्र्ांति ।
 - ५ प्रहामें भिन्न जगत्के सत्यताकी स्र्ांति ।
- यह पांचप्रकारका स्र्ांतिरूप संसार है ॥

• १२८ प्रश्न - पांचप्रकारके भ्रमकी निवृत्ति किन दृष्टान्तमें होवैदे ?

उत्तर:—

- १ ११२ विषयप्रतिबिंबके दृष्टान्तमें भेदभ्रमकी निवृत्ति होवैदे ॥

॥ १०८ ॥ जीवईश्वरका भेद । जीवतका परस्पर-भेद । जहनका परस्परभेद । जीवशुद्धका भेद । जीव-अशुद्धका भेद । यह पांचप्रकारकी भेद स्र्ांति है ॥

॥ १०६ ॥ अंतःकरण के धर्म कर्त्तापनैभोक्तापनैको
 आत्माविषै प्रतीति होवैहै । यह कर्त्ताभोक्तापनैकी
 भ्रांति है ॥

॥ ११० ॥ आत्माको देहादिकविषै अहंत्तरूप औ
 गृहादिकविषै ममत्तरूप सम्बन्ध है । वा सजातीय
 विजातीय स्वगत वस्तुके साथि सम्बन्धकी प्रतीति । सो
 संगभ्रांति है ।

॥ १११ ॥ दुग्धके विकार दधिकी न्याई । ब्रह्मका
 विकार जीव तथा जगत् है । ऐसी जो प्रतीति । सो
 विकारभ्रांति है ॥

॥ ११२ ॥ सूत्रभाष्यके उपरि पंचपादिकानामक
 शीका पद्मपादाचार्यनै करीहै । तिस पंचपादिकाका
 ग्याख्यानरूप विवरणनामग्रन्थ है । तिसके कर्त्ता
 श्रीप्रकाशाक्षरनामशाचार्य है । तिसकी रीतिके
 अनुसार यह उपरि लिख्या विवप्रतिविवका दृष्टांत है ॥

२ स्फाटिकविषै लालवस्त्रके लालरंगकी प्रतीतिके दृष्टांतसें करारिभोक्तापनैकी भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ॥

३ घटाकाशके दृष्टांतमें संगभ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ॥

४ रज्जुविषै कल्पितमर्पके दृष्टांतसें विकार भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ॥

५ कनकविषै कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टांतमें ब्रह्मस्य भिन्न जगत्के सत्यपनैकी भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ॥

* १२६ प्रश्नः—१ विषयप्रतिबिम्बके दृष्टांतसें भेदभ्रांतिकी निवृत्ति किमतीतिसें होवैहै ?

उत्तरः—जैसे (१) दर्पणविषै मुग्रका प्रतिबिम्ब भासताहै सो प्रतिबिम्ब दर्पणविषै नहीं है । किन्तु दर्पणक' देखनेवाले निकसी जो भेदकी

वृत्ति सो दर्पणकूं स्पर्शकरिके पीछे लौटिके मुखकूंहीं देखतीहै । यातैं विंव जो मुख तिसके साथि प्रतिविंव अभिन्न है । तातैं प्रतिविंव मिथ्या नहीं । किंतु सत्य है । औ (२) प्रतिविंव के धर्म जे विंवसैं भिन्नपणा औ दर्पणविषै स्थितपना औ विंवसैं उलटपना । ये तीन औ तिनकी प्रतीतिरूप ज्ञान सो भ्रांति है ॥ (३) यातैं इन धर्मनको मिथ्यापनैका निश्चयरूप बाध करिके विंव औ प्रतिविंवका सदाअभेद निश्चय होवैहै ॥

सिद्धांतः-तैसैं [१] शुद्धब्रह्मरूप विंव है । तिसका अज्ञानरूप दर्पणविषै जीवरूप प्रतिविंव भासताहै । तिनमें स्वप्नकी न्याई एक-जीव मुख्य है औ दूसरे स्थावरजंगमरूप नाना-जीव भासतेहैं । हे जीवाभास हैं ॥ सो

जीवरूप प्रतिबिम्ब ईश्वररूप बिम्बके साथि सदा
 अभिन्न हैं । परंतु [२] मायाके बलसे तिस
 जीवके धर्म । विषरूप ईश्वरसे भेद । जीवपना ।
 अल्पज्ञपना । अल्पशक्तिपना । परिच्छिन्नपना ।
 नानापना इत्यादि औ तिनकी प्रतीतिरूप ज्ञान ।
 सो भ्रांति है ॥ [३] याते तिनका मिथ्यापनका
 निश्चयरूप बाधकरिके । जीवरूप प्रतिबिम्ब औ
 ईश्वररूप बिम्बका सदा अभेद निश्चय होवैहै ॥

इसरीतिले बिम्बप्रतिबिम्बके दृष्टान्तसे ११३ भेद-
 भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ॥

॥ ११३ ॥ सुख जीवईश्वरके भेदके निषेधस
 तिसकेप्रसंगत क्यारीभेदनका निषेध सहज सिद्ध होवैहै
 सर्व भेद उपाधिके कियेहै । उपाधि सब मिथ्या हैं ।
 तात तिनके किये भेद बी सर्व मिथ्या हैं । याते
 भारतवर्षमें तमसही प्रवर्तेय रहताहै ॥

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १५१

*१३० प्रश्नः—२ स्फाटिकविषै लालवस्त्रके लालरंग-
की प्रतीतिके दृष्टांतसें कर्त्ताभोक्तापनै
की भ्रांति किसरीतिसें निवृत्त होवैहै ?

उत्तरः—जैसे [१] लालवस्त्रके उपरि
धरे स्फाटिकमणिविषै वस्त्रका लालरंग संयोग-
सम्बन्धसें भासताहै (२) परन्तु सो वस्त्रका धर्म
है । [३] वस्त्र औ स्फाटिकके वियोगके भये
स्फाटिकविषै भापता नहीं । [४] यातें
स्फाटिकका धर्म नहीं है । [५] किंतु स्फाटिक-
विषै भ्रांतिसें भासता है ॥

सिद्धान्तः—तैसे [१] अंतःकरणका धर्म
जो कर्त्ताभोक्तापना सो आत्माविषै तादात्म्य-
सम्बन्धसें भासताहै । [२] परंतु सो अंतःकरणका
धर्म है ॥ [३] सुषुप्तिविषै अन्तःकरण औ

आमाके वियोगके भये आत्माविषै भासता नह
 [४] यालै आमाका धर्म नहीं है ॥ [५]
 आत्माविषै छातिलै भासताहै ॥

सै स्फटिकविषै लालरगकी प्रतीतिं
 > कसौ भोक्तापनैकी भ्रान्तिकी निगुर्त
 ॥

१३१ प्रश्न — ३ घटाकाशके दृष्टातसै मगध्राति
 की निवृत्ति किसरीनिसै होवैहै ?

उत्तर — जैसै [१] घटउपाधिवाला आकाश
 कदियहै । [२] सो आकाश घटके
 ॥ [३] तौ यी घटक धर्म उत्पत्ति
 आगमनआदिक है । ये आकाशक
 कर्म नहीं । [४] यालै आकाश अमल
 है । औ [५] आकाशका सम्बन्ध घटके माधि
 भागनाहै ना भ्रान्ति है ॥

इद्वान्तः-तैसै [१] देहआदिकसंघात-
 उपाधिवाला आत्मा जीव कहियेहै । [२]
 आत्मा संघातके लङ्ग भासताहै । [३] तौ
 संघातके धर्म जन्ममरणादिक हैं । वे आत्मा-
 स्पर्श करते नहीं । काहेतै संघात दृश्य
 औ आत्मा द्रष्टा है । ४] तातैं आत्मा-
 घातसैं न्यारा असङ्ग है ॥ [५] जातैं आत्मा
 घातरूप नहीं । तातैं आत्माका संघातके
 साथि अइंतारूप सम्बन्ध वी नहीं औ जातैं
 आत्माका संघात नहीं । किंतु संघात पंच-
 महाभूतका है तातैं आत्माका संघातके साथि
 ममतारूप सम्बन्ध वी नहीं जातैं आत्मा संघातसैं
 न्यारा है । तातैं आत्माका संघातके सम्बन्धी
 स्त्रीपुत्रगृहादिकनके साथि वी ममतारूपसंबन्ध
 नहीं ॥ ऐसैं आत्मा असङ्गहै इसका संघातके साथि

अहताममत्तारूप सम्यन्ध भ्राति है ।

इसीरीतिलें घटाकाशके दृष्टातसें स्व

...ी निवृत्ति होय है ॥

*१३२ प्रश्न - ४ रज्जुविषै कल्पितसर्पके दृष्टातसें

विकारभ्रातिकी निवृत्ति किसरीतिले होयैहै

उत्तर — जैसे (१) मदअभकारविषै रज्जु

स्थित होयै । तिसके देपनै वास्तं नभरूप द्वारसें

अत करणकी वृत्ति निरसै है । सो वृत्ति अध

कारादि दोषसें रज्जुके आकारकू पावती नही

यातें तिस वृत्तिलें रज्जुकु आवरणका भङ्ग होयै

नहीं । तय रज्जुउपाधिवाले चैतन्यके आश्रित

रही जो १। भूलाश्रयिद्या । सो लोभकू पायके

रूपरूप विकारकू धारतीहै ॥ (२) सो सर्प

दुग्धके परिणाम इधिका न्याई अविद्याके

परिणाम है ।

॥ ११४ ॥ घट विरूप उपाधिवाले चैतन्यके अध

रण कानैश्रा जो वृत्ति । सो भूलाश्रयिद्या है ।

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १५५

श्रौ (१) रज्जुउपाधिवाले चैतन्यका विवर्त है ।
परिणाम (विकार) नहीं ।

सिद्धांतः-तैसैं (१) ब्रह्मचैतन्यके आश्रित
रही जो ११५मूलाश्रविद्या । सो प्रारब्धादिक-
निमित्तसैं ११६क्षोभकूँ पायके जड़ चैतन्य
(चिदाभास) प्रपंचरूप विकारकूँ धारतीहैं ॥
(२) सो प्रपंच अविद्याकः ११७परिणाम है श्रौ
(३) ११८ अग्निष्टानब्रह्मचैतन्यका ११६विवर्त
है । परिणाम नहीं ॥

इसरीतिसैं रज्जुविपै कल्पितसर्पके दृष्टांतसैं
विकारभ्रान्तिकी निवृत्ति होवैहै ॥

॥ ११५ ॥ शुद्धब्रह्म श्रौ आत्माकूँ आवरण करने-
वाजी जो अविद्या । सो मूलाश्रविद्या है ।

॥ ११६ ॥ कार्य करनेके सन्मुख होनेकूँ क्षोभ
कहैंहैं ।

॥ ११७ ॥

१ पूर्वरूपकूँ त्यागिके अन्यरूपकी प्राप्ति परिणाम है ।

२ वा उपादानके समानसत्तावाजा जो अन्वयाद्य कहिये उपादानतैं औरमकारका आकार सो परिणाम है ।

जैवें दुग्धका परिणाम दधि है । याहीकूं विकार भी कहैहैं ।

॥ ११८ ॥ जो अप निर्विकाररूपतैं स्थिर होवै सो अविद्याकृत कल्पितकार्यका आधय होवै । सो अविष्टान है ॥ जैवें कल्पितवर्षका अविष्टान रजु है । याहीकूं परिणामी उपादानतैं विकल्पण दूसरा विवर्त उपादान भी कहतहैं ।

॥ ११९ ॥ अविष्टानतैं विषमवत्त वाजा कहिये अशु अह मित्रवत्तावाजा जो अविष्टानतैं अन्वयरूप नाम औरमकारका आकार सो विवर्त है ॥ जैवें रजुका विवर्त अप है । याहीकूं कल्पितकार्य और कल्पितविशेष भी कहनेहैं ।

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥ ६ ॥ १५७

* १३३ प्रश्नः—५ कनकचिपे कुंडलकी प्रतीतिके
दृष्टान्तसँ भिन्न जगत्के सत्यताकी
भांतिकी निवृत्ति किसरीतिसँ
होवैहै ?

उत्तरः—जैसँ (१) कनक औ कुंडलका
कार्यकारणभावकरि भेद भासता है सो कल्पितहै ।
औ (२) कनकसँ कुंडलका भिन्नस्वरूप
देखीता नहीं । (३) यातँ वास्तवअभेद है ।
(४) तातँ कनकसँ भिन्न कुंडलकी सत्ता
नहीं है ॥

सिद्धांतः—तैसँ (१) ब्रह्म औ जगत्का
कार्यकारणभावकरि विशेषणकरि भेद भासता-
है सो कल्पित है । औ (२) विचारिकरि देखिये
तौ अस्तिभातिप्रियसँ भिन्न नामरूपजगत् सत्य

सिद्ध होवे नहीं । किंतु मिथ्या सिद्ध होवेई और जो वस्तु जिनविषे कल्पित होवे सो वस्तु तिसरें भिन्न सिद्ध होवे नहीं । (३) यार्तें महामै जगत् का पास्तवग्रमेद है । (४) तार्तें महामै जगत् की भिन्नसत्ता नहीं है ॥

इसरीतिसै कनकविषे कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टांतसै ब्रह्मसै भिन्न जगत्के सत्यताकी भ्रान्ति निवृत्ति होवेई ॥

* १३४ प्रश्न—भ्रान्ति सो क्या है ?

उत्तर:—भ्रान्तिसो अध्यास है ॥

* १३५ प्रश्न—अध्यास सो क्या है ?

उत्तर:—भ्रान्तिज्ञानका विषय जो मिथ्यावस्तु औ भ्रान्तिज्ञान । तिसका नाम अध्यास है ॥

कला] ॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥ ६ ॥ १५६

* १३६ प्रश्नः—यह अध्यास कितने प्रकारका है ?

उत्तरः—ज्ञानध्यास औ अर्थाध्यास । इस भेदतें अध्यास दो भांतिका है ॥ तिनमें अर्थाध्यास । १२०केवलसंबंधाध्यास । १२१संबंधसहित संबंधी का अध्यास । १२२केवलधर्माध्यास । १२३धर्मसहित धर्मोंका अध्यास । १२४अन्योन्याध्यास । १२५अन्यतराध्यास । इस भेदतें षट्प्रकारका है ।

अथवा १२६स्वरूपाध्यास औ १२०संसर्गाध्यास । इस भेदतें अर्थाध्यास दो प्रकारका है ।

- १ ताके १२८अंतर्गत उक्त षड्भेद हैं । औ
- २ उपरि लिखे भेदघ्रांतिआदिक्रपांचप्रकारके भ्रम-बी याहीके १२९अंतर्गत हैं । औ

१ आगे नेडेहों कहियेगा जो आत्माअनात्माके विशेषणोंका अन्योन्याध्यास सो बी याहीके अंतर्गत है । सो ताके टिप्पणविषै दिखाया जावेगा ।

॥ १२० ॥ अनात्माविषै आत्माका अध्याय हावैई ।
तहाँ आत्माका अनात्माके साथि तादात्म्यसंबंध अध्याय
है । आत्माका स्वरूप नहीं । यार्तें अनात्माविषै आत्माका
केवलसमवाध्यास है ।

॥ १२१ ॥ आत्माविषै अनात्माका संबंध श्री
स्वरूप दोनूँ अध्याय है । यार्तें आत्माविषै अनात्माका
समवसाहित सगर्भीका अध्यास है ।

॥ १२२ ॥ स्थूलदेहके गौराद्यादिक श्री इंद्रियतके
दर्शनआदिकधर्मकाहीं आत्माविषै अध्याय होवैई । तिनके
स्वरूपका नहीं । यार्तें आत्माविषै वेद श्री इंद्रियतके
केवलधर्मका अध्यास है ।

॥ १२३ ॥ अन्न करणके कल्पिनाद्यादिकधर्म श्री
स्वरूप दोनूँ आत्माविषै अध्याय है । यार्तें अन्न करणका
आत्माविषै धर्मसहित धर्मीका अध्यास है ।

॥ १२४ ॥ जोह श्री अग्निकी त्वाँई आत्माविषै
अनात्माका श्री अनात्माविषै आत्माका जो अध्यास सो
अन्योन्याध्यास है ।

॥ १२५ ॥ अनात्माविषै - आत्माका स्वरूप अध्यस्त नहीं । किन्तु आत्माविषै अनात्माका स्वरूप अध्यस्त है । यहाँ 'अन्यतराध्यास' है । 'दांनू'मेंसै' एकका अध्यास अन्यतराध्यास कहियेहैं ।

॥ १२६ ॥ ज्ञानसै' बाध होनैयोग्य वस्तु । अधिष्ठानविषै स्वरूपसै' अध्यस्त हाँवैहै । देहादिअनात्माका अधिष्ठा-नके ज्ञानसै' बाध होवैहै । यातै' ताका आत्माविषै स्वरूपाध्यास है ।

॥ १२७ ॥ बाधके अयोग्य वस्तुका स्वरूप अध्यास होवै नहीं । किन्तु ताका संबन्ध अध्यस्त हाँवैहै । यातै' अनात्माविषै आत्माका संसर्गाध्यास है । याहीकू' संबन्धाध्यास बी कहैहैं ।

॥ १२८ ॥ केवलधर्माध्यास । धर्मसहित धर्मीका अध्यास श्री अन्यतराध्यास । ये तीन स्वरूपाध्यासके अन्तर्गत हैं ।

केवलमनुभाष्यात् । सोपगर्भाभ्यासही है ॥

सपथवदित सवधीका अभ्यास । सपगर्भाभ्याससहि
स्वरूपाभ्यास है ॥

अन्वोन्वाद्यभावमै सपगर्भाभ्यास श्री स्वरूपाभ्यास दोन
है । काहेतै

१ आत्माका स्वरूप ती मरुप है । यानै अक्षरन नहीं
किन्तु ताका समगै कहिये तादात्म्यसंबध अनारमाविर
अक्षरन है । यानै ताका संसर्गाभ्यास है । अ
२ अनारमाका स्वरूपही आत्माविये अक्षरन है । यानै
ताका स्वरूपाभ्यास है ॥

त नै अन्वोन्वाद्यभाव दोनू के अंतर्गत है ॥

। १२१ ॥ भेदभ्रान्तियादिकपांचप्रकारका भ्रम जो
पूर्व लिख्यार्ह । तिनमै

सगभ्रान्तिकु छोटिके बशरि प्रकारका भ्रम । स्वरूपा-
भ्यासके अन्वर्त है । श्री

पांचवी सगभ्रान्ति ससर्गाभ्यासके भीतर है ॥

कला] ॥ प्रपञ्चमिथ्यात्ववर्णन ॥६॥ १६३

* १३७ प्रश्नः—अहंकारादिक अनात्माका औ
आत्माका अध्यास जाननमें विशेषउप-
योगी अर्थात् सर्वअध्यासोंमें अनुस्यूत
कौन अध्यास है ?

उत्तरः—अन्योन्याध्यास ॥

* १३८ प्रश्नः—अन्योन्याध्यास सो क्या है ?

उत्तरः—परस्परविषै परस्परके अध्यासका
नाम १३० अन्योन्याध्यास है ॥

* १३९ प्रश्नः—आत्मा आ अनात्माका परस्पर-
अध्यास किसरीतिसँ है ?

उत्तरः—

१-४ सत् चित् आनन्द औ अद्वैतपना । ये
च्यारीविशेषण आत्माके हैं ॥

१-४ असत् जड दुःख औ द्वैतसहितपना । ये
च्यारीविशेषण अनात्माके हैं ।

तिनमें

॥ १३० ॥ इहाँ सर्वज्ञाभ्यासके स्वरूप श्री उदाहरण विस्तारके भयसै' विरोध लिखे नहीं । किन्तु सांख्यसै लिखेहैं । परन्तु अन्योन्याभ्यासका स्वरूप ती विरोधवयोगी जानिके स्पष्ट दिखायाहै ॥ तार्किक

२ अनात्माके धर्म दुःख श्री इतिसहितपना ।

आत्माके आनन्द श्री अद्वैतपनैविषै स्वरूपसै' अध्यस्त होयके तिनकू' दापे हैं । श्री

२ आत्माके धर्म सत् अह चित् । अनात्माके अमत्ता श्री अज्ञताविषै ससर्ग (सम्बन्ध) द्वारा अध्यस्त होयके तिनकू' दापे हैं ।

कार्यसहित अज्ञानसै' जो आवृत्त (वार्ष्या) होवै ।

से। अधिष्ठान कहियहै ॥

इसरीनिसै आत्माका श्री अनात्माका यह अन्योन्याभ्यास श्री स'सर्गाभ्यास श्री स्वरूपाभ्यासके अस्त-
र्गत है ॥

१-२ अनात्माके दुःख औ द्वैतसहितपना ।
इन दोविशेषणोंनै आत्माके आनन्द औ
अद्वैतपनैकूँ ढांपेहै । तातै आत्माविपै

(१) “ मैं आनन्दरूप औ अद्वैतरूप
हूँ ” ऐसी प्रतीति होवै नहीं ।

(२) किंतु “मैं दुःखी औ ईश्वरादिकसँ
भिन्न हूँ ” ऐसी प्रतीति होवैहै ॥

३-४ आत्माके सत् औ चित् । इन दोविशेष
णोंनै अनात्माके असत् औ जडपनैकूँ
ढांपेहैं तातै अनात्मा जो अहंकारादिक ।

तिसविपै

(१) “ असत् है । अभान [जड] रूप
है ” ऐसी प्रतीति होवै नहीं ।

(२) किंतु “ विद्यमान है औ भासता
(चेतन) है ” ऐसी प्रतीति होवैहै ॥

सच्चिदानन्द रु ब्रह्म स्वयंपर-
 काश कुटस्थ रु साक्षि विचारे ॥
 द्रष्टु अरु उपद्रष्टु रु एकहि ।
 आदि विधेय विशेषण धारे ॥ १४ ॥
 १३४ अंत विहीन अखंड असंग रु ।
 अद्वय १३५ जन्मविना अविकारे ॥
 चारि १३६ अकारविना अरु व्यक्त ।
 न १३७ माननको विषयो जु निकारे ॥
 कर्म करीहि बढै न घटै इस
 हेतुहि अव्यय वेद पुकारे ॥
 अक्षर नाशविना कहिये इस ।
 आदि निषेध्य पीतांबर सारे ॥ १५ ॥

॥१३२॥ इन्द्रविजयछन्द ठुमरी श्री लावनीमें गाया
 जावैहै ॥ ॥१३३॥ वे विधेय निषेध्य विशेषण ॥

॥ १३४ ॥ अंत ॥ ॥ १३५ ॥ अजन्मा ॥

॥ १३६ ॥ निराकार ॥ ॥ १३७ ॥ अप्रमेय

* १४० प्रश्नः—आत्माके विशेषण कितने प्रकारके हैं

उत्तरः—आत्माके विशेषण । १३=विधेय कहिये साक्षात्बोधक औ १३६=निषेध कहिये प्रपञ्च के निषेधद्वारा बोधक भेदते दो प्रकारके हैं ॥

॥ १३८ ॥ जैसे "सधवा" शब्द । विधवा स्त्रीका निषेध करिके सुवामिनीस्त्रीका साक्षात्बोधक है । तैसे "सत्" आदि-विधेयविशेषण "ससत्" आदिक प्रपञ्च के विशेषणोंका निषेध करिके सदादिरूप ब्रह्मके साक्षात्बोधक हैं । यार्ते "विधेय" कहिये ॥

॥ १३६ ॥ जैसे अविधवाशब्द विधवास्त्रीका निषेध करिके । अर्थात् तार्ते विज्ञापण सुवामिनीस्त्रीका बोधक है । तैसे अनन आदिक जे निषेधविशेषण हैं । वे अन्त आदिक प्रपञ्च धर्मोंका निषेधकरिके अर्थात् निवर्ते विज्ञापण ब्रह्मके बोधक हैं । यार्ते "निषेध" कहिये ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १६६

* १४१ प्रश्न:-आत्माके विधेयविशेषण कौनसे हैं?

उत्तर:-१ सत् २ चित् ३ आनन्द ४ ब्रह्म
५ स्वयंप्रकाश ६ कूटस्थ ७ साक्षी ८ द्रष्टा
९ उपद्रष्टा १० एक इत्यादिक हैं ॥

* १४२ प्रश्न:-सत् आत्मा कैसे हैं ?

उत्तर:-१ जिसकी ज्ञानसे वा और किसीसे
वी निवृत्ति होवै नहीं । सो सत् है ॥

आत्माकी जाते ज्ञानसे वा और किसीसे वी
निवृत्ति होवै नहीं । याते आत्मा सत् है ॥

* १४३ प्रश्न:-चित् आत्मा कैसे है ?

उत्तर:-२ अलुप्तप्रकाश सो चित् है ॥

आत्मा जाते अलुप्तप्रकाशरूप है याते

आत्मा चित् है ॥

* १४४ प्रश्न - आनन्द आत्मा कैलें है ?

उत्तर.—३ परम कहिये सर्वसँ अधिक प्रीतिका जो विषय । सो आनन्द है ॥

आत्माविषै जातें सर्वकी परमप्रीति है । यातें आत्मा आनन्द है ॥

* १४५ प्रश्न - ब्रह्मरूप आत्मा कैलें है ?

उत्तर —४

(१) आत्मा सच्चित्आनदरूप धृति युक्ति औ अनुभवसँ सिद्ध है । औ

(२) ब्रह्म यी शास्त्र (उपनिषद्) विषै सच्चित्आनदरूप कहाहै ।

जातें आत्मा ब्रह्मरूप है ॥ किंवा ब्रह्म नाम व्यापकका है ॥ जिसका देशनै शून्य न होयै सो व्यापक कहियेहै ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण । ७ ॥ १७१

(१) आत्मा जो ब्रह्मसँ भिन्न होवै तौ देशतँ अन्तवाला होवैगा ।

(२) जिसका देशतँ अन्त होवै तिसका कालतँ वी अन्त होवैहै । यह नियम है ॥

जिसका देशकालतँ अन्त होवै सो अनित्य कहियेहै । तातँ आत्मा अनित्य होवैगा । यातँ आत्मा ब्रह्मसँ भिन्न नहीं ॥ औ

(१) आत्मासँ भिन्न जो ब्रह्म होवै तौ ब्रह्म अनात्मा होवैगा ॥

(२) जो अनात्मा घटादिक हैं सो जड हैं । तातँ आत्मासँ भिन्न ब्रह्म । जड होवैगा ।

सो वार्ता श्रुतिसँ विरुद्ध है ॥

यातँ आत्मासँ भिन्न ब्रह्म नहीं । तातँ ब्रह्मरूप आत्मा है ॥

* १४६ प्रश्नः—स्वयंप्रकाश आत्मा कैसे है ?

उत्तर -५

(१) जो दीपककी न्यारी आपके प्रकाशनै-
विषी किसीकी भी अपेक्षा करे नहीं । औ

(२) आव सर्वका प्रकाशक होवे ।

सा स्वयंप्रकाश कहिये है ॥

ऐसा आत्माही है । यातें आत्मा स्वयं
प्रकाश है ॥

अथवा

(१) जो सदा अपरोक्षरूप होवे । औ

(२) किसी ज्ञान का विषय न होवे ।

सो स्वयंप्रकाश कहियेहै ॥

आत्मा जातें सदाअपरोक्षरूप है औ प्रकाश-
रूप होनै किंसी भी ज्ञानका विषय (प्रकाश्य) न
नहीं । यातें आत्मा स्वयंप्रकाश है ॥

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १७३

* १४७ प्रश्न:—कूटस्थ आत्मा कैसे है ?

उत्तर:—६ कूट नाम लोहारके अहिरनका है । ताकी न्यांई जो निर्विकार (अचल) रूपसे स्थित होवै । कूटस्थ कहियेहै ॥

जैसे लोहार अनेकघाट घडताहै । तौ वी अहिरन ज्युंका त्युं रहताहै । तैसें मनरूपलोहार व्यवहाररूप अनेकघाट घडताहै । तौ वी आत्मा ज्युंका त्युं रहताहै । यातें आत्मा कूटस्थ है ॥

कूटस्थ कहनैसें अचल औ अक्रिय अर्थसें सिद्ध भया ॥

* १४८ प्रश्न:—साक्षी आत्मा कैसे है ?

उत्तर:—७

(१) लोकव्यवहारविषै

[१] उदासीन कहिये रागद्वैपरहित होवै

[२] समीपवर्ती होवै । औ

[३] चेतन होवै ।

सो सार्ची कहियेहै ॥

यार्तै आत्मा

[१] देहादिकरतें उदासीन है । औ

[२] समीपवर्ती है । औ

[३] चेतन कहिये अजडप्रकाश है ।

यार्तै आत्मा सार्ची है ।

(२) वा अत करणरूप उपाधियाला चेतन
सार्ची कहियेहै ॥

(३) वा अत करण औ अत करणकी वृत्ति-
नवियै वर्तमान चेतनमात्र [बेचल-
चेतन] सार्ची कहियेहै ॥

ऐसा आत्मा है । यार्तै सार्ची है ॥

* १४६ प्रश्न:-द्रष्टा आत्मा कैलें है ?

उत्तर:—८ देखनैहारा जो होवै सो द्रष्टा कहियेहै ॥

आत्मा जातें सर्वदृश्यका जाननैहारा है । यातें आत्मा द्रष्टा है ॥

* १५० प्रश्न:—उपद्रष्टा आत्मा कैसैं है ?

उत्तर:—९ जैसैं

(१-१५) यज्ञशालाविषै यज्ञकार्यके करनै-
हारे १५ ऋत्विज होवैहैं । औ

(१६) सोलवाँ यजमान होवैहैं । औ

(१७) सतरावाँ यजमानकी स्त्री होवैहैं । औ

(१८) अठारवाँ उपद्रष्टा कहिये पास
बैठके देखनैहारा- होवैहैं । सो कछु
वी कार्य करता नहीं ॥

सर्व

(१-१५) स्थूलदेहरूप यज्ञशालाविषे पांच-
मानइंद्रिय पांचकर्मइंद्रिय श्री पांच-
प्राण । ये १५ अष्टत्वज हैं ॥

(१६) सोलवां मनरूप यज्ञमान है । श्री

(१७) सतरावां बुद्धिरूप यज्ञमानकी श्री है ।

(१८) ये सर्व आपआपके विषयके ग्रहण
करनेरूप भोगमय यज्ञका कार्य
करतेहैं श्री इनसर्वका समीपवर्ती
जाननेरूप आत्मा अष्टासवां उप-
द्रष्टा है ॥

• १५ प्रश्न:-एक आत्मा कैसैं है ?

उत्तर:-१० आत्माका सजातीय कहिये
जानियेला श्रीर आत्मा नहीं है । यत्ने आत्मा
एक है ॥

इत्यादिक आत्माके विधेयविशेषण है ।

कला] ॥ आत्माके विशेषण ॥ ७ ॥ १७७

१५२ प्रश्नः—आत्माके निषेधविशेषणकौनसैं हैं?

उत्तरः—१ अनंत २ अखंड ३ असंग
४ अद्वितीय ५ अजन्मा ६ निर्विकार
७ निराकार ८ अव्यक्त ९ अव्यय १० अक्षर
इत्यादिक हैं ॥

१५३ प्रश्नः—अनंत आत्मा कैसे है ?

उत्तरः—१

(१) आत्मा व्यापक है ॥ तातैं आत्माका

देशतैं अंत नहीं । औ

(२) जातैं आत्मा नित्य है । तातैं आत्माका

कालतैं अंत नहीं । औ

(३) जातैं आत्मा अधिष्ठान होनैतैं सर्वका

स्वरूप है । तातैं आत्माका वस्तुतैं

अंत नहीं । औ

जातैं आत्माका देश काल औ वस्तुतैं अंत नहीं
कहिये परिच्छेद नहीं तातैं आत्मा अनंत है ॥

* १५४ प्रश्न:—अखंड आत्मा कैसे है ?

उत्तर:—२

(१) जीवईश्वरकाभेद । जीवनका परस्पर-भेद । जीवजडका भेद । जड़ईश्वरका भेद । जडजडका भेद । ये पांचभेद हैं । तिनमें आत्मा रहित है । अथवा-

(२) सजातीय विजातीय स्वगत भेदमें आत्मा रहित है ।

यानें आत्मा अखंड है ॥

* १५५ प्रश्न:—असंग आत्मा कैसे है ?

उत्तर:—३ संग नाम संबंध का है ॥

सो संबंध तीन प्रकारका है:—(१) सजातीय-संबंध (२) विजातीयसंबंध (३) स्वगतसंबंध ॥

(१) अपनी जातियालेसे जो संबंध है । सो सजातीयसंबंध है । जैसे ब्राह्मणका अन्यब्राह्मणमें संबंध है ॥

(२) अन्यजातिवालेसँ जो संबंध है । सो विजातीयसंबंध है । जैसे ब्राह्मणका शूद्रसँ संबंध है ॥

(३) अपने अवयवसँ कहिये अंगसँ जो जो संबंध है । सो स्वगनसंबंध है । जैसे ब्राह्मणका अपने हस्तपादमस्तक-आदिकअंगसँ संबंध है ।

(१) [१] आत्मा (चेतन) एक है । ताँ ताकी जाति नहीं । औ

[२] जीव ईश्वर ब्रह्मा विष्णु शिव में तं इत्यादिकभेद तो उपाधिके कियेहैं । ताँ मिथ्या हैं ।

याँ आत्माका काहूके साथि सजा-तीयसंबंध बनै नहीं ॥

(२) तैसेँ आत्मा अद्वैत है औ सत् है । तिसतँ भिन्न माया (अज्ञान) औ मायाका

कार्य स्थूलसूक्ष्मप्रपञ्च प्रतीत होवैद्वै ।
 सो असत् है औ असत् कह्यु वस्तु
 नहीं । यातैं आत्माका काहूके साथि
 विजातीयसंबंध बनै नहीं ॥

(३) तैसैं आत्मा निरवयव है औ सच्चिदा
 नदादिक तो आत्माके अवयव नहीं ।
 किंतु एकरूप होनेतैं आत्माका
 स्वरूप है । तातैं आत्माका काहूके
 साथि स्वगतसंबंध बनै नहीं ॥

इसरीनिसैं आत्मा सर्वसंबंधसैं रहित है यातैं
 असंग है ।

* (५६ प्रश्न — अद्वैत आत्मा कैसे है ।

उत्तर — ४ द्वैत जो प्रपञ्च । सो स्वप्नकी
 न्याई कल्पित होनेतैं वास्तव नहीं है । यातैं
 आत्मा द्वैतसैं रहित होनेतैं आत्मा अद्वैत है ॥

*१५७ प्रश्नः—अजन्मा आत्मा कैसँ है ?

उत्तरः—५ स्थूलदेहका धर्म जन्म है ॥

सूक्ष्मदेहका धर्म वी नहीं तौ आत्माका धर्म जन्म कहाँसँ होवैगा ?

फेर जो आत्मा का जन्म मानिये तौ आत्माका मरण वी मानना होवैगा । तातँ आत्मा अनित्य सिद्ध होवैगा । सो परलोकवादी आस्तिकनकूँ अनिष्ट कहिये अवाञ्छित है । काहेतँ

(१) जन्ममरणवाला वस्तु है ताका आदि-अंतविषै अभाव है । तातँ पूर्वजन्म-विषै आत्मा नहीं था औ तिसके कर्म वी नहीं थे । तव इस जन्मविषै आत्माकूँ कर्मसँ विना भोग होवैहै । औ

(२) मरणसे अनंतर आत्मा नहीं होवैगा ।
 तार्ने इसजन्मविषे किये कर्मका भोगसे
 विना नाश होवैगा ।

ताले वेदोक्तकर्मकी व्यर्थता होवैगी । यार्ने
 आत्माका धर्म जन्म नहीं ॥ तार्ने आत्मा
 अजन्मा है । औ

अजन्मा कहुनैले अजरअमर अर्थसे सिद्ध
 भया ॥

*१५= प्रश्न — निर्विकार आत्मा कैसे है ?

उत्तर — ६ जैसे (१) घटके जन्म (२)
 अस्तित्वना कहिये प्रकटता (३) वृद्धि (४)
 विपरिणाम (५) अपक्षय (६) विनाश । ये
 घटधर्म हैं । परंतु घटविषे स्थित औ घटसे भिन्न
 जा आकाश ह । तिसके धर्म नहा ॥

तैसै

(१) “देह जन्मताहै” यह जन्म ॥

(२) “देह जन्म्याहै” यह अस्तिपना
(पूर्व नहीं था । अब है) ॥

(३) “देह बालक भया” यह वृद्धि ।

(४) “देह युवा भया” यह विपरिणाम ।

(५) “देह वृद्ध भया” यह अपक्षय ॥

(६) “देह मरणकूं पाया” यह त्रिनाश ॥

ये षट्कार देहके धर्म हैं ॥ देहकूं जाननै-
हारा अरु देहसै न्यारा जो आत्मा है । तिसके
धर्म नहीं ॥

इसरीतिसै षट्कारनतै रहित आत्मा
निधिकार है ॥

● १५६ प्रश्न — निराकार आत्मा कैसा है ?

उत्तर:— ७ (१) स्थूल (२) सूक्ष्म (३) लघु (४) टुका कहिये छोटा । व्यापक प्रकारके अवयवों के आकार हैं ॥

(१) आत्मा । इन्द्रिय और मन के अविषय होनेसे सूक्ष्म है । तब स्थूल नहीं ॥

(२) आत्मा व्यापक है तब सूक्ष्म नहीं कहिये अणु नहीं ॥

(३-४) आत्मा सर्वत्रिकाने ओतप्रोत है । तब लघु और टुका नहीं ॥

याने आत्मा निराकार है ॥

● १५७ प्रश्न.— अव्यक्त आत्मा कैसा है ?

उत्तर— ८ आत्मा । जब मन इन्द्रिय आदिकका अगोचर होनेसे अव्यक्त है । याने आत्मा अव्यक्त है ।

१६१*प्रश्नः—अव्यय आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—६ जैसें कोठेमें धान्यके निकासनै-
करि धान्यका व्यय कहिये घटना होवैहै । तैसें
आत्माका व्यय होवै नहीं । यातें आत्मा
अव्यय है ॥

*१६२प्रश्नः—अक्षर आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—१० आत्मा जातें क्षर कहिये नाशतें
रहित है । यातें आत्मा अक्षर है ॥ याहीकुं
अक्षय । अमृत औ अविनाशी वी कहैहैं ॥

इसरीतिसैं आत्माके निषेध्यविशेषण हैं ॥

*१६३प्रश्नः—ये कहे जो आत्माके विशेषण । सो
परस्परअभिन्न किसरीतिसैं है ?

उत्तरः—सच्चिदानंदादिक जो आत्माके गुण
होवैं तौ परस्परभिन्न होवैं । औ ये आत्माके
गुण नहीं । किंतु स्वरूप हैं । यातें परस्परभिन्न
नहीं । किंतु अभिन्न हैं । औ

१८६ ॥ विचारधरोत्तर्य ॥ [सप्तम

१ एकही आत्मा नाशरहित है। याते सत्
कहियेहै। श्री

२ जड़सै विलक्षण प्रकाशरूप है। याते चित्
कहियेहै। श्री

३ दुःखसै विलक्षण मुख्यमीतिका विषय है
याते आनंद कहियेहै ॥

वैसै सर्व विशेषणविषयै जानना ॥

दृष्टांतः—

जैसे एकही पुत्र

१ पिताकी दृष्टिसँ पुत्र कहियेहै। श्री

२ पितामहकी दृष्टिसँ पौत्र कहियेहै। श्री

३ पितामहाकाकी दृष्टिसँ भ्रातृज कहियेहै।

४ मातुलकी दृष्टिसँ भ्रातृज कहियेहै।

किंवा जैसे एकहीं संन्यासी ।

१ पशु स्त्री गृहस्थ अदंडी आदिकनकी दृष्टिसँ मनुष्य पुरुष त्यागी दंडी इत्यादि विधेय-विशेषणोंकरिके कहियेहै । औ

२ घट पापाण वृक्ष आदिककी दृष्टिसँ अघट अपापाण अवृक्ष आदिक निषेध्यांविशेषणोंकरिके कहियेहै ॥

तैसेँ एकही आत्मा प्रपंचके विशेषण असत् जड दुःख औ अंत खंड सङ्ग आदिकी दृष्टिसँ सत् चित् आनंदादिक औ अनंतआदिक कहियेहैं ॥

इसरीतिसँ कहे जो आत्माके विशेषण सो परस्पर भिन्न नहीं । किंतु अभिन्न हैं ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये आत्मविशेषण
वर्णननामिका सप्तमकला समाप्ता ॥७॥

अथ अष्टमकलाप्रारम्भः ॥ ८ ॥

॥ सत्त्वित्थ्यानंदका विशेषवर्णन ॥

॥ इन्द्रविजय छंद ॥

सच्चिदानंदसरूपहि मे यह ।

सद्गुरुके मुखसै पहिधान्यो ॥

जागृत स्वप्न सृष्टि ज्ञ आदिक

तीनहुँ कालहिमे परमान्यो ॥

जागृतआदि लयाविध तीनहुँ

कालहि हो इसने सत मान्यो ॥

तीनहुँ कालविषै सथ जानहुँ ।

या हिमै विदरूपहि जान्यो ॥ १४ ॥

अष्टमकला]॥सत्चित्त्रानन्दका विशेषवर्णनात्॥२८६

मैं प्रिय हूँ धन पुत्र रु १४०पुद्गल-
आदिकर्तै अथकाल १४१अगान्यो ॥

आतमअर्थ सबे प्रिय आतम-
आपहि है प्रिय दुःख नसान्यो ॥

या हित मैं सबतै प्रियतम्म रु ।

हों परमानंद दुःखहि भान्यो ॥

देह १४२दशादि अतीत सु आतम ।

पूरणब्रह्म पीतांबर गान्यो ॥ १७ ॥

* १६४ प्रश्नः-सत् सो क्या है ?

उत्तरः-१ तीनकालमें जो अबाधित होवै ।
सो सत् है ॥

* १६५ प्रश्नः-चित् सो क्या है ?

उत्तरः-२ तीनकालमें जो सर्वकूँ जानै
सो चित् है ॥

॥ १४० ॥ स्थूलशरीर ॥ १४१ तृप्त ॥

॥ १४२ ॥ अवस्थाआदिकर्तै ॥

* १६६ प्रश्नः—आनन्द सो क्या है ?

उत्तरः—३ तीनकालमें जो परमप्रेमका विषय होवे । सो आनन्द है ॥

* १६७ प्रश्नः—मैं सत् हूँ । यह कैसे जानना ?

उत्तरः—१ तीनकालविषय मैं हूँ । यार्तैं मैं सत् हूँ । यह ऐसे जानना ॥

* १६८ प्रश्न —तीनकालविषय मैं हूँ । यार्तैं सा हूँ । यह कैसे जानना ?

उत्तरः—

१ (१) जाग्रतविषय मैं हूँ ।

(२) स्वप्नविषय मैं हूँ ।

(३) सुषुप्तिविषय मैं हूँ ॥

२ (१) नैसर्ग प्रातःकालविषय मैं हूँ ।

(२) मध्याह्नकालविषय मैं हूँ

(३) सायंकालविषय मैं हूँ ॥

- ३ (१) तैसैं दिवसविपै में हूं ।
 (२) रात्रिविपै में हूं ।
 (३) पक्षविपै में हूं ॥
- ४ (१) तैसैं मासविपै में हूं ।
 (२) ऋतुविपै में हूं
 (३) वर्षविपै में हूं ।
- ५ (१) तैसैं बाल्यअवस्थाविपै में हूं ।
 (२) यौवनअवस्थाविपै में हूं ।
 (३) वृद्धअवस्थाविपै में हूं ॥
- ६ (१) तैसैं पूर्वदेहविपै में हूं* ।
 (२) इसदेहविपै में हूं ।
 (३) भावीदेहविपै में हूं ॥

* या प्रकरणविपै " था " अरु "होऊंगा" ऐसैं उच्चारण करनैके योग्य भूत श्री भविष्यत्कालका बी "हूं" ऐसैं वर्तमानकी न्यांई उच्चारण क्रियाहै । सो

७ (१) तैसैं युगविषै में हं ।

(२) मनुविषै में हं ।

(३) कल्पविषै में हं ॥

८ (१) तैसैं भूतकालविषै में हं ।

(२) वर्त्तमानकालविषै में हं ।

(३) भविष्यत्कालविषै में हं ॥

इसरीतिसैं तीनकालविषै में हं । यानैं सत्
हं । यह जानना ॥

भूतादिकालकी कल्पनामात्रता (निवृत्तात्व) के सूचन
करनै अर्थ है ॥ श्री आत्माकी सदादिरूपताविषै श्रुति-
आदिक अनेकप्रस एोंका सदुभाव है करु ताकी किसी-
कालमें अमनादिविषै प्रमाणका अभाव है यानैं सर्व-
कालोविषै आत्मा सविषदानरूप सिद्धै । यह जानना ॥

कला] सत्चित्त्रानंशका विशेषवर्णन ॥८॥१६३

* १६६ प्रश्नः—मेरेसँ भिन्न नामरूपवस्तुसहित
तीनकाल क्या जाननै ?

उत्तरः—मेरेसँ भिन्न नामरूपवस्तुसहित-
तीनकाल असत् हँ ऐसँ जाननै ?

* १७० प्रश्नः—सत् औ असत्का निर्णय किससँ
होवैहै ?

उत्तरः—सत् औ असत्का निर्णय
अन्वय व्यतिरेकरूप युक्तिसँ होवैहै ॥

* १७१ प्रश्नः—सत्असत्के निर्णयविषै अन्वय
व्यतिरेकरूप युक्ति कैसँ जाननी ?

उत्तरः—

१ (अ) जो मैं जाग्रत्विपै हू ।

सोई मैं स्वप्नविपै हूँ ।

याते मैं सत् हू ।

(व्य) जाग्रत् मेरेविपै नहीं

याते यह जाग्रत् असत् है

(अ) जो मैं स्वप्नविपै हूँ ।

सोई मैं सुषुप्तिविपै हू ।

याते मैं सत् हूँ ॥

(व्य) स्वप्न मेरेविपै नहीं ।

याते यह स्वप्न असत् है ॥

(अ) जो मैं सुषुप्तिविपै हू ।

सोई मैं प्रातःकालविपै हूँ ।

याते मैं सत् हूँ ॥

(व्य) सुषुप्ति मेरेविपै नहीं ।

याते यह सुषुप्ति असत् है ॥

कला] ॥ सत्त्विन् आनन्दकाविशेषवर्णन ॥८॥ १६५

२ (अ) जो मैं प्रातःकालविपै हूं ।
सोई मैं मध्याह्नकालविपै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) प्रातःकाल मेरेविपै नहीं ।
यातैं यह प्रातःकाल असत् है ॥

(अ) जो मैं मध्याह्नकालविपै हूं-
सोई मैं सायंकालविपै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) मध्याह्नकाल मेरेविपै नहीं ।
यातैं यह मध्याह्नकाल असत् है ।

(अ) जो मैं सायंकालविपै हूं ।
सोई मैं दिवसविपै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) सायंकाल मेरेविपै नहीं ।
यातैं यह सायंकाल असत् है ॥

३ (अ) जो मैं दिवसविधै हं ।

सोई मैं रात्रिविधै हं ।

यानें मैं सत् हूं ॥

(व्य) दिवस मेरेविधै नहीं ।

यानें यह दिवस असत् है ॥

(अ) जो मैं रात्रिविधै हं ।

सोई मैं पक्षविधै हं ।

यानें मैं सत् हूं ॥

(व्य) रात्रि मेरेविधै नहीं ।

यानें यह रात्रि असत् है ॥

(अ) जो मैं पक्षविधै हं ।

सोई मैं मासविधै हं ।

यानें मैं सत् हूं ॥

(व्य) पक्ष मेरेविधै नहीं ।

यानें यह पक्ष असत् है ॥

(अ) जो मैं मासविषै हूं ।

सोई मैं ऋतुविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) मास मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह मास असत् है ॥

(अ) जो मैं ऋतुविषै हूं ।

सोई मैं वर्षविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) ऋतु मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह ऋतु असत् है ॥

(अ) जो मैं वर्षविषै हूं ।

सोई मैं शाल्यअवस्थाविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) वर्ष मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह वर्ष असत् है ॥

५ (अ) जो मैं बाल्यअवस्थाविधै हू ।

सोई मैं यौवनअवस्थाविधै हू ।

यातैं मैं सत् हू ॥

(व्य) बाल्यअवस्था मेरेविधै नहीं ।

यातैं यह बाल्यअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं यौवनअवस्थाविधै हू ।

सोई मैं वृद्धअवस्थाविधै हू ।

यातैं मैं सत् हू ॥

(व्य) यौवनअवस्था मेरेविधै नहीं ।

यातैं यह यौवनअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं वृद्धाअवस्थाविधै हू ।

सोई मैं पूर्वदेहविधै हू ।

यातैं मैं सत् हू ॥

(व्य) वृद्धअवस्था मेरेविधै नहीं ।

यातैं यह वृद्धअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं पूर्वदेहविपै हूं ।

सोई मैं इसदेहविपै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) पूर्वदेह मेरेविपै नहीं ।

यातैं यह पूर्वदेह असत् है ॥

(अ) जो मैं इसदेहविपै हूं ।

सोई मैं भावीदेहविपै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) यह देह मेरेविपै नहीं ।

यातैं यह देह असत् है ॥

(अ) जो मैं भावीदेहविपै हूं ।

सोई मैं युगविपै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ।

(व्य) भावीदेह मेरेविपै नहीं ।

यातैं यह भावी देह असत् है ॥

७ (अ) जो मैं युगविपै हूं ।
 सोई मैं मनुविपै हूं ।
 यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) युग मेरेविपै नहीं ।
 यातैं यह युग असत् है ॥

(थ) जो मैं मनुविपै हूं ।
 सोई मैं कल्पविपै हूं ।
 यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) मनु मेरेविपै नहीं ।
 यातैं यह मनु असत् है ॥

(अ) जो मैं कल्पविपै हूं ।
 सोई मैं भूतकाल विपै हूं ।
 यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) कल्प मेरेविपै नहीं ।
 यातैं यह कल्प असत् है ॥

कला] ॥ सत्चित्श्रानंदका विशेषवर्णन ॥८॥ २०१

(अ) जो मैं भूतकालविषै हूं । सोई मैं
भविष्यत्कालविषै हूं । यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) भूतकाल मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह भूतकाल असत् है ॥

(अ) जो मैं भविष्यत्कालविषै हूं ।

सोई मैं वर्तमानकालविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) भविष्यत्काल मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह भविष्यत्काल असत् है ॥

(अ) जो मैं वर्तमानकालविषै हूं ।

सोई मैं सर्वकालविषै हूं ।

यातैं मैं सत् हूं ॥

(व्य) वर्तमान काल मेरेविषै नहीं ।

यातैं यह वर्तमानकाल असत् है ॥

इसरीतिसैं सत् असत्के निर्णयविषै अन्वय-
व्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

• १७० प्रश्न - चित् कैसें ह ?

उत्तर:—२ तीनकालविषै में जानताह
यानै में चित् ह ॥

• १७३ प्रश्न:—तीनकालविषै में जानताह य
चित् ह । यह कैसें जानना ?

उत्तर:—

- १ [१] जाग्रतकृं में जानताह ।
- [२] स्वप्नकृ में जानताह ।
- [३] सुषुप्तिकृं में जानताह ।
- २ [१] तैसै प्रात.कालकृं में जानताह ।
- [२] मध्याह्नकालकृं में जानताह ।
- [] सायंकालकृं में जानताह ।
- ३ [१] तैसै दिवसकृ में जानताह ।
- [२] रात्रिकृ में जानताह ।
- [३] पक्षकृ में जानताह ।
- ४ [१] तैसै मासकृ में जानताह ।

कला]॥ सत्चित्त्रानन्दकाविशेषवर्णन॥६॥ २०३

- [२] ऋतुकुं मैं जानताहूं ।
[३] वर्षकूं मैं जानताहूं ॥
- ५ [१] तैसैं वाल्यअवस्थाकूं मैं जानताहूं ।
[२] यौवनअवस्थाकूं मैं जानताहूं ।
[३] वृद्धअवस्थाकूं मैं जानताहूं ॥
- ६ [१] तैसैं पूर्वदेहकूं मैं जानताहूँ ।
[२] इस देहकूं मैं जानताहूं ।
[३] भावीदेहकूं मैं जानताहूं ॥
- ७ [१] तैसैं युगकूं मैं जानताहूं ।
[२] मनुकूं मैं जानताहूं ।
[३] कल्पकूं मैं जानताहूं ॥
- ८ [१] तैसैं भूतकालकूं मैं जानताहूं ।
[२] भविष्यत्कालकूं मैं जानताहूं ।
[३] वर्त्तमानकालकूं मैं जानताहूं ॥

इसरोतिसैं सर्वकालविषै मैं जानताहूं । यातैं
चित् हूं । यह जानना ॥

• १७४ प्रश्नः—मेरेमें भिन्न नामरूपयस्तुसहित
तीनकाल क्या जानने ?

उत्तरः—मेरेमें भिन्न नामरूपयस्तुसहित
तीनकाल जड़ हूँ । ऐसे जानने ॥

१७५ प्रश्न—चित् श्री जड़का निर्णय किसमें
होयैहै ?

उत्तरः—चित् श्री जड़का निर्णय
अन्वयव्यतिरेकरूप युक्तिमें होयैहै ॥

• १७६ प्रश्नः—चित् श्री जड़के निर्णयविषे अन्वय
व्यतिरेकरूप युक्ति कैसे जाननी ?

उत्तर —

१ (अ) मैं जाग्रत्कृ जानताहूँ ।

सोरे मैं स्वप्नकृ जानताहूँ ।

याने मैं चित् हूँ ॥

कला] ॥सत्चित् आनन्दका विशेषवर्णन ॥८॥२०५

(अ) जो मैं स्वप्नकृं जानताहूं ।

सोई मैं सुषुप्तिकृं जानताहूं ।

यातें मैं चित् हूं ॥

(व्य) स्वप्न मेरेकृं जानै नहीं ।

यातें यह स्वप्न जड है ॥

इत्यादि इसरीतिसैं चित् औ जडके निर्णयविषै

अन्वयव्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

* १७७ प्रश्न:—आनन्द मैं कैसें हूं ?

उत्तर:—३ तीनकालविषै मैं परमप्रिय हूं ।

यातें मैं आनन्द हूं ॥

* १७८ प्रश्न:—तीनकालविषै मैं प्रिय हूं यातें
आनन्द हूं । यह कैसें जानना ?

उत्तरः—

- १ (१) जाग्रत्विषै मीं प्रिय ह ।
 (२) स्वप्नविषै मीं प्रिय ह ।
 (३) सुषुप्तिविषै मीं प्रिय ह ॥
- २ (१) तैसै प्रात कालविषै मीं प्रिय ह ।
 (२) मध्याह्नकालविषै मीं प्रिय ह ।
 (३) सायंकालविषै मीं प्रिय ह ॥
- ३ (१) तैसै दिवसविषै मीं प्रिय ह ।
 (२) रात्रिविषै मीं प्रिय ह ।
 (३) पक्षविषै मीं प्रिय ह ॥
- ४ (१) तैसै मासविष मीं प्रिय ह ।
 (२) ऋतुविष मीं प्रिय ह ।
 (३) ययविषै मीं प्रिय ह ॥
- ५ (१) तैसै चात्यश्रयस्याविषै मीं प्रिय ह ।
 (२) यांयनश्रयस्याविषै मीं प्रिय ह ।
 (३) वृद्धश्रयस्याविषै मीं प्रिय ह ॥

कला] ॥ मत्चित् आनन्दका वर्णन ॥ ८ ॥ २०७

- ६ (१) तैसैं पूर्वदेहविणै में प्रिय हूं ।
(२) इसदेहविणै में प्रिय हूं ।
(३) भारीदेहविणै में प्रिय हूं ॥
- ७ (१) तैसैं युगविणै में प्रिय हूं ।
(२) मनुविणै में प्रिय हूं ।
(३) कल्पविणै में प्रिय हूं ॥
- ८ (१) तैसैं भूतकालविणै में प्रिय हूं ।
(२) भविष्यत्कालविणै में प्रिय हूं ।
(३) वर्त्तमानकालविणै में प्रिय हूं ॥

इसरीतिसैं तीनकालविषपरमप्रिय हूं । यातें
में आनन्द हूं । यह जानना ॥

* १७६ प्रश्न:—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित
तीनकाल क्या जाननै ?

उत्तर:—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित
तीनकाल दुःख हैं ऐसैं जानना ॥

* १५० प्रश्नः—आनन्द औ दुःखका निर्णय किससँ होवैहै ?

उत्तरः—आनन्द औ दुःखका निर्णय अन्ययव्यतिरेकरूप युक्तिसँ होवैहै ।

* १५१ प्रश्नः—आनन्द औ दुःखके निर्णयविषे अन्ययव्यतिरेकरूप युक्ति कैसेँ जाननी ?

उत्तर —

(अ) जो में जाग्रतविषे [परम] प्रिय हूँ ।

सोई में स्वप्नविषे प्रिय हूँ ।

यातेँ में १४१ आनन्द हूँ ॥

(ब्य) जाग्रत मेरेकुँ प्रिय नहीं ।

यातेँ यह जाग्रत दुःख हूँ ॥

इसरातिसेँ आनन्द औ दुःखके निर्णयविषे अन्ययव्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

कला]॥सत्चित् आनन्दका विशेषवर्णन ॥ ८ ॥२०६

* १८२ प्रश्न:-मैं परमप्रिय हूँ । यह कैसे जानता?

उत्तर:—दृष्टांत:—

१ जैसे पुत्रके मित्रविषे प्रीति है । सो पुत्रवास्ते है । श्री

२ पुत्रविषे जो प्रीति है । सो तिसके मित्रवास्ते नहीं ।

याते' पुत्र अधिकप्रिय है ॥

भासताहै । सो सो काल यद्यपि दुःखरूप है । तथापि
१ अध्यासकरिके आत्माक' चिदाभासद्वारा प्रिय
भासताहै ॥ तत्र अन्यकाल प्रिय भासते नहीं । याते'
सर्वकालमें व्यभिचारीप्रीति है । ताते' ये वास्तव
दुःखरूपहीं हैं । श्री

२ आत्मामें कहिये आपमें अव्यभिचारी(सर्वदा)
प्रीति है । याते' आत्मा आनन्दरूप है ।

१ तैसै धनपुत्रादिकविधै जो प्रीति है । सो
आत्माके वास्ते है । श्री

२ आत्माविधै जो प्रीति है । सो धनपुत्रादिकके
वास्ते नहीं ।

यानै आत्मा अधिकप्रिय है ॥

इसगीतिसँ में परमप्रिय हँ । यह जानना ॥

• १८३ प्रश्न प्रीतिका न्यून अधिकभाव कैसे
जानना ?

उत्तर:—

१ ज्ञातृविधै सर्वसै प्रिय द्रव्य है ।
काहेन धनवास्ते पुरुष देश छोड़िके परदेश
जातै श्री अनेकनीचर्म करताहै । यारै द्रव्य
प्रिय है ॥

२ द्रव्यन पुत्र प्रिय है । काहेन पुत्र
दुष्कर्मकरैक राजगृहविधै बन्धनकू प यादोषै
तय निसकू धन दके छुडावताहै । यारै धनतै
पुत्र प्रिय है ॥

३ पुत्रतैं शरीर प्रिय है । काहेतैं जव दुर्भिक्ष कहिये दुष्काल होवै । तव पुत्रकूं बेचके शरीरका निर्वाह करैहै । यातैं पुत्रतैं शरीर प्रिय है ॥

४ शरीरतैं इंद्रिय प्रिय है । काहेतैं कोई मारनै आवै तव इंद्रियनकूं छुपायके “मेरे शरीर-विषै मार । परन्तु आंख कान नाक मुखविषै मारनः नहीं ” ऐसैं कहताहै । यातैं शरीरतैं इंद्रिय प्रिय है ॥

५ इंद्रियतैं प्राण (मन) प्रिय है । काहेतैं किसीकूं दुष्टकर्म करनैसैं राजाका हुक्म भयाहोवै कि “ इसके प्राण लेने ” तब कहता-है कि मेरे धन पुत्र स्त्री गृह लूट ल्यो ।

परन्तु प्राण मत लेना । तौ घो राजाकी आज्ञा तौ प्राणके लेनेविषे है । तब कहताहै कि “ मेरा कान काटो । नाक काटो । हाथ काटो । पाउ काटो । परन्तु मेरे प्राण मत लेना ” । यार्ते इद्रियनै प्राण प्रिय है ।

६ प्राणनै आत्मा प्रिय है । काहेत किर्तीक अनिशयशक्तिसे पीडा होतीहोवै । तब कहताहै कि “ मेरे प्राण जाये तब मैं सुखी होऊ ” यार्ते प्राणनै आत्मा प्रिय है ॥

इसरीतिसे प्रीतिका व्यूनअधिकभाव जानना ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये सच्चिदानंदविशेष-
घर्णननाभिका अष्टमकला समाप्ता ॥ ८ ॥

अथ नवमकलाप्रारम्भः ॥ ९ ॥

॥ अवाच्यसिद्धांतवर्णन ॥

॥ इन्द्रविजयल्लंद ॥

ब्रह्म अहै मनवानि-अगोचर ।

शास्त्र रु संत कहै अरु ध्यावै ॥

वेद चदे ललुनादिकरति रु

वृत्ति विआप्ति जनो मन लावै ॥

है जु सदादिविधेयविशेषण ।

वे असदादिक भिन्न कहावै ॥

सत्य अपेक्षिक आदि विरोधि^{१४४}जु

अस तर्जा^{१४५}परमार्थ लखावै ॥१८॥

॥ १४४ ॥ आपेक्षिकसत्य । वृत्तिज्ञान औ विषया-
नंदआदिक विरोधि जो अंश है । ताकूं त्यागिके ॥

॥ १४५ ॥ वास्तवरूप जो निरपेक्षसत्य । चेतनरूपज्ञान
औ स्वरूपानंद आदिक । ताकूं लक्षणसैं बोधन करै हैं ॥

हे जु अनंत अखंड असंग रु
अद्वयआदिनिपेध्य रहावै ॥

वे परंपर निपेघ करी अव-
शेषितवस्तु गिराषिन गावै ॥

यूं परमात्म आत्म देवर्हा ।
वेद रु शास्त्र सचे सुरटावै ॥

१४५ पद्धिन न्यागि अभास पीतांबर ।
वृत्ति अह अपरोक्षहि पावै ॥ १६ ॥

॥ १४६ ॥ पद्धिनपीतांबर कहेई कि—आमास
(कचन्या ८ वृ) न्यागिडे अद्वयले (वृत्तिव्यतिरिक्त),
अपरोक्षभासै ॥ यह अर्थ है ॥

८४ प्रश्नः—ब्रह्मात्मा जब वाणीका विषय नहीं ।
तब सत्चित्आनन्दआदिकविशेषणसँ
कैसे कहिये है ?

त्तरः—ब्रह्मात्माके कितनैक १४७ विधेयविशेषण
हैं औ कितनैक १४८ निषेध्यविशेषण हैं । तिनमें
१ विधेयविशेषण जो सदादिक हैं । सो प्रपंच
का निषेधकरिके अवशेष (बाकी रहे) ब्रह्मकूँ
१४६ लक्षणसँ साक्षात्बोधन करैहैं । औ
२ निषेध्यविशेषण जो अन्तलादिक हैं । सो तो
साक्षात्प्रपंचकाही निषेध करैहैं औ तिसँ
विलक्षण ब्रह्मात्मा अर्थतँ सिद्ध होवैहै ।
ताँ ब्रह्मात्मा अवाच्य होनैतँ किसी विशेषणसँ
नहीं कहियेहै ॥

॥ १४७ ॥ ' सत् है । चित् है ' । इसप्रकार
विधिमुखसँ ब्रह्मके बांधकपद विधेयविशेषण हैं ।

॥ १४८ ॥ " अन्त (अन्तवाला नहीं) " " अखंड

(खड्ग ला नदी) ' इयमकार निषेधमुवर्त्से' महाऽ
बोधकपद निषेध्यविशेषण है ।

॥ १४६ ॥

१ (वा) माया श्री प्रपञ्चविवै आपेक्षिकमत्यता है श्री
महाविवै निरपेक्षमत्यता है । दोनू मिलिके
' सत् ' पदका वाच्य है । श्री

(ख) मायाकी सत्यताकू र्थातिके केवलमहाकी
मत्यता लक्ष्य है ॥

२ (वा) अतःकरणका घृतिरूप ज्ञान श्री धेतनरूप
ज्ञान । दोनू मिलिके ' चित् ' पदका
वाच्य है ।

(ख) घृतिज्ञानकू लोडिके केवलधेतनरूप ज्ञान
लक्ष्य है ॥

३ (वा) विषवानन्द । व मनानन्द श्री अज्ञानन्द । तीनू
मिलिके ' आत् ' पदका वाच्य है ॥

(ख) दनूकू सादके केवलमज्ञानरूप ज्ञानद-
पदक लक्ष्य है ॥

- ४ (वा) माया औ ताके कार्य आकाशादिकविषै
 आपेक्षिकव्यापकता है अरु ब्रह्म (आत्मा)
 विषै निरपेक्षव्यापकता है । दोनूं मिलिके
 'ब्रह्म' (विभु) पदका वाच्य है ॥
- (ल) केवलब्रह्म ' ब्रह्म ' पदका लक्ष्य है ॥
- (वा) साभासबुद्धिविषै आपेक्षिकस्वप्रकाशता है औ
 चेतनविषै निरपेक्षस्वप्रकाशता है । दोनूं
 मिलिके 'स्वयं प्रकाश' पादका वाच्य है ॥
- (ल) केवलचेतन स्वयं प्रकाश लक्ष्य है ॥
- (वा) रज्जुआदिकविषै आपेक्षिकअविकारिता है औ
 चेतनविषै निरपेक्षअविकारिता है । ये दोनूं
 मिलिके 'कूटस्थ' पदका वाच्य है ॥ औ
- (ल) केवलचेतन 'कूटस्थ' पदका लक्ष्य है ॥
- ५ (वा) लौकिकमाही औ मायाअविद्याउपहितचेतन
 (ब्रह्म औ आत्मा , दोनूं मिलिके 'माही'
 पदका वाच्य है । औ

(क) केवलमायाप्रविधाउपहितचेतन
पदका लक्ष्य है ।

(वा) सामान्यतःकरणकी वृत्तिरूप
विशिष्ट (सहित) चेतन । ' ३
वाच्य है । श्री

(ल) केवलचेतनभाग 'द्रष्टा' पदका

(वा) यज्ञका उपद्रष्टा श्री प्रत्यगात्मा
'उपद्रष्टा' पदका वाच्य ।

(ल) केवलप्रत्यगात्मा 'उपद्रष्टा' पद

० (वा) लोकगत एकाकीपुरुष श्री सज
ग्रह 'एक'पदका वाच्य है

(ल) केवलग्रह 'एक'पदका लक्ष्य
वेत्तै अनुक्तग्रन्थविधेयविशेषणोविधेयं

इमरीतिश्री प्रपञ्चक 'असत्' आ
निषेधक सशदिपशोके अर्थविधे श्री भा
प्रवृत्ति है ॥

* १८५ प्रश्नः—सदादिकविधेयविशेषण । प्रपञ्च
का निषेधकरिके अवशेषब्रह्मकृं कैसें
बोधन करैहैं ?

उत्तरः—

- १ सत् कहनैसैं असत्का निषेध भया । वाकी
रह्या सद्रूप । सो लक्षणसैं सिद्ध है ॥
- २ चित् कहनैसैं जड़का निषेध भया । वाकी
रह्या चिद्रूप । सो लक्षणसैं सिद्ध है ॥
- ३ आनंद कहनैसैं दुःखका निषेध भया । वाकी
रह्या आनंद(सुख)रूप । सो लक्षणसैं सिद्ध है ।
- ४ ब्रह्म कहनैसैं परिच्छिन्नका निषेध भया ।
वाकी रह्या व्यापक । सो लक्षणसैं सिद्ध है ।
- ५ स्वयंप्रकाश कहनैसैं परप्रकाशका निषेध
भया । वाकी रह्या स्वयंप्रकाश । सो लक्षण-
सैं सिद्ध है ॥

६ कृइस्थ (अविकारी) कहनैसँ विकारका निषेध भया । याकी रखा निर्विकारी । सो लक्षणसँ सिद्ध है ॥

७ साक्षी कहनैसँ साक्षका निषेध भया । याकी रखा साक्षी । सो लक्षणसँ सिद्ध है ॥

८ द्रष्टा कहनैसँ दृश्यका निषेध भया । याकी रखा द्रष्टा । सो लक्षणसँ सिद्ध है ॥

९ उपद्रष्टा कहनैसँ उपदृश्यका कहिये समीप कस्तुका निषेध भया । याकी रखा उपद्रष्टा । सो लक्षणसँ सिद्ध है ॥

१० एक कहनैसँ नानाका निषेध भया । याकी रखा एक । सो लक्षणसँ सिद्ध है ॥

इसरीनिसे अन्यविधेयविशेषणविधे धी जानना ॥^१

* १८६ प्रश्नः—अनन्तादिकनिषेध्यविशेषण । प्रपञ्च
का निषेध कैसें करैहें ?

उत्तरः—

अनन्त कहनैसैं देशकालवस्तुकृतपरिच्छेद
का निषेध भया । वाकी रह्या अनन्त । सो अर्थसैं
सिद्ध है ॥

इसरीतिसैं अन्यनिषेध्यविशेषणविधौ वी
जानना ॥

* १८७ प्रश्नः—इन विशेषणका ऐसैं अर्थ करनै
का क्या प्रयोजन है ?

उत्तरः—इन विशेषणका ऐसैं अर्थ करनै-
का प्रयोजन यह है कि । चेतनकूं मनवाणीका
अविप्रय करनैहारी श्रुतिके अर्थका अविरोध

होवैहै ॥ जातें गुण क्रिया जाति औ संबंधादिक
जो शब्दकी अरु मनकी प्रवृत्तिके निमित्तरूप
धर्म है । सो ब्रह्ममें नहीं है किंतु निर्धर्मक होनेतें
ब्रह्म निर्विशेष है । यानें धृति धी ताकूं मनचाणी
का अविषय कहतीहै ॥

क्रिया जो फलु बोलनाहै सो द्वैतसैं होवैहै ।
अद्वैतसैं नहीं । यानें इन विशेषणका ऐसैं अर्थ
करनैसैं धृतियिरुद्ध द्वैतकी सिद्धि होयै नहीं औ
अद्वैत सुखसैं समजनैकूं शक्य होवैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये अवाच्यसिद्धांत
वर्णननाभिका नवमकला समाप्ता ॥६॥

॥ अथ दशमकलाप्रारंभः ॥ १० ॥
॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥

—
इंद्राविजय छंद ॥

चैतन है जु समान विशेष सु ।
दोविधसत्य सुजान समानै ॥
भ्रांति सरूप विशेष जु कल्पित ।
संसृति आश्रय सो तिहि भानै ॥
उया रविको प्रतिविंब जलादिक ।
सो रविरूप विशेष पिछ्यानै ॥
त्यों मातिमै १५० प्रतिविंब परातम ।
सो कल्पित विशेषहिं जानै ॥ २० ॥

॥ १५० ॥ परमात्माका प्रतिविंब ॥

आवत जावत लोक प्रलोक हि ।
भोगत भोग जु १२१कर्म निपानै ॥

सो सष १२२चित-अभास करे अरु ।
शुद्ध समान महीं नहि आनै ॥

अस्ति क भाति प्रिय सष पूरन—
ब्रह्म समान सु चेतन मानै ॥

नाम क रूप तजी सन् चेतन ।
मोद पतिंषर आप पिछानै ॥ २१ ॥

॥ १२१ ॥ सो कर्मरचित भोग है । ताह
मो । ताहै ॥

॥ १२२ ॥ चेतनका प्रतिबिम्ब त

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २२५

* १८८ प्रश्न:—विशेषचैतन्य सो क्या है ?

उत्तर:—अंतःकरण औ अंतःकरणकी वृत्ति-
नविषै जो सामान्यचैतन्यब्रह्मका प्रतिबिम्बरूप
चिदाभास । सो १५३विशेषचैतन्य है ॥

* १८९ प्रश्न:—चिदाभासका लक्षण क्या है ?

उत्तर:—

१ चैतन्य (ब्रह्म) के लक्षणसँ रहित होवै । औ

२ चैतन्यकी न्यांई भासै ।

सो चिदाभास कहियेहै ॥

॥ १५३ ॥ इहां चिदाभासरूप जो विशेषचैतन्य
कहाहै । सो पष्टकलाविषै उक्त कल्पितविशेषअंशके
अन्तर्गत है ॥

* १६० प्रश्नः—यह चिदाभासविशेषचैतन्य काहे-
तें कहियेहै ?

उत्तरः—अलक्ष्य श्री कालविषै जो वस्तु
होवै । सो १२४विशेष कहियेहै ॥ जातै चिदा-
भास अतःकरणदेश श्री जाग्रत्स्वप्नमाल वा
अज्ञानकालविषैहै यानें विशेषचैतन्य कहियेहै ॥

॥ १२४ ॥ अविद्यान श्री अथस्त । इयमेतै
विशेष दाप्रकारका है ॥ तिनमें

१ भातिकालविषै जाकी प्रतीति होवै नहीं किन्तु जाकी
प्रतीतिसे भातिकी निवृत्ति होवै । सो अविद्यान
रूपविशेष है । श्री

२ भातिकालविषै जाकी प्रतीति होवै श्री अविद्यानके
ज्ञानकालविषै जाकी प्रतीति होवै नहीं सो अथ्य-
स्वरूपविशेष है ॥ यहाँहूँ कल्पविशेष

१६१ प्रश्न:-विशेषचैतन्यविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तर:-

दृष्टांत:-

१ जैसेँ सूर्यका प्रकाश सर्वत्र समान है । परंतु सर्वठिकानै प्रतिबिंब होता नहीं औ जहां जल वा दर्पणरूप उपाधि होवै तहाँ प्रतिबिंबरूप करि विशेष भासताहै ॥

२ किंवा जैसेँ सूर्यका प्रकाश सर्वत्र समान है । परंतु सो वस्त्रकपासआदिककूँ जलावता नहीं औ जहाँ आगिआ (सूर्यकांतमणि) रूप उपाधि होवै । तहाँ अग्निरूपसेँ विशेष होयके वस्त्रकपासआदिककूँ जलावताहै ॥

तिनमें

१ सामान्यरूप है सो सर्वदा ज्युंका त्युं होनैतें यथार्थ (घटुकालस्थायि) है । औ

२ उपाधिकरि भासताहै जो विशेषणरूप । सो
 ध्यभिचारी होनैतैं अथवायँ (अल्पकाल-
 स्थायि) है ॥

१ नैसं सामान्यचैतन्य जो अस्ति भाति प्रिय ।
 सो सर्वत्र समान है । परन्तु तिससैं योचना
 चलना इत्यादिकविशेषव्यवहार होता नहीं! श्री

० जहाँ अन्त करणरूप उपाधि होवै तहा
 चिदाभासरूपसै विशेषचैतन्य होयके योच-
 नाचलना । कर्त्तापनाभोक्तापना । परलोकइस-
 लोकविपै गमनआगमन । इत्यादिकविशेष-
 व्यवहार होवैहै ॥

तिनमें

१ सामान्यचैतन्य जो ब्रह्म सो सत्य है । श्री

२ उपाधिकरि भासताहै जो विशेषचैतन्य चिदा-
 भास या मिथ्या है ॥ नैसै

- (१) पुण्यपापका कर्त्तापना ।
- (२) सुखदुःखका भोक्तापना ।
- (३) परलोकइसलोकविषै गमनागमन ।
- (४) जन्ममरण ।
- (५) चौरासीलक्षयोनिकी प्राप्ति ।

इत्यादिकसंसाररूप धर्म वी चिदाभासके हैं ।
यातें मिथ्या हैं ॥

* १६२ प्रश्नः—विशेषचैतन्यके जाननेमें क्या
निश्चय करना ?

उत्तरः—

१ विशेषचैतन्य जो चिदाभास । औ

२ तिसके धर्म ।

सो मैं नहीं औ मेरे नहीं । किंतु ये मेरेविषै
कल्पित हैं ॥ मैं इनका अधिष्ठान सामान्यचैतन्य

इन्तें न्यारा हूं । यह निश्चय करना ॥

* १६३ प्रश्न — सामान्यचैतन्य सो क्या है ?

उत्तर —

१ जो आकाशकी न्याई सर्वत्र परिपूर्ण है ।

२ जो सर्वतामरूपका अधिष्ठान है ।

३ जो अस्तिभातिप्रियरूप है ।

४ जो निर्विकारग्रह है ।

सो सामान्यचैतन्य है ॥

* १६४ प्रश्न — ग्रह । सामान्यचैतन्य काहेतें कहिये है ?

उत्तर — अधिकदेश और कालधियै जो घस्तु होयै । सो सामान्य कहिये है ।

जानें ग्रह । युद्धिकरिपन सर्वदेश औ सर्व-
कालधियै व्यापक है । तातें ग्रह सामान्य-
चैतन्य कहिये है ॥

१६५ प्रश्न:-सामान्यचैतन्य जाननेविषे दृष्टांत क्या है ?

उत्तर:-

दृष्टान्त:-जैसे एकरज्जुकेविषे नानापुरुषनकूं किसीकूं दंडकी । किसीकूं सर्पकी । किसीकूं पृथ्वीके रेखाकी । किसीकूं जलधाराको भ्रांति होवैहै । तिस भ्रांतिविषे दोअंश हैं ।

१ एक सामान्यइदंअंश है । औ

२ दूसरा सर्पादिकविशेषअंश है ॥ तिनमें

१ (१) 'यह' दंड है ॥

(२) 'यह' सर्प है ॥

(३) 'यह' पृथिवीकी रेखा है ॥

(४) 'यह' जलधारा है ॥

इसरीतिसँ सर्पादिकविशेषअंशनविषे सामान्य "इदं" अंश कहिये "यह" अंश सर्वत्रव्यापक है औ सो रज्जुका स्वरूप है । सो सामान्य-

इदंश्रंश जातें

[१] अतिकालविषै धी भासताहै । औ

[२] अतिकी निवृत्तिकालविषै धी “यद्”
रज्जु है” इसरीतिसें भासताहै ।

यातै सामान्यइदंश्रंश अव्यभिचारी होनेतें सत्य
है । औ

२ परस्परव्यभिचारी जो सर्पादिका विशेषश्रंश
सो कल्पित है ।

सिद्धांतः-तैसें सर्वपदार्थनविषै पांचश्रंश हैं:-

१ अस्ति २ भाति ३ प्रिय ४ नाम ५ रूप ॥

१ “घट है” यह अस्ति [सत्] ।

२ “घट भासता है” यह भाति [चित्] ।

३ “घट प्रिय है” । कहैतें घट जल भरनेकुं
उपयोगी है । यातें यह प्रिय (आनंद) ॥सर्प-

सिंहआदिक धी सर्पिणी औ सिंहिणीकुं प्रिय हैं

५ “घट” यह शोशन्न नाम है ।

ला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३३

५ स्थूलगोलउदरवान् घटका रूप (आकार) है ।
ऐसैं घटआदिकसर्वभूत औ भूतनके कार्यनविषै
वी जानना ॥

यह बाहीरके पदार्थनविषै पांचअंश दिखाये ॥ तैसैं

१ भीतरदेहआदिकविषै-

[१] "मैं हूं" यह अस्ति है ।

[२] " मैं भासता (जानता) हूं " यह
भाति है ।

[३] "मैं आप आपकूं प्यारा हूं" यह प्रिय
है । औ

[४] देह । इंद्रिय । प्राण । मन । बुद्धि ।
चित्त । अहंकार । अज्ञान औ इनके
धर्म । ये नाम हैं ।

[५] इनके यथायोग्य आकार । सो रूप है ॥
ये अंतरके पदार्थनविषै पांचअंश दिखाये ॥

२ इन सर्वके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ पृथिवी है ” ।

[२] “ पृथिवी भासती है ”

[३] “ पृथिवी प्रिय है ” । काहेतै पृथिवी
रहनेकं स्थान देतीहै ।

[४] “ पृथिवी ” ऐसा नाम है ॥ औ

[५] “ गन्धगुणयुक्त ” रूप है ॥

३ पृथिवीके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ जल है ” ।

[२] “ जल भासताहै ” ।

[३] “ जल प्रिय है ” । काहेतै जल
तृप्तकू दूरी करताहै ।

[४] “ जल ” ऐसा नाम है । औ

[५] “ शीतस्पर्शगणयुक्त ” रूप है ॥

४ जलके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “तेज है” ।

[२] “तेज भासता है”

[३] “तेज प्रिय है” । काहेतँ तेज शीत
औ अंधकारकूँ दूरी करताहै ।

[४] “तेज” ऐसा नाम है । औ

[५] “उष्णस्पर्शगुणयुक्त” रूप है ॥

५ तेजके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “वायु है” ।

[२] “वायु भासता है” ।

[३] “वायु प्रिय है” । काहेतँ वायु प्रसीना-
कूँ दूरी करताहै ।

[४] “वायु” ऐसा नाम है । औ

[५] “रूपरहित अरु स्पर्शगुणयुक्त”
रूप है ॥

६ वायुके नामरूपके त्याग कियेसँ—

- [१] “आकाश है” ।
- [२] “आकाश भासताहै” ।
- [३] “आकाश प्रिय है” । काहेतँ आकाश रहनैफिरनैकूँ अवकाश देताहै ।
- [४] “आकाश” ऐसा नाम है । औ
- [५] “शब्दगुणयुक्त” रूप है ॥

७ आकाशके नामरूपके त्याग कियेसँ—

- [१] “ पीछे क्या है सो मैं जानता नहीं” ।
ऐसा अज्ञान है । सो
- [२] “ अज्ञान भासता हूँ” ।
- [३] “ अज्ञान प्रिय है” । काहेतँ अज्ञानी जीवनकूँ प्रिय है । औ अज्ञान प्रपञ्चका कारण होनैसँ जीवनका निर्वाह करनाहै ।

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३७

[४] “अज्ञान” ऐसा नाम है । औ

[५] “ आवरणविशेषशक्तिवाला अनादि
अनिर्वचनीय भावरूप” यह रूप है ॥

द अज्ञानके नामरूपके त्याग कियेसँ—

[१] “ कछु वी नहीं है ” ऐसँ प्रतीयमान
सर्ववस्तुनका अभाव रहताहै ।

[२] “ अभाव भासताहै”

[३] “ अभाव शून्यध्यानीनकूं प्रिय है”
याका

[४] “ अभाव ” ऐसा नाम है । औ

[५] “ सर्ववस्तुनका अभाव (निषेधमुख-
प्रतीतिका विषय) ” रूप है ॥

६ अभावकं नामरूपके ह्याय क्रियेत्—

[१] अभावत्वका स्वरूपमूत अधिष्ठान ।
सन्वन्तुर्हो अघशेष रहताहै । सो

[२] अभावके अभावपनैक प्रकाशताहै ।
यातें चित्तु है । श्री

[३] दुःखसं भिन्न है । यातें आनंद है ॥

स्वरीतिर्है

१ सर्वनामरूपविधि अनुगत अर्थविचारी नाम
रूपा अधिष्ठानब्रह्म १२२सामान्यचैतन्य है ।
सो सत्य है । श्री

॥ १२२ ॥

१ सुगुणित मूर्त्ति श्री समाधिका प्रकाशक सामा-
न्यचैतन्य है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २३६

२ “घटक” में जानताहूँ” इसरीतिसे प्रमाता । प्रमाण
श्री प्रमेयरूप त्रिपुटीका प्रकाशक साक्षी सामान्य-
चैतन्य है ।

३ जाग्रदादिअवस्थाकी सन्धिनका प्रकाशक सामान्य-
चैतन्य है ॥

४ तैसै ही वृत्तिनकी सन्धिनका प्रकाशक सामान्य-
चैतन्य है ॥

५ अंगुष्ठके अग्रभागका प्रकाशक सामान्य-
चैतन्य है ॥

६ देशांतरविषे वृत्ति गई होवै । तब तिसके मध्यभागका
प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

७ सूर्यचंद्राकार वृत्ति हुयीहोवै तिसके मध्यभागका
प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

८ “मेरुकू” में नहीं जानताहूँ” ऐसै अज्ञानविशिष्टमेरुका
प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

० घटके नामरूप घटविशै नहीं थी घटके नामरूप घटविशै नहीं । तबने १२९परम्परपरमि-
शानी ये नामरूप मिश्रण है ॥

घट नामान्वयैतन्परके जाननैविशै दशांत है ॥

● १६५ प्रश्न-उत्तर: नामान्वयनैतन्परक प्रत्यक्षी
नानैतै अधिक गुरुमता थी प्रयागता
के गे है ?

उत्तर:—

१ जो जो कार्य है । जो गुरुम थी परिष्कार
होयै है । थी

२ जो जो कार्य है । जो गुरुम थी प्रयाग
(अधिक-गुरुम) होयै है । घट निरुप है ॥
तबने घट गुरुम का कार्य है तबने गुरुमों अधिक
गुरुम थी प्रयाग है । या सब विचार्यै है:—

१०५ ४ ० गुरुम थी ॥ १०५ ४ ० गुरुम थी ॥
१०५ ४ ० गुरुम थी ॥ १०५ ४ ० गुरुम थी ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४२

१ [१] जातें समुद्रजलसें कठिण फेन औ लवण होवैहैं । यातें जान्याजावैहै कि पृथिवी जलका कार्य है । तातें पृथिवी-तें जल सूक्ष्म औ व्यापक है ॥
किंचा

[२] पृथिवीके पापणआदिकअवयव वस्त्र-विषै डालेहुये निकसते नहीं । औ

[३] जल वस्त्रविषै ठहरता नहीं । औ

[४] पृथिवीमें जहां जहां खोदफे देखो तहां तहां जल निकसताहै । औ

[५] पुराणोंविषै पृथिवीतें दशगुणअधिक-देशवर्ति जल कहाहै ।

यातें वी पृथिवीतें जल सूक्ष्म औ व्यापक है ।

२ [१] तैलै अग्निआदिकके तापतै शरीरविपै-
 प्रस्येद (प्रमीना) छूटतादै औ वर्षा
 होवैदै । यातै जान्याजावैदै कि जल
 अग्निका कार्य है । तातै जलतै अग्नि
 (तेज) सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥
 किया

[२] जल घटविपै उदरता नहीं परन्तु घट-
 विपै उदरतादै । औ

[३] सूर्यादिकका प्रकाश घटविपै भी उद-
 रता नहीं । औ

[४] पुराणोंविपै जलतै दशगुणअधिक-
 देशवर्ति तेज कहादै ।

यातै भी जलतै तेज सूक्ष्म है औ
 व्यापक है ॥

हला] ॥ सामान्यविशेषवैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४३

३ [१] तैसैं अशिका जन्म औ नाश पवनके
आधीन है । यातैं जान्याजावैहै कि
तेज वायुका कार्य है । तातैं तेजतैं
वायु सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

किंवा

[२] सूर्यादिकका प्रकाश घटादिपात्रविषै
ठहरता नहीं । परन्तु नेत्रसैं दीखताहै
औ वायु तौ नेत्रसैं बी दीखता
नहीं । अरु

[३] पुराणोंविषै तेजतैं दशगुणअधिक वायु
कहाहै ।

यातैं तेजतैं वायु सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

४ [१] तैसैं वायुकी उत्पत्ति स्थिति अरु ल-
आकाश (पुलार) विपैहों होवैहै । यातैं
जान्याजावैहै कि वायु आकाशका
कार्य है । तातैं वायुतैं आकाश
सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

किंचा

(२) वायु नैशसैं दीप्तता नहीं परन्तु
त्वचासैं स्पर्शगुणद्वारा प्रदहन होताहै
औ आकाश नी त्वचासैं धी प्रदहणे
होता नहीं । औ

[३] पुराणोंविधै वायुतैं दशगुणअधिकदेश-
यति आकाश कहाहै ॥

यातैं धी मो आकाश वायुतैं सूक्ष्म औ
व्यापक है ॥

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४५

[१] तैसैं “ आकाशसैं आगे क्या होवैगा ”
ऐसा विचार कियेहुये “ मैं नहीं
जानताहूं” ऐसैं बुद्धिके कुंठीभावका
आश्रय (विषय) अज्ञान प्रतीत होता
है । यातैं जान्याजावैह कि आकाश
अज्ञानका कार्य है । तातैं सो अज्ञान
आकाशतैं सूक्ष्म औ व्यापक है ॥

किंवा

[२] आकाश त्वचासैं ग्रहण होता नहीं ।
परंतु मनसैं ग्रहण होताहै । औ अज्ञान
मनसैं बी ग्रहण होता नहीं । औ

[३] आकाशतैं अनंतगुणअधिक अज्ञान
शास्त्रविषै कहाहै ।

यातैं बी सो अज्ञान आकाशतैं सूक्ष्म औ
व्यापक है ॥

६ [१] तैसैं "मैं नहीं जानताहूँ" इस अनुभव-
का विषय जो अज्ञान । ताका प्रकाश
जाननेवाले चेतनसैं होवैहै । औ
(१) " अज्ञान है ।

(२) अज्ञान भासताहै ।

(३) अज्ञान अक्षयुरूपकूं प्रिय है ॥"

इसरीतिसैं अज्ञानविषै अनुस्यूत अस्तिभाति-
प्रियरूप ब्रह्मचेतन भासताहै । यातैं अज्ञान
ब्रह्मचेतनके आश्रित है । तातैं ब्रह्मचेतन
अज्ञानतैं सूक्ष्म औ व्यापक है ॥ किंवा

[२] अज्ञान मनकरि ग्रहण होता नहीं
परन्तु " मैं नहीं जानताहूँ " इस
अनुभवरूप लिंगकरि ताका अनुमान
होवैहै । औ ब्रह्मचेतन स्वयंप्रकाशरूप
होनेतैं किसी वी प्रमाणका विपर-
नहीं । औ

कला] ॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥१०॥ २४७

[३] शरीरविषै तिलकी न्यांई ब्रह्मकै
एकदेशविषै अज्ञान स्थित है । औ
अवशेष रहा ब्रह्म शुद्धस्वप्रकाश है ।
ऐसैं श्रुतिविषै कहाहै ।

यातैं बी सो ब्रह्मचेतन अज्ञानतैं सूक्ष्म
औ व्यापक है ॥

इसरीतिसैं सामान्यचैतन्यरूप ब्रह्मकी सर्वप्रपंचसैं
अधिकसूक्ष्मता औ व्यापकता है ॥

* १६७ प्रश्न:-सामान्यचैतन्यके जाननैसैं क्या
निश्चय करना ?

उत्तर:—

१ [१] अस्तिभातिप्रियरूप सामान्यचैतन्य जो
ब्रह्म सो मैं हूं । औ

२ [२] मैं सो अस्तिभातिप्रियरूप सामान्य-
चैतन्यब्रह्म हूं । औ

२४८ ॥ विचारचंद्रोदय ॥ [दशमकला

२ नामरूपजगत् मेरेविषयै फेरित है ;

यह निश्चय करना ॥

* १६८ प्रश्नः—इसरीतिसें निश्चय कियेसें क्या होयैहै ?

उत्तरः—इसरीतिसें निश्चय कियेसें सर्वअनर्थ-
की निवृत्ति औ परमानन्दकी प्राप्तिरूप मोक्ष
होयैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये सामान्यविशेष-
चैतन्यवर्णन नामिका दशमकला समाप्ता १ ।

अथ एकादशकलाप्रारम्भः ॥ ११ ॥

॥ 'तत्त्वं' पदार्थैक्यनिरूपण ॥

॥ इन्द्राविजय छंद ॥

वाच्य रु लक्ष्य लखा तत्-त्वंपद ।

लक्ष्य दुहंकर एक हठावै ॥

भिन्न जु देशहि काल सु वस्तु रु ।

धर्मसमेत उपाधि उडावै ॥

जन्म थिती लय कारक १५७मायिक ।

जाननहार सधी जग भावै ॥

ईश्वर वाच्य सु है ततपादहि ।

ब्रह्म सु लक्ष्य उपाधि अभावै ॥ २२ ॥

ससृति मानत आपहिमँ पर-
 तन्न १५ अविद्यरु अरुप जनावै ॥
 त्वपद वाच्य सु जीव विवेचिन ।
 लक्ष्य सु साक्षि उपाधि दहावै ॥
 वाच्य दुश्चर्ध हि भेद वि है पुनि ।
 लक्ष्य विभेद न रंचक गावै ॥
 ब्रह्म अहं इस भांति जु जानत ।
 सोई पीतांबर ब्रह्महि पावै ॥ २३ ॥

* १६६ प्रश्न - ' तत् ' पद सो क्या है ?

उत्तर — सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्के षष्ठ-
 प्रपाठक (अध्याय) विषे श्वेतशतु नाम पुत्रके
 प्रति तिसके पिता उद्दालकमुनिने उपदेश किये
 "१५५तद्व्यमसि" महावाक्यका प्रथमपद ।
 सो "तत्" पद है ॥

॥ १५८ ॥ अविद्याउपाधिवान् ॥

॥ १५९ ॥

- १ “ इस तत्त्वमसि ” की न्यांई
- २ “ प्रज्ञानं ब्रह्म ” यह ऋग्वेदका महावाक्य है ।
- ३ “ अहं ब्रह्मास्मि ” यह यजुर्वेदका महावाक्य है । श्री
- ४ “ अयमात्मा ब्रह्म ” यह अथर्ववेदका महा-
वाक्य है ॥

- १ जो तत्पदका वाच्यअर्थ ईश्वर है श्री लक्ष्यअर्थ शुद्धब्रह्म है । सोई ऊपरलिखे तीनमहावाक्यगत “ब्रह्म” शब्दका वाच्यअर्थ अरु लक्ष्यअर्थ है । श्री
- २ जो त्वंपदका वाच्यअर्थ जीव है अरु लक्ष्यअर्थ कूटस्थसाक्षी है । सोई उक्ततीनमहावाक्यगत “प्रज्ञानं” “अहं” “अयं” पदवहित “आत्मा ” इन तीनशब्दका वाच्यअर्थ श्री लक्ष्यअर्थ है । श्री
- ३ सारे “ तत्त्वमसि ” वाक्यका जो जीवब्रह्मकी एकतारूप अर्थ है । सोई उक्त तीनमहावाक्यन का अर्थ है ॥

* २०० प्रश्न:—“ त्व ” पद सो क्या है ?

उत्तर —इसीहीं “तत्त्वमसि” महावाक्यका दूसरापद । सो “त्वं” पद है ॥

* २०१ प्रश्न -वाच्यार्थ औ लक्ष्यार्थ सो क्याहै ?

उत्तर —शब्दका अर्थके साथि जो संबंध सो शब्द की वृत्ति कहियेहे सो वृत्ति दो प्रकारकी है । १ एक शक्तिवृत्ति है औ २ दूसरी लक्षणावृत्ति है ॥

१ शब्दविषै अर्थके ज्ञान करनेका सामर्थ्यरूप जो शब्दका अर्थके साथि साक्षात्संबध । सो शब्दकी शक्तिवृत्ति है ॥ श्री

२ शक्तिवृत्तिस जानेदुये अर्थद्वारा जो शब्दका अर्थके साथि परपरारूप सम्बन्ध है । सो, शब्दकी लक्षणावृत्ति है ॥

कला] ॥“तत्त्वं”पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २५३

तिनमें

१ शक्तिवृत्तिकरि जो अर्थ जानियेहै सो शब्दका वाच्यअर्थ कहियेहै । ताहीकूं शक्यअर्थ

श्रौ मुख्यअर्थ वी कहैहैं ॥ श्रौ

२ लक्षणावृत्तिकरि जो अर्थ जानियेहै । सो शब्दका लक्ष्यअर्थ कहियेहै ॥

* २०२ प्रश्नः-लक्षणावृत्ति कितनै प्रकारकी है ?

उत्तरः-१ जहत् २ अजहत् श्रौ ३ भाग-
त्यागके भेदतै लक्षणावृत्ति तीनप्रकारकी
है ॥

*२०३ प्रश्नः-तीनप्रकारकी लक्षणाके लक्षण श्रौ
उदाहरण कौनसैं हैं ?

उत्तरः—

१ जहां संपूर्णवाच्यअर्थका त्यागकरिके वाच्य-
अर्थ संबंधीका ग्रहण होवै । सो जहत् लक्षणा
है ॥

जैसे कोईए पुरुषने पाहूकू पूछया कि —
 “गार्दका घाडा कदा है ?” तब तिसने कहा कि
 “गङ्गाधियै गार्दका घाडा है” ॥ इहा गङ्गापदका
 वाच्यअर्थ देवनदीका प्रवाह है । तिसधियै गार्द-
 का घाडा समये नहीं । यार्तै सपूर्णवाच्यअर्थ
 जो देवनदीका प्रवाह । ताका त्यागकरिके ।
 तिसके सबधी तीरका ग्रहण है ॥

२ जहा वाच्यअर्थका त्याग न करिके तिसके
 सबधीका ग्रहण होवै । सो अजरनूलक्षणा है ॥

जैसे किसीने कहा कि — “शोण दौडता
 है” ॥ तहा शोणपदका वाच्यअर्थ जो लालरग
 है । तिसधियै दौडना सम्भवै नहा । यार्तै लाल
 रगवाला घाडा दौडताहै । ऐसै वाच्यअर्थका
 त्याग न करिके तिसके सबधी घोटैरूप अधिक
 अर्थका ग्रहण होवैहै ॥

कला] ॥ “तत्त्वं” पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २५५

३ जहां विरोधी कलुकवाच्यभागका त्याग-
करिके तिसके संबंधी अविरोधी कलुकवाच्यभाग
का ग्रहण होवै । सो भागत्यागलक्षणा है ॥

जैसें पूर्व किसी देशकालविणै देख्या पुरुष
अन्यदेशकालविणै देखनैमें आवै । तव देखनै-
हारा पुरुष कहना है कि:-“तिस (दूर) देश औ
तिस (भूत) कालविणै जो पुरुष देख्याथा
सो पुरुष इस (समीप)देश औ इस (वर्तमान)
कालविणै आयाहै ” ॥ इहां तिस देशकाल औ
इस देशकालरूप वाच्यभागकी एकताका विरोध
है । यातैं तिनकी दृष्टि त्यागकरिके । “ पुरुष
यहहीं है ” ऐसें अविरोधीवाच्यभागका ग्रहण
होवैहै ॥

*२०४प्रश्न:-तीनप्रकारकी लक्षणामेंसें महावाक्य

. विणै कौनसी लक्षणा संभवैहै ?

उत्तर.—

१ जज्ञ जहत्लक्षणा होवै । तदा सम्पूर्ण वाच्य
अर्थका त्याग होवैहे ॥ जो महावाक्यविषै
जहत्लक्षणा मानिये । तौ

(१) “तत्” “त्व” पदके वाच्यअर्थविषै
प्रवेश भये ब्रह्मचैतन्य औ साक्षी-
चैतन्यका त्याग होवैगा । औ

[२] तिसरै भिन्न असत्जडदुःखरूप प्रपञ्च
का ग्रहण करना होवैगा । अथवा
समष्टि दृष्टि प्रपञ्चमय उपाधि(विशे-
परुपरु वाच्यभाग) का भी चेतनके
साथि त्याग कियेसै अवशेष रहे
शून्यका ग्रहण करना होवैगा ॥

नार्त महाअनर्थकी प्राप्ति होवैगी । तिसरै

पुरुषार्थ सिद्ध होवै नहीं।यार्त महावाक्यविषै

जहत्लक्षणा सभवै नहीं ॥

कला] “तत्त्वं ” पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २५७

२ जहां अजहत्लक्षणा होवै तहां वाच्यअर्थका कछु वी त्याग होवै नहीं । औ अधिकअर्थका ग्रहण होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै अजहत्लक्षणा मानिये तौ “ तत् ” “ त्वं ” पदका वाच्यअर्थ ज्युंका त्यूं बन्यारहैगा औ ताके साथि शून्यरूप अधिकअर्थका ग्रहण करना होवैगा । यातैं एकनाका विरोध दूरी होवै नहीं । तातैं लक्षणा करनेका कछु प्रयोजन सिद्ध होवै नहीं । यातैं महावाक्यविषै अजहत्लक्षणा संभवै नहीं ॥

१ जहां भागत्यागलक्षणा होवै तहां विरोधी भागका त्याग करीके अविरोधीभागका ग्रहण होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै भागत्यागलक्षणा मानिये तौ

[१] “तत्” “त्वं” पदके वाच्यअर्थमैंसै धर्मसहित मायाअविद्यारूप विरोधी-भागका त्याग होवैहै । औ

[०] अविरोधीअसङ्गशुद्धचेतनभागका प्रदूषण होवेही ।

तार्त्त

[१] तिनकी एकता यी घनैहै । औ

[०] तिनतें परमपुरुषार्थकी प्राप्ति होवे है ।

यानें महावाक्यविषे भागस्यागलक्षणा सभवैहै ॥

० = ५ प्रश्न - "तत्" पदका वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थ क्या है ?

उत्तर:—

१ अथर्वान्त जो माया मो ईश्वरका देश है ॥

२ उत्पत्ति स्थिति औ मलय । ये तीन ईश्वरके काल हैं ॥

कला] ॥ “ सत्त्वं ” पदार्थत्रयनिरूपण ॥ ११ ॥ २५६

३ सत्त्वगुण रजोगुण औ तमोगुण । ये तीन ईश्वरके १६० वस्तु हैं । कहिये सृष्टिकी सामग्री हैं ॥

४ विराट् द्विरण्यगर्भ औ अव्याकृत । ये तीन ईश्वरके शरीर हैं ॥

५ वैश्वानर सूत्रात्मा औ अंतर्यामी । ये तीन ईशपनैके अभिमानी हैं ॥

॥ १६० ॥ यद्यपि माया औ नोनगुण एहहीं पदार्थ हैं । यातें ईश्वरके देश वस्तु औ शरीरकी एकता होवैहै । तथापि जैसे कुजालकूँ घट करनेके जिये १ मृत्तिक रूप पृथ्वी देश है । औ
२ मृत्तिकाका पिंड वस्तु है । औ
३ अस्थिआदिकरूप पृथ्वीका भाग शरीर है ।
तिनका एकताका असंभव नहीं । जैसे ईश्वरके ती
देशआदिककी एकताका असंभव नहीं है ॥

६' में एक ह। सो बहुरूप होऊ "वेसी मोई जणा
तिसकू आदिलेके "जीवरूपकरि प्रवेश भया"
इहापर्यंत जो सृष्टि। सो ईश्वरका कार्यहै ॥

७ (१) सर्वशक्तिपना (२) सर्वज्ञपना (३)
व्यापकपना (४) एकपना (५) स्वाधीन
पना (६) समर्थपना (७) परोक्षपना
(८) मायाउपाधिवानपना। ये आठ ईश्वरके
धर्म हैं।

१ (१) इन सर्वसहित माया। श्री

(२) तिमधिवै प्रतिबिम्बरूप चिदाभास। श्री

(३) तिनका अधिष्ठान ब्रह्म।

य सर्व मिलिके ईश्वर कहियेहै। सो "तन्"

पदका वाच्यअर्थ है ॥

२ इन सर्वसहित माया श्री चिदाभासभागका
त्यागकारके अंतराप रहा जो विघट्टहिररयगर्भ
श्री अघाटतका अधिष्ठान ईश्वरसाक्षी शुद्धब्रह्म
सो "तन्" पदका लक्ष्यअर्थ है ॥

कला] ॥ "तत्त्वं" पदार्थैक्यनिरूपण ॥२१॥ २६१

* २०६ प्रश्न:-ब्रह्मका श्री मायामें प्रतिविकल्प
ईश्वरका परस्परअध्यास , अन्यो-
न्याध्यास) कैसें है ?

उत्तर:-अविचारदृष्टिसें

- १ ब्रह्मकी सत्यताका ईश्वरविषे संसर्ग (तादा-
त्म्यसंबंध) अध्यस्त है । यातें ईश्वर सत्य
प्रतीत होवैहै । श्री
- २ ईश्वर अरु ताकी कारणताका स्वरूप ब्रह्ममें
अध्यस्त है । यातें ब्रह्म जगत्का कारण
प्रतीत होवैहै ॥ याहीका अनुवाद तटस्थ
लक्षणके बोधक श्रुति पुराण श्री आचार्योंके
वचन करैहैं ॥

इसरीतिसें ब्रह्म श्री ईश्वरका परस्पर
अध्यास है ॥

* २०७ प्रश्न - उक्त अध्यासकी निवृत्ति किससे होवे ?

उत्तर - उक्त अध्यासकी निवृत्ति विवेक ज्ञानमें होवे ॥

* २०८ प्रश्न - "त्व" पदका वाच्य अर्थ और लक्ष्य अर्थ क्या है ?

उत्तर:—

१ चक्षु फट और हृदय । ये तीन जीवके देश हैं ॥

२ जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति ये तीन जीवके काल हैं ॥

३ स्थूल सूक्ष्म और कारण । ये तीन जीवके वस्तु (भोगसामग्री) हैं ॥ और

४ यद्दहां शरीर है ॥

५ विश्व तैजस और प्राज्ञ । ये तीन जीवपदैके अभिप्रायी हैं ॥

६ जाग्रतसे आदितेके मोक्षपर्यंत जो भोगरूप सत्कार । सा जीवका कार्य है ॥

कला] ॥ “ तत्त्वं ” पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २६३

७ [१] अल्पशक्तिपना [२] अल्पदपना [३]
परिच्छिन्नपना [४] नानापना [५] परा-
धीनपना [६] असमर्थपना [७] अपरोक्ष-
पना औ [८] अविद्याउपाधिवान्पना ।
ये आठ जीवके धर्म हैं ॥

१ [१] इन सर्वसहित जो अविद्या । औ
[२] तिसविषै प्रतिदिवरूप चिदाभास । औ
[३] तिनका अधिष्ठान कूटस्थ ।
ये सर्व मिलिके जीव कहियेहै ॥ सो जीव
“ त्वं ” पदका वाच्यअर्थ है ॥

२ इन सर्वसहित चिदाभासभागका त्याग करिके
अवरोप रहा जो स्थूलसूक्ष्मकारणशरीरका
अधिष्ठान जीवसाक्षी कूटस्थ । आत्मा सो
“ त्वं ” पदका लक्ष्यअर्थ है ॥

* २०६ प्रश्न - कूटस्थका औ बुद्धिमें प्रतिबिम्बरूप-
जीवका परस्परअध्यास कैसें है ?

उत्तर:-अविचारदृष्टिसें

१ कूटस्थकी सत्यताका ससर्ग (तादात्म्यसंबंध)
जीवमें अभ्यस्त है । यार्तें जीव मिथ्या प्रतीत
होवै नहीं । किंतु सत्य प्रतीत होवैहै । औ

२ जीव अरु ताके कर्त्तापनैआदिक धर्मका
स्वरूप । कूटस्थमें अभ्यस्त है । यार्तें कूटस्थ
अकर्त्ता अभोका असंखारी नियमुक्त असङ्ग
ब्रह्मरूप प्रतीत होवै नहीं । किंतु तार्तें
विपरीत प्रतीत होवैहै ॥

इसरीतिसें कूटस्थका औ जीवका परस्पर
अध्यास है ॥

* २१० प्रश्न:-उक्तअध्यासकी निवृत्ति किससें
होवैहै ?

उत्तर:-उक्तअध्यासकी निवृत्ति विवेक-
मानसें होवैहै ॥

कला] !! 'तत्त्वं' पदार्थैक्यनिरूपण ॥११॥ २६५

* २१० प्रश्न:-“ तत् ” पद औ “ त्वं ” पदके अर्थ की महावाक्यविषै कथन करी एकता कैसें संभवै ?

उत्तर:-

१ यद्यपि “तत्” पद औ “ त्वं ” पदके वाच्य-अर्थ जो उपाधिसहित चैतन्य (ईश्वर औ जीव) हैं । तिनकी एकताका विरोध है ।

२ तथापि “तत्” पदका लक्ष्यार्थ ब्रह्म औ “ त्वं ” पदका लक्ष्यार्थ आत्मा । तिनकी एकताका कछु वी विरोध नहीं ॥

“ ऐसें “ तत् ” पद औ “ त्वं ” पदके अर्थकी महावाक्यविषै कथन करी एकता संभवैहै ॥

* २१२ प्रश्न:-“मैं ब्रह्म हूं” ऐसा ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान किसकू होवैहै ?

उत्तर:-यह ज्ञान विदाभासकू होवैहै ॥

० २१३ प्रश्न.—ब्रह्मते भिन्न जो चिदाभास । सं
 आपकू ब्रह्मरूप करीके कैसें जानैहै ?

उत्तर:—

१ जीवभावके अधिष्ठान कूटस्थका ब्रह्मके साथि
 मुख्यभेद है । औ

२ बुद्धिसहित चिदाभासका ब्रह्मके साथि अपने
 स्वरूपकू बाध करीके अभेद होवैहै ।

याते

१ चिदाभास अपने स्वरूपका बाध करीके
 आपकू अहशब्दके लक्ष्यार्थ कूटस्थरूप
 जानैहै । औ

२ अपने निजरूप कूटस्थका “ मैं कूटस्थ हू ”
 ऐसे अभिमान करिके “ मैं ब्रह्म हू ” । ऐसे
 जानैहै ॥

इसरीतिसँ चिदाभास आपकू ब्रह्मरूप करिके
 जानैहै ॥

कला] ॥ “तत्त्वं” पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २६७

*२१४ प्रश्न:- इन “तत्” औ “त्वं” पदके लक्ष्यार्थ की एकताविषे दृष्टांत क्या है ?

उत्तर:—दृष्टांत:—

१ जैसे

[१] घटमठउपाधिसहित घटाकाश औ मठाकाशकी एकताका विरोध है ।

[२] तथापि घटमठरूप उपाधिकी दृष्टिकुं छोड़िके केवलआकाशकी एकताका विरोध नहीं ।

२ जैसे

[१] काचकी हंडी औ मृत्तिकाकी हंडीविषे दीपक जलताहोवै । तिनकी उपाधि दोहंडीकी एकताका विरोध है ॥

[२] तथापि अग्निपनैकरि दीपककी एकताका विरोध नहीं ॥

३ जैसे

[१] राजा श्री खारी (मेड़) होवै ।
तिनकी उपाधि सेना श्री अजायगकी
एकताका विरोध है ॥

[२] तथापि मनुष्यपनैकी एकताका विरोध
नहीं ॥

४ जैसे

[१] गङ्गाजल श्री गङ्गाजलका कलश
होवै । तिनकी उपाधि नदी श्री
कलशकी एकताका विरोध है ।

[२] तथापि केवलगङ्गाजलकी एकताका
विरोध नहीं ॥

कला] ॥ " तत्त्वं " पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ११ ॥ २६६

५ जैसें

[१] सागर औ जलका विन्दु होवै । तिनकी उपाधि सागर औ विन्दुकी एकताका विरोध है ॥

[२] केवल जलकी एकताका विरोध नहीं ॥

६ जैसें

[१] कोई एक पुरुषकूँ पिताकी अपेक्षासँ पुत्र कहते हैं औ पितामहकी अपेक्षासँ पीत्र कहते हैं । तिनकी उपाधि पिता औ पितामहकी एकताका विरोध है ।

[२] केवल पुरुषकी एकताका विरोध नहीं ॥

७ जैसे कोई काशीका राजा था । सो हस्ती पर बैठिके स्वामीमें निकस्याथा । ताकू कोई यात्रावासी पुरुषनै अच्छीतरहसँ देख्या था ॥ पीछे सो स्वदेशकू गया औ काशीके राजाकू कोई अन्यराजानै राज्य छीनके निकामदिया । तब सो लमोटी पहरके अगमें विभूति लगायके हाथमें तुषी औ दड लेवे नम्रपादसँ तीर्थयात्राकू गया ॥ फिरन फिरने तिस यात्रावासीपुरुषके ग्राममें गया ॥ तब तिसकू देखिके सो यात्रावासीपुरुष अन्ययात्रावासीपुरुषनकू बहना भया कि -अपननै काशीविषै जो राजा न्य्याथा । “ सो यह है ” ॥

कला] ॥ "तत्त्वं" पदार्थैक्यनिरूपण ॥ ८॥२७१

तव अन्ययात्रावासीपुरुष कहतेभये किः—

[१] सो देश अन्य । यह देश अन्य ॥

[२] लाका काल (अवस्था) अन्य ।

याका काल अन्य ॥

[३] तिसकी वस्तु (सामग्री) अन्य ।

याकी वस्तु अन्य ॥

[४] तिसका अभिमान अन्य । इसका

अभिमान अन्य ॥

[५] तिसका कार्य अन्य । इसका कार्य

अन्य ॥

[६] तिसके धर्म अन्य । इसके धर्म अन्य ॥

तिस काशीके राजाकी औ इस भिजुक-
को एकता कैसे बने ? ॥

तब सो प्रथमयात्रावासीपुरुष कहतामया ।
 कि:-“ तिसके औ इसके (१) देश
 (२) काल (३) वस्तु (४) अभिमान
 (५) कार्य औ (६) धर्मका त्याग करीके
 दोनूँ विषे अनुगत (अनुस्यूत) जो पुरुषमात्र
 सो एकही है ” ॥

सिद्धान्त:-तैसे जीवईश्वरके यी देशकाल
 आदिकका त्याग करीके । दोनूँ विषे अनुगत जो
 चेतनमात्रग्रह्य औ आत्मा सो एकही है ॥ यार्ते
 ‘ग्रह्य सो मै हूँ’ औ ‘मै सो ग्रह्य हूँ’ ऐला
 दृढ निश्चय करना । सोई तत्त्वज्ञान है ॥

याहीते सषड्गुणकी निष्पत्ति औ परमानन्दकी
 प्राप्तिरूप मोक्ष होबै है ।

इनि श्रीविचारचन्द्रोदय ‘तत्त्वमसि’
 महावाक्यगत ‘तत्त्वं’ पदाधिक्यनिरूपण
 नामिका एकादशकला समाप्ता ॥ ११ ॥

॥ अथ द्वादशकलाप्रारंभः ॥ १२ ॥
ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ।

॥ १६१तोटकछंद ॥

जिन आत्मरूप १६२पगो जु भले ।

तिस त्रैविधकर्म भिटे सकले ॥

१६३तम आवृत्ति आश्रित संचित ले ।

निज बोध सु पावक सर्व जले ॥२४॥

जड चेतन गांठ विभेद बले ।

हृदराग दवेष कषाय गले ॥

जलमें जिम लिप्त न १६४कंजदले ।

परसे न अगामि जु कर्म मले ॥ २५ ॥

॥ १६१ ॥ दुमरीमें गाया जावैहै ॥

॥ १६२ ॥ देख्यो ॥

॥ १६३ ॥ अज्ञानकी आवरणशक्तिके आश्रित संचित
कर्मोंक' लेके ॥ ॥ १६४ ॥ कमलका पत्र ॥

इस जन्म अरभक कर्म फले ।

सुखदुःखि भोगत होत प्रले ॥

इस भांति जु होइत जन्म बिले ।

१६५पिख रूप पीताम्बर स्वं विमले ॥२६॥

* २१५ प्रश्न — कर्म सो क्या है ?

उत्तर.—शरीर घाणी औ मनकी जो क्रिया सो कर्म है ॥

* २१६ प्रश्न — कर्म कितने प्रकारका है ?

उत्तर—१ सचित २ प्रारब्ध औ
३ क्रियमाण (आगामि) भेदन कर्म तीन-
प्रकारका है ॥

* २१७ प्रश्न — सचितकर्म सो क्या है ?

उत्तर—/ अनेकअर्थात् जन्मादिदि सद्य-
क्रिया जा कर्म । सो सचितकर्म है ॥

ला] ॥ ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ॥ १२ ॥ २७५

* २१८ प्रश्न:- प्रारब्धकर्म सो क्या है ?

उत्तर:- २ अनेकसंचितकर्मनके मध्यसँ परिपक्व भया औ ईश्वरकी इच्छासँ इस वर्तमान-देहका आरंभक जो कोईएक संचितकर्म सो प्रारब्धकर्म है ॥

* २१९ प्रश्न:- क्रियमाणकर्म सो क्या है ?

उत्तर:- ३ ज्ञानतँ पूर्व वा पीछे इस वर्तमान-देहविषै मरणपर्यंत करियेहै जो कर्म । सो क्रियमाणकर्म है ॥

* २२० प्रश्न:- ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति किसरीतिसँ होवैहै ?

उत्तर:- १ ज्ञानसँ अज्ञानके आवरणअंशकी निवृत्ति होवैहै ॥ आवरणकी निवृत्तिके भये आवरणकूँ आश्रयकरिके स्थित संचित कहिये पूर्वके अनेकजन्मविषै किये कर्मकी निवृत्ति (नाश) होवैहै । औ

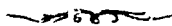
२ ज्ञानके आगेपीछे इसजन्मविषे किये किये-
माणकर्मका " मैं अकर्ता अभोक्ता असंग ब्रह्म
हूँ ॥" इस निश्चयके बलसें अपने आश्रय भ्रमज-
तादात्म्यके नाशकरिके औ रागद्वेषके अभावसें
जलविषे स्थित कमलपत्रकी न्याईं ज्ञानीकूं स्पर्श
होवै नहीं । किंतु ज्ञानीके कियमाणे जो इस-
जन्मविषे किये शुभ औ अशुभकर्मका कर्मसें
सुहृद् कहिये सशामीभक्त औ द्वेषी कहिये निंद-
कजन प्रदूषण करें हैं ।

३ औ अज्ञानकी विशेषशक्तिके आश्रित ज्ञानी-
के प्रारब्ध कहिये पूरेकेकिसी एकजन्मविषे किये
इसजन्मके आरम्भ वर्षकी भोगसें निवृत्ति होवै
ताते ज्ञानी सर्वकर्मसें मुक्त है ॥ याहीसें कर्म-
रचित जन्मादिकर्मसारसें भी मुक्त है ॥
इसरीतिसें ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति होवै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये ज्ञानीकर्मनिवृत्ति
प्रकारवर्णननामिका द्वादशकला समाप्त ॥

अथ त्रयोदशकलाप्रारंभः ॥१३॥

॥ सप्तज्ञानभूमिकावर्णन ॥



॥ तोटक छंद ॥

निज बोधकि भूमि सु सप्त अहैं ।

इस भांति १६६वसिष्ठ मुनीश कहैं ॥

शुभसाधन संपति आदि लहै ।

श्रवणादिविचार द्वितीय वहै ॥ २७ ॥

निदिध्यासन तीसरभूमि गहै ।

अपरोक्ष निजातम चौथि चहै ॥

हमता ममता विन पंचम है ।

छटवी सब वस्तु अकार दहै ॥ २८ ॥

॥ १६६ ॥ योगदानिष्ठविषै ॥

सतमी तुरिया जु वरिष्ठि न है ।

सबवृत्ति विलीन चिदात्म रहै ॥

१६७ इव गाढसुषुप्ति न जागत है ॥

परमानन्द मत्त पीतांबर है ॥ २८ ॥

* २२१ प्रश्न - सर्वज्ञानिनका निश्चय तो एकही है ।
परतु स्थितिका भेद काहेतें है ?

उत्तर - सर्वज्ञानिनकी स्थितिका भेद
ज्ञानभूमिकामे भेदतें है ॥

* २२२ प्रश्न - सो ज्ञानभूमिका कितनी हैं ?

उत्तर १ शुभेच्छा २ सुविचारणा ३ तनु-
मानसा ४ सत्त्वापत्ति ५ असक्तिके ६ पदार्था-
भाविनी ७ तुरीयगा । असात ज्ञानभूमिका हैं ।

* २२३ प्रश्नः—शुभेच्छा सो क्या है ?

उत्तरः—१ पूर्वजन्मविषै अथवा इसजन्मविषै किये निष्कामकर्म औ उपासनासँ शुद्ध औ एकाग्रचित्तवाले पुरुषकूँ विवेकवैराग्यपटुसंपत्ति औ मोक्षइच्छा। ये च्यारीसाधन होयके जो आत्माके जाननैकी तीव्रइच्छा होवैहै। सो शुभेच्छा नाम ज्ञानकी प्रथमभूमिका है ॥

* २२४ प्रश्नः—सुविचारणा सो क्या है ?

उत्तरः—२ आत्माके जाननैकी तीव्रइच्छासँ ब्रह्मनिष्ठगुरुके विधिपूर्वक शरण जायके। गुरुके मुखसँ जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वेदांत-वाक्यकूँ श्रवण करीके। तिस श्रवण किये अर्थकूँ आपके मनविषै घटावनैवास्ते अनेकयुक्तियांसँ मनन (विचार) करना। सो सुविचारणा नाम ज्ञानकी दूसरीभूमिका है ॥

* २०५ प्रश्न—तनुमानसा सो क्या है ?

उत्तर—३ स्वरूपके साक्षात्कार कहिये अगरोक्षग्रनुभवअर्थ थवणमननद्वारा निर्णय किये ब्रह्मात्माकी एकतारूप अर्थके निरंतर चितनरूप निदिध्यासनसँ जो स्थूलमनकी कहिये बहिर्मुखमनकी सूक्ष्मता नाम अतर्मुखता होयहै। सो तनुमानसा नाम ज्ञानकी तीसरी-भूमिका है ॥

* २२१ प्रश्न—सत्त्वापत्ति सो क्या है ?

उत्तर—४ थवणमनननिदिध्यासनसँ सशय औ विषयबस रहित स्वरूपसाक्षात्काररूप नित्रिकल्पस्थितिक भयेतँ तत्त्वज्ञानयुक्त मनरूप मत्ता (गुह्यग्रत करण) को जो प्राप्ति होयैई । सो सत्त्वापत्ति नाम ज्ञानकी चतुर्थभूमिका है ॥

कला] ॥ सप्तज्ञानभूमिकावर्णन ॥१३॥ २८१

* २२७ प्रश्न:—असंसक्ति सो क्या है ?

उत्तर:—५ निर्विकल्पसमाधिके अभ्यासकी परिपक्वतासँ देहविषै सर्वथा अहंताममता गलित होयके । देहादिकविषै जो सर्वथा आसक्तिका नाम प्रीतिका अभाव होवैहै । सो असंसक्ति नाम ज्ञानकी पंचमभूमिका है ॥

* २२८ प्रश्न:—पदार्थाभाविनी सो क्या है ?

उत्तर:—६ अतिशयनिर्विकल्पसमाधिके अभ्याससँ देहादिकसर्वपदार्थनका अधिष्ठानब्रह्मरूपसँ प्रतीति होनैकरि जो अभाव कहिये अप्रतीति होवैहै । सो पदार्थाभाविनी नाम ज्ञानकी षष्ठभूमिका है ॥

* २२९ प्रश्न:—तुरीयगा सो क्या है ?

उत्तर:—७ ज्ञाता ज्ञान औ ज्ञेयरूप त्रिपुटीकी चतुर्थपंचमभूमिकाकी न्याँई भावरूपकरि औ षष्ठभूमिकाकी न्याँई अभावरूपकरि प्रतीति बी

जदा होवै नही । ऐसी जो स्वपरसँ उत्थानरहित
तुरीयपदयिषै मनकी स्थिति । सो तुरीयगनाम
ज्ञानकी सप्तमभूमिका है ।

२३० प्रश्न -ये सप्तभूमिका किसके साधन हैं ?

उत्तर:—

१-३ प्रथम द्वितीय श्री तृतीयभूमिका । तत्त्व-
ज्ञानके साधन हैं । श्री

४ १५=चतुर्थभूमिका ही तत्त्वज्ञानरूप होनैतै
जीवन्मुक्ति श्री विदेहमुक्तिके
साधन हैं । श्री

५-७ पंचम षष्ठ श्री सप्तभूमिका जावन्मुक्तिके
विलक्षणध्यानंदके साधन हैं ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये सप्तज्ञानभूमिका
वर्णननामिका त्रयोदशकला समाप्ता । १३।

॥ १६८ ॥

१ कृतोपासन कहिये ज्ञानतैं पूर्व करीहै पूर्ण
उपासना जिसनै । सो श्री ।

२ अकृतोपासन कहिये ज्ञानतैं पूर्ण नहीं करीहै
उपासना जिसनै । सो

इस भेदतैं चतुर्थभूमिकारूप ज्ञानका अधिकारी
दो प्रकारका है ॥ तिनमें

१ कृतोपासन जो है सो तौ सम्यक् वैराग्यादिसाधन-
करि संपन्न होवैहै श्री ज्ञानके अनंतर अल्पाभ्यास-
सँ ऋटिति पंचमआदिकभूमिकाविषै आरूढ होवैहै ॥

२ श्री अकृतोपासन जो है तामें सर्वसाधन स्पष्ट
प्रतीत होते नहीं किंतु एकदो साधन प्रकट होवैहैं
श्री अन्यसाधन गोप्य रहतेहैं । यातें सो
बुद्धिमान् होवै तौ चतुर्थभूमिकारूप तत्त्वज्ञानकूं
पावताहै । परंतु बहुकालके अभ्याससँ कदाचित्
कोईक पंचमआदिकभूमिकाविषै आरूढ होवैहै ।
ऋटिति नहीं ॥

॥ अथ चतुर्दशकला प्रारम्भः ॥१४॥

॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥

॥ तोटकलुंद ॥

जघ जानत है निजरूपदिकूं ।

तव जीवन्मुक्ति समीपदिकूं ॥

अमधन्ध निवृत्ति १६६सदेहदिकूं ।

सुखसंपत्ति होवत गेहदिकूं ॥ ३० ॥

विदवान तजै इस देहदिकूं ।

तव पावत मुक्ति विदेहदिकूं ॥

तम लेश भजे सद नाशदिकूं ।

तज देत प्रपंच अभासदिकूं ॥ १३ ॥

॥ १६६ ॥ तव शरीरमदित पुढपकूं भनरूप
बधकी निवृत्तिस्वरूप जीवन्मुक्ति समीपदीकूं कहिये
तरकाळ हावरे । यह अर्थ है ॥

च.र्द.कला]॥जीवनमुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन॥१४॥२८५.

१७० सरिता इव सागर देशाहिकू ।

चिन्मात्र मिलाय १७१ विशेषहिकू ॥

चिद होय भजे अवशेषहिकू ।

नहिं जन्म पीताम्बर शेषहिकू ॥३२॥

* २३१ प्रश्नः—जीवनमुक्ति सो क्या है ?

उत्तरः—देहादिकप्रपंचकी प्रतीतिके होते जो ब्रह्मस्वरूपसँ स्थिति । सो जीवन्मुक्ति है ॥

* २३२ प्रश्नः—जीवन्मुक्तिविषै प्रपंचकी प्रतीति काहेतै होवैहै ?

उत्तरः—आवरण औ विक्षेप । ये दो

॥१७०॥सागरदेशहिकू सरिता इव (नदीकी न्याँई)

॥ १७१ ॥ स्थूलसूक्ष्मप्रपंचसहित चिदाभासरूप विपेक्षकू ॥

अविद्याकी शक्तियां हैं । तिनमें

१ आवरणशक्तिका ज्ञानमें नाश होवैहै । तारें
ज्ञानीकू अन्यजन्म होवै नहीं ।

२ परन्तु प्रारब्धके बलमें दूधधान्यकणकी न्यां
विक्षेपशक्ति (अविद्यालेश) रहैहै ।

तारें जीवन्मुक्तिविषै प्रपञ्चकी प्रतीति होवैहै

* २३३ प्रश्न—जीवन्मुक्तिविषै प्रपञ्चकी प्रतीति
कैसे होवैहै ?

उत्तर —

१ जैसे रज्जुके ज्ञानसे सर्पभ्रातिके निवृत्त भये
पीछे कपादिक भासनेहैं । औ

२ जैसे दर्पणके ज्ञानीकू प्रतिरिच भासताहै । अं

३ जैसे मरस्थलके ज्ञानीकू मृगजल भासताहै ।

तैसै तरबज्ञानीकू जीवन्मुक्तिदशाविषै घाधित
भये प्रपञ्चकी प्रतीति होवैहै ॥

कला] जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन॥१४॥ २८७

* २३४ प्रश्नः—वाधित भये प्रपंचकी प्रतीतिविषे
अन्यदृष्टांत क्या है ?

उत्तरः—दृष्टांतः—जैसे महाभारतके युद्धमें
द्रोणाचार्यके मरण भये पीछे अश्वत्थामाआदिक
के साथ युद्ध भयाहै ॥ तब सत्यसंकल्पश्रीकृष्ण-
परमात्माने यह संकल्प किया किः—“ इस
युद्धकी समाप्तिपर्यंत पह रथ श्रौ घोड़े ज्युंकेत्युं
हीं बने रहें” । यह चिंतनकरिके युद्धभूमिमें आये ॥
तहां अश्वत्थामाआदिकोंने ब्रह्मास्त्र (अग्निअस्त्र)
आदिकका समूह डारया । तिसकरि तिसी क्षण-
विषे अर्जुनके रथ श्रौ घोड़े भस्मीभूत भये । तौ
वी श्रीकृष्णपरमात्मारूप सारथिके संकल्पके
बलसे ज्युं त्युं बनेरहै । जब युद्ध समाप्त भया
नव भस्मीका ढेर होगया ॥

सिद्धांतः-तैत्तिरीय

- १ स्थूलदेहरूप रथ है ।
 - २ ताके पुण्यवापरूप दोचक्र हैं । औ
 - ३ तीनगुणरूप ध्वज है । औ
 - ४ पाचप्राणरूप बंधन है । औ
 - ५ दशइंद्रियरूप घोड़े हैं । औ
 - ६ शुभअशुभशब्दादिपांचविषयरूप मार्ग है औ
 - ७ मनरूप लगाम है । औ
 - ८ बुद्धिरूप सारथि (थीरुपण) है । औ
 - ९ मारब्धकर्मरूप ताका संकलप है । औ
 - १० अहकाररूप बैठनेका स्थान है । औ
 - ११ आत्मारूप रथी (अर्जुन) है ।
 - १२ ताके वैराग्यादिसाधनरूप शस्त्र है ।
- सो रथपर आरूढ होयके सत्सगरूप रणभूमि-
में गया । ताकू गुरुरूप अश्वत्थामाआदिकने
महावाक्यका उपदेशरूप ब्रह्मास्त्रआदिक मारया ।

कला] ॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥१३॥ २८६

तिसकरि ज्ञानरूप अग्नि उदय होयके तिसी क्षणविषै देहादिप्रपंचरूप रथादिकसर्वका बाध भया । तौ वी श्रीकृष्णरूप सारथिस्थानी बुद्धिके प्रारब्धकर्मरूप संकल्पके बलसँ देहादिकका नाश होता नहीं । किंतु १७२पीछे वी देहादिककी प्रतीति होवैहै ॥ याहीकूँ १७३ बाधितानुवृत्ति कहैहैं ॥

इसरीतिसँ यह बाधित भये प्रपंचकी प्रतीतिविषै दृष्टांत है ॥

१* २३५ प्रश्न:—विदेहमुक्ति सो क्या है ?

उत्तर:—

१ प्रपंचकी प्रतीतिरहित ब्रह्मस्वरूपसँ स्थिति । वा
२ प्रारब्धकर्मके भोगसँ नाश भये पीछे स्थूलसूक्ष्म शरीरके आकारसँ परिणामकूँ प्राप्त भये अज्ञानका चेतनविषै विलय ।

सो विदेहमुक्ति है ॥

॥ १७२ ॥ जिसका नाश होवे सो नाशका प्रति
यागी है ॥

१ ता प्रतियोगी की नाशविषै प्रतीति होवैई । श्री

२ बाधविषै प्रतिशोकोको प्रतीति होवै नहीं । किन्तु
तीनकाहप्रभाव प्रतीत होवैई ।

यह नाश श्री बाधका भेद है ॥

॥ १७३ ॥ जैसे कुवाजका चक्र । इंसै फेरनेका
प्रयत्न छोड़हुये पीछे श्री वेगके बलसै फिरताई । सिमै
बाध हुये पीछे श्री प्रारब्धकर्मसै देहादिप्रपञ्चकी जो
प्रतीति होवै । सो बाधितानुवृत्ति है ॥

कला] ॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥१४॥ २६१

* २३६ प्रश्नः—प्रारब्धके अन्त भये कार्यसहित
अज्ञानलेशका विलय किस माधनसँ
होवैहै ?

उत्तरः—प्रारब्धके अन्त भये अधिक वा न्यून
मूर्छाकालमें यद्यपि ब्रह्माकारवृत्तिका असंभव है
श्री विद्वानकूँ विधि वी नहीं है । तथापि सुपुति
की न्याँई । ता मूर्छाकालमें वी ब्रह्मविद्याका
संस्कार है । तामें आरूढ चेतनसँ कार्यसहित
अज्ञानलेशका विलय (नाश) होवैहै ॥ श्री काष्ठ
आरूढअग्निसेँ तृणादिकका दाह होयके आपके
वो दाहकी न्याँई । ता संस्कारआरूढचेतनसँ
प्रपंचका विनाश होयके आप (ज्ञानके संस्कार)
का वी विनाश होवैहै । पीछे असंगशुद्धसच्चिदा-
नंदस्वप्रकाश अपनाआप ब्रह्म अवशेष रहताहै ।

इति श्रीविचारचंद्रोदये जीवन्मुक्तिविदेह-
मुक्तिवर्णन० चतुर्दशकला समाप्ता ॥१४॥

॥ अथ पंचदशकलाप्रारंभः ॥ १५ ॥

॥ १७४ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्गानि ॥



ललितल्लुद ॥ (गोपिकागीतघत्)

जन तु १०२ जानिले ज्ञेय अर्थकं ।

सकल छेद स-दे अनर्थक ॥

सुगति कौन है हेतु ताहिको ।

१०५ जनक बीचको कौन याहिको ॥ ३३ ॥

विषय बोधको कौन जानिले ।

प्रनक ईशको तत्त्व मानिले ॥

१०७ अहमअर्थक खूब सोजिले ।

“तत पदार्थक शुद्ध खोजिले ॥ ३४ ॥ -

॥ १७४ ॥

१ वेदांतशास्त्ररूप प्रमाणसँ जन्य जो यथार्थज्ञान । सो प्रमा है ॥

२ ता प्रमासँ जागनेँ योग्य जो पदार्थ । सो प्रमेय है ॥
तिनका इहां कथन है ॥ यातें इस (पंचदशम)
कलाके विचारतें प्रमेयगतसंशयकी निवृत्ति होवै है ॥

५ प्रमेयगतसंशयका कथन हमारे किये बालबोधिनी-
टीकासहित बालबोधनामकग्रंथके नवमउपदेशविषे
किया है । तहां देखलेना ॥

॥ १७५ ॥ वेदांतके प्रमेयरूप पदार्थनकूँ जानिले ॥

॥ १७६ ॥ बाहिको (मोक्षके हेतु ज्ञानको) बीचको
जनक (अवांतरसाधन) कौन है ?

॥ १७७ ॥ अहं (त्वं) पदके अर्थकूँ ॥

१०८ परमआत्मा एक मानिले ।

तहँ सदादि ऐश्वर्य आनिले ॥

सत चिदात्म सो १०९ सर्वदा अहै ।

इस पीतांबरो जानकं गहँ ॥ ३५ ॥

* २३७ प्रश्न—मोक्षका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—

१ कार्यमहित अज्ञानरूप अनर्थकी कदिये
बधनकी निवृत्ति । औ

२ परमानन्दरूप ब्रह्मकी प्राप्ति ।

यह मोक्षका स्वरूप है ॥

॥ १७८ ॥ ब्रह्म ॥

॥ १७९ ॥ सच्चिदानन्दस्वरूप सो (ब्रह्मसात्माही
एकरा) सर्वदा (तीनाकालमें) है ॥

कला] ॥ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥ १५ ॥ २६५

* २३२ प्रश्न:—तिस मोक्षका साक्षात्साधन क्या है?

उत्तर:—ब्रह्म औ आत्माकी एकताका अपरोक्षज्ञान । मोक्षका साक्षात्साधन है ॥

* २३६ प्रश्न:—मोक्षका अर्वांतर (ज्ञानद्वारा) साधन क्या है ?

उत्तर:—निष्कामकर्म औ उपासनादिक अनेक मोक्षके अर्वांतरसाधन हैं ॥

* २४० प्रश्न:—तिस ज्ञानका विषय क्या है ?

उत्तर:—आत्मा औ ब्रह्मकी एकता ज्ञानका विषय है ॥

* २४१ प्रश्न:—आत्माका स्वरूप क्या है ?

उत्तर:—१ देह-इंद्रिय-प्राण-मन-बुद्धि-अज्ञान औ शून्यसँ भिन्न । २ अकर्ता । ३ अभोक्ता । ४ असंग । ५ व्यापक । औ ६ चेतन । आत्माका स्वरूप है ॥

* २४२ प्रश्नः—ब्रह्मका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—१ निष्प्रपञ्च । २ असंग । ३ परिपूर्ण । ४ चेतन । ब्रह्मका स्वरूप है ॥

* २४३ प्रश्नः—ब्रह्मआत्माकी एकता कैसी है ?

उत्तरः—१ सच्चिदानन्द । २ ऐश्वर्यस्वरूप । ३ सदाविद्यमान । ब्रह्मआत्माकी एकता है ॥

* २४४ प्रश्नः—ज्ञानका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—जीवब्रह्मके अभेदका निश्चय । ज्ञानका स्वरूप है ॥

* २४५ प्रश्नः—ज्ञानका साक्षात्पर्यन्तरंग (समीपका) साधन क्या है ?

उत्तरः—ब्रह्मनिष्ठगुरुके मुग्सँ महावाक्यके अर्थका श्रवण । ज्ञानका साक्षात्पर्यन्तरंग साधन है ॥

कला] वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥१५॥ २६७

* २४६ प्रश्न:-ज्ञानके परंपराअंतरंगसाधन कौन-
सैं हैं ?

उत्तर:-१ विवेक । २ वैराग्य । ३ पट्-
संपत्ति (शम । दम । उपरति । तितिक्षा । श्रद्धा ।
समाधान) । ४ मुमुक्षुता । ५ “ तत् ” पद औ
“ त्वं ” पदके अर्थका शोधन । ६ श्रवण ।
७ नमन औ ८ निदिध्यासन । ये आठ ज्ञानके
परंपरासैं अंतरंगसाधन हैं ॥

* २४७ प्रश्न:-ज्ञानके बहिरंग (दूरके) साधन
कौन हैं ?

उत्तर:-निष्कामकर्म औ निष्कामउपासना-
आदिक । ज्ञानके बहिरंगसाधन हैं ॥

* २४८ प्रश्न:-ज्ञानके सर्व मिलिके कितनै साधन हैं ?

उत्तर:-ज्ञानके सर्वमिलिके एकादश (११
वा कछु अधिक) साधन हैं ॥

इति आविचारचंद्रोदये वेदांतप्रमेयनिरूपण-
नामिका पंचदशकला समाप्ता ॥१५॥

मंगलाचरणम् ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

चैतन्यं शाश्वतं शान्तं व्योमातीतं निरंजनम्
नादविन्दुकलातीतं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥१॥

सर्वश्रुतिशिरोरत्नविराजितपदांबुजम् ॥

वेदांतांबुजमातङ्गं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥२॥

अज्ञानातिमिरांधस्य ज्ञानांजनशलाकया ॥

चक्षुःकुम्भिलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥३॥

गुरुर्ब्रह्मागुरुर्विष्णुगुरुर्देवो महेश्वरः ॥

गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥४॥

अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ॥

तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥५॥

अखंडानंदबोधाय शिष्यसंतापहारिणे ॥

सच्चिदानंदरूपाय रामाय गुरवे नमः ॥६॥

॥ इति मंगलाचरणम् ॥

॥ अथ षोडशकलाप्रारंभः ॥१६॥

॥ अथ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥

॥ उपोद्धातकीर्त्तनम् ॥

स्मृत्वाऽद्वैतपरात्मानं शंकरं परमं गुरुम् ॥
तात्पर्यसंविदे वक्ष्ये श्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥१॥

टीकाः-अद्वैतपरमात्मारूप जो परमगुरु
शंकर हैं । तिनकूं स्मरण करिके । श्रुतिनके
तात्पर्यके ज्ञानअर्थ । मैं श्रुतिषड्लिंगसंग्रह
नामक लघुग्रंथकूं कहताहूं ॥ १ ॥

विषयासक्ति-मानस्य-मेयस्य-संशय-भ्रमाः ।
चत्वारःप्रतिबंधाःस्युज्जांनादाढर्यस्य हेतवः ॥

टीकाः-१ विषयासक्ति २ प्रमाणगतसंशय

३ प्रमेयगतसंशय औ ४ भ्रम कहिये विपर्यय ।

ये च्यारी ज्ञानकी अदृढताके हेतु प्रतिबंध
होवैहैं ॥ २ ॥

आद्यस्यविनिवृत्तिःस्याद्वैराग्यादिचतुष्टयात्
श्रवणेन द्वितीयस्य मननात्तार्क्ष्यस्य च ॥ ३ ॥

टीकाः-प्रथमकी निवृत्ति । वैराग्य है आदि
जिसके ऐसे साधनोंके चतुष्टयतै होवे है ओ
द्वितीयकी निवृत्ति श्रवणसे होवे है ओ तृतीयकी
निवृत्ति मननतै होवे है ॥ ३ ॥

ध्यानेन तु चतुर्थस्य विनिवृत्तिर्भवेद्ध्रुवम् ।
पूर्वपूर्वानिवृत्त्या नैवांतरोत्तरनाशनम् ॥ ४ ॥

टीकाः-ओ चतुर्थप्रतिपक्षकी निवृत्ति ।
निदिध्यासनसे निश्चित होवे है ॥ पूर्वपूर्वकी अनि-
वृत्तिकरि उत्तरदत्तरका नाश कहिये निवृत्ति
नहा हावे है ॥ ४ ॥

विषयासक्तिनाशेन विना नो श्रवणं भवेत्
ताभ्यामृतं न मननं न ध्यानं तैर्धिना भवेत्

टीकाः—विषयासक्तिके नाशसँ विना श्रवण
होवै नहीं औ तिन दोनूँ विना मनन नहीं
होवै है औ इन तीनूँसँ विना निदिध्यासन
होवै नहीं ॥ ५ ॥

स्ववर्णाश्रमधर्मेण तपसा हरितोषणात् ।
साधन प्रभवेत्पुंसां वैराग्यादिचतुष्टयम् ॥६॥

टीकाः—स्व कहिये मिथ्यात्मा-शरीर । ताके
वर्ण अरु आश्रमसंबंधी धर्मकरि औ कृच्छ्रचां-
द्रायणादितपकरि औ हरिभजन किंवा सर्वभूतन
पर दयादिरूप हरिके संतोषकारक कर्मतँ पुरुष-
नकूँ वैराग्यादिकका चतुष्टयरूप साधन प्रकल्प-
करि होवैहै ॥ ६ ॥

तत्सिद्धावुपसन्नः सन् गुरु ब्रह्मविदुत्तमम् ।
ज्ञानोत्पत्त्यैमहावाक्यश्रुतिकुर्याद्भितन्मुखात् ।

टीकाः-तिन च्यारी साधनोंकी सिद्धिके हुये
ब्रह्मवेत्ताओंविषै उत्तम कहिये निदोषगुरुके
प्रति उपसत्तियुक्त कहिये शरणागत हुया ।
ज्ञानकी उत्पत्तिअर्थ तिस गुरुके मुखतें वेदविषै
प्रसिद्ध अर्थसहित महावाक्यके श्रवणहू करै ॥७॥

तत्सिद्धौ द्वापरभ्रांतिप्रहाणाय मुमुक्षुभिः ।
श्रवणं मननं ध्यानमनुष्ठेय फलावधि ॥८॥

टीकाः-ता ज्ञानकी सिद्धि कहिये उत्पत्तिके
हुये । मुमुक्षुनकरि द्वापर जो द्विविधसशय श्रौ
स्मृति जा विपरीतभावना । तिनके नाशअर्थ
प्रमाणसशयादित्रिविध प्रतिउधरे नाशरूप फल
पर्यंत जैम दारिनेमं श्रवण मनन श्रौ निदिध्यासन
करनहू पाव्य है ॥ ८ ॥

श्रवणस्य प्रसिद्धयैव भवतोऽत्ये तथा सति।
द्वयोर्मूलं तु श्रवणं कर्तव्यं तद्धि धीधनैः६

टीका:-श्रवणकी प्रकर्षकरि सिद्धिसैहीं
अंतके दो जे मनन अरु ध्यान वे होवैहैं।
तैसैं हुये तिन दोनूँका प्रसिद्धमूल जो श्रवण।
सो ठो बुद्धिरूप धनवानोंकरि प्रथमकर्तव्य
है ॥ ६ ॥

वेदांतानामशेषाणामादिमध्यावसानतः।
ब्रह्मात्मन्येव तात्पर्यमिति धीः श्रवणं भवेत्

टीका:-तात्पर्यके निर्णायक पट्टलिंगरूप शु-
क्तिनकरि " सर्ववेदांत जे उपनिषद् । तिनका
आदि मध्य श्री अंततैं ब्रह्मरूप आत्माविषैहीं
तात्पर्य है" पेसी जो बुद्धि कहिये निश्चय । सो
श्रवण होवैहै ॥ यह श्रवणका शास्त्रउक्त
लक्षण है ॥ १० ॥

१ उपक्रमापसंहाराश्चभ्यासोऽपूर्वताफलम्
२ अर्थवादोऽपपत्ती च लिंग तात्पर्यनिर्णये ।

टीका*—तिन पटलिंगनकृ श्रव नामकरि
निर्देश करह — १ उपक्रम अरु उपसंहार इन
दोनू की एकरूपता । २ अभ्यास । ३ अपूर्वता
४ फल । ५ अर्थवाद । आ ६ अपपत्ति । यह
प्रत्यक तात्पर्यके निणयविषै लिंग ह ॥ ६१ ॥

॥ ७ ॥ उपक्रम आ उपसंहार ॥

वस्तुन प्रतिपाद्यस्यादायते प्रतिपादनम् ।
उपक्रमापसंहारौ तदैक्य कथित युधे १२

टीका अरु पटशङ्कनकरि प्रत्यक लिंगर
लक्षणकृ कहह — प्रकरणरुचिक प्रतिपादन
करनकृ याग्य जो ब्रह्मरूप अद्वितीयवस्तु है ।
ताका प्रकरणक आदिषिषै तथा अतविषै जा

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३०५

प्रतिपादन । सो उपक्रम अरु उपसंहार हे ॥
तिनमें आदिविषयै जो प्रतिपादन । सो उपक्रम
हे । ओ अंतविषयै जो प्रतिपादन । सो उपसंहार
हे ॥ तिन दोनूकी एकलिंगरूपता पंडितोंने
कहीहै ॥ १२ ॥

॥ २ ॥ अभ्यास ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य पठनं च पुनःपुनः ।
अभ्यासः प्रोच्यते प्राज्ञैः स एवावृत्तिशब्द-
भाक् ॥ १३ ॥

टीकाः—प्रकरणकरि प्रतिपादन करनेयोग्य
अद्वितीयवस्तुका तिसप्रकरणके मध्यविषयै
जो पुनः पुनः पठन । सो पंडितनकरि
अभ्यास कहियेहै । सोई अभ्यास आवृत्ति-
शब्दका वाच्य है ॥ १३ ॥

॥ ३ ॥ अपूर्वता ॥

श्रुतिभिन्नप्रमाणेनाविषयत्वपूर्वता ।

कुत्रचित्स्वप्रकाशत्वमप्यमेयतयोच्यते? ४

टीकाः-प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीयवस्तुकी

जो श्रुतनै भिन्न कहिये प्रत्यक्षादिलौकिक-

प्रमाणकरि अविषयता हे । सो अपूर्वता हे ॥

श्री कर्होरु ता अद्वितीयवस्तुकी स्वप्रकाशता बी

अमयता कहिये सर्वप्रमाणनकी अविषयतारूप

हतुकरि अपूर्वता कहियेहे ॥ १४ ॥ ८

॥ ४ ॥ फल ॥

श्रुयमाणंतु नज्जानात्तत्प्रप्त्यादिप्रयोजनमु

फल प्रतीतिन प्राज्ञमुग्य मोक्षकलक्षणम्

टीकाः-श्री प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीय

वस्तुनै प्रकरणविवैश्वयमात्तु कहिये मुन्या

जा निम्नकी प्राप्ति आदिप्रयोजन । सो पहिलोनै

मानरूप एकताज्ञानगाला मुख्य फल कहाहे ॥ १५ ॥

कृत्वा] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगमग्रहः ॥ १६ ॥ ३०७

॥ ५ ॥ अर्थवाद ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य प्रशंसनमथापि वा ।
निंदा तद्विपरीतस्य ह्यर्थवादः स्मृतो बुधैः १६

टीकाः-प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीय-
वस्तुका जो प्रशंसन कहिये स्तुति अथवा तिसरें
विपरीत कहिये द्वैतकी निंदा वी पंडितोंनै
अर्थवाद कहाहै ॥ १६ ॥

॥ ६ ॥ उपपत्ति ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य युक्तिभिः प्रतिपादनम्
उपपत्तिः प्रविज्ञेया दृष्टान्ताद्या ह्यनेकधा १७

टीका-प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीयवस्तु-
का युक्तिसँ जो प्रतिपादन । सो दृष्टान्तआदिक
अनेकप्रकारकी युक्तिरूप उपपत्ति जाननेकूँ
योग्य है ॥ १७ ॥

पदलिङ्गविचारेण भवेत्तात्पर्यनिर्णय
तात्पर्यं यस्य शब्दस्य यत्र सः स्यात्तदर्थ

टीका- उक्तप्रकारके पदलिङ्गके उपनि-
पदनविषे विचारके उपनिपदनका अर्थ कहि
प्रत्येकप्रभिनप्रत्ययविषे जो तात्पर्य है । तात्पर्य
निश्चय होरिहै ॥ ओ जिम शब्दका जिस अर्थ
विषे ना ग्य हाये । या ता शब्दका अर्थ हो
है । अन्य कहिये केवल वाच्यअर्थ नहीं ॥ १८ ।

मदानां श्रुतिसिद्ध्या मानसंशयनुत्तरे
कराम्यथानिनिच्छिमनिधियलिङ्गकीर्त्तनम् ?

टीका- मन्त्र कहिये अगदितजनोके 'वेदन्त
नर अहनाथप्रसविषे तात्पर्यके निश्चयरूप ।
अथणुकी विद्विधरि । वेदान्त अर्थतत्त्वकर
प्रतिपादक ह वा अन्यअर्थके प्रतिपादक है ? "

इस आतरूप प्रमाणसंशयके नागअर्थ ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३०६

भूमिविषै गाडेहुये निधिके सिद्धिकरि कीर्त्तनकी
न्याई । मैं लिंगनके कीर्त्तनकूँ करूँहूँ ॥ १६ ॥

तत्त्वालोके विशेषोऽपि विचारस्तददर्शनान् ।
मयात्वेषां समासेन क्रियते दिक्प्रदर्शनम् २०

टीका—यद्यपि आनन्दगिरिस्वामीकृत तत्त्वा-
लोकनामग्रन्थविषै इन लिंगनका विशेष
विचार किया है । यातैँ इस लघुग्रन्थका प्रयोजन
नहीं है । तथापि ता तत्त्वालोकके अदर्शनतैँ ।
भुजेकरि तो संक्षेपसैँ इन लिंगनकी दिशामात्रका
प्रदर्शन करिये है ॥ २० ॥

सर्वेषूपनिषद्ग्रन्थेषूपपासनमनेकधा ।

ज्ञानशेषं तु तज्ज्ञेयं चित्तशुद्धिकरं यतः ११

टीका—सर्वउपनिषदरूप ग्रन्थनविषै अनेक
प्रकारका उपासन कहिये ध्यान कहा है । सो
ज्ञानका शेष कहिये उपकारक जाननेकूँ

योग्य है । उर्तं चित्तकी शुद्धिका करनेवा
है । याने उपनिषदनियमै जो उपासनाभा
है । ताके पृथक् लिंगनके विचारका उपयो
नहीं है । याने सो इहां नहीं किया ॥ ३१ ॥

इति धीधृतिषड्विंशतिगणपदे उपाद्घातकीर्तन
नाम प्रथमं प्रकरणं समाप्तम् ॥ ३१ ॥

अथेशावास्योपनिषल्लिंगकीर्तनम् ३

ईशावास्यमुपक्रमोपसंहारः स पर्यगात् ।

अनेजदेकमित्याद्योऽभ्यासस्तस्याद्वयस्य ।

१ उपक्रमउपसंहार — (१) 'ईशा-

द्यास्यामिदं सर्वं' । कहिये ' यह सर्व

जगन् । ईश्वरकरि आशास्य कहिये आच्छादन
करनहु याग्य है " । ऐमें प्रथममन्त्रसँ उपक्रम

करिके । (२) ' स पर्यगाच्छुक्ते । ' कहिये

" सा व्यासीश्वोरर्गं जानामया श्री शुद्ध है " ।

इस मन्त्रनकरि उपसंहार है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगमं महः ॥१६॥ ३११

२ अभ्यासः—श्री “अनेजदेकं मनसो
जवीयो” । कहिये “ अचंचल एक मनसैं
वेगवान् है” । इसआदि अर्थरूप तिस अद्वैतका
अभ्यास है ॥ इहां आदिराब्दकरि “ तदंतरस्य
सर्वस्य ” कहिये “ सो इस सर्वके अंतर है ” ।
इस मन्त्रका ग्रहण है ॥ १ ॥

नैनहेवा अपूर्वत्व फलं मोहाद्य भाव ऋम् ।
कुर्वन्नित्यनुवाद्यैवासूर्या भेदाविनिदनम्

२ अपूर्वताः—नैनहेवा आप्नुवन् पूर्व-
मर्शत्” । कहिये इसकूँ देव जे इन्द्रिय वे न
प्राप्त होते भये । सो पूर्व गयाहै ” । इस ४
मन्त्रकरि उपनिषद्नतैं अन्य प्रत्यक्षादिप्रमाणनकी
अविषयतारूप अपूर्वता कहीहै ॥

४ फलः—श्री“तत्र को मोहः कः शोक,
एकत्थमनुपश्यतः” कहिये “ तहां एकताके
दग्गनहारेकू कौन मोह है । कौन शोक है” । इस
७ मन्त्रसे मोहयादिकका अभावरूप फल
कहाई ॥

५ अर्थवादः—कुर्वन्नवेह कर्माणि जिजी
विषेच्छन्त्समाः” । कहिये “ इहा कर्मनकू
करनाहुया शतरं जोयनेकू इच्छे” । इस
२ मन्त्रसे जीवनको इच्छावाले भेददर्शीकू कर्म
करनका अनुयाद करिकेहीं । पीछे “असूर्या
नाम ते लोकाः” । कहिये “ वे असुरनके
लाक प्रसिद्ध ह ” । इन ३ मन्त्रसे भेदज्ञानकी
निंदा अरु अर्थात् अमेदज्ञानकी स्तुतिरूप
अर्थवाद कहाई ॥ २ ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्कलिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३१३

तस्मिन्नपो मातरिरवेत्युपपत्तिः प्रदर्शिता !
एतैरीशोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥३॥

६ उत्पत्तिः—श्रौ “तस्मिन्नपो मात-
रिश्वा दधाति” । कहिये “ ताके होते वायु
जलकूँ धारताहै” । ऐसैँ इस ४ मन्त्रसँ उपपत्ति
कहिये अभेदबोधनकी युक्ति दिखाई ॥ इन लिंगों-
रुति ईशोपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषैँ तात्पर्य
अंगीकार करियेहै ॥ ३ ॥

इति श्री० ईशोपनिषद्विलगकी० द्वितीयं
प्रकरणं ० ॥ २ ॥

अथ केनोपनिषद्विलगकीर्तनम् ॥३॥
श्रोत्रस्येत्प्राद्युपक्रम्य प्रतिबोधादिवाक्यतः
उपसंहार एवोक्तस्तदैक्यं ज्ञायते बुधैः ॥१॥
१ उपक्रमउपसंहारः—[१] “श्रोत्रस्य

श्रौत्र' । कहिये "थोत्रका थोत्र है" इत्यादि १ षडके २ चाक्षुषसें उपक्रमकरिके ॥ [२. 'प्रतिषोध्यविदित' । कहिये 'षोडशोद्यके प्रति विदित हैं" । इत्यादि १।१२ चाक्षुषसें उपसंहार ही कहा है । इन दोनूँकी एकता पडितनकरि जानियेहै ॥ ८ ॥

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धीत्याद्यभ्यास उदीरित
तत्रेत्याद्यपूर्वत्व प्रेत्यास्मादिनि वै फलम्

२ अभ्यास.—'तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि' ।

कहिये 'ताहीकू तू ब्रह्म जान" इत्यादि १।४ = अभ्यास कहा है ॥

३ अपूर्वता:—श्रौ'न तत्र चक्षुर्गच्छति'

कहिये "निसविधै चक्षु गमन करता नहीं" । इत्यादि १।३ उपनिषदनतें भिन्न प्रमाणकी अविषयतारूप अपूर्वता है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३१५

४ फलः—‘भूतेषु भूतेषु विचिंत्य धीराः’
कहिये “ धीर । सर्वभूतनविषे जानिके ” । ऐसैं
आत्मज्ञानकूँ अनुवाद करिके ‘प्रेत्यास्माल्लोका-
दमृता भवन्ति’ । कहिये “ इस लोकतैं देह
अरु प्राणके वियोगकूँ पायके अमृतरूप होवैहै”
ऐसैं ३-५ प्रसिद्धफल कहाहै ॥ २ ॥

ब्रह्महेत्याद्यर्थवादं विज्ञातामिति चांतिमम्
एतैः केनोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥ ३ ॥

५ अर्थवादः—औ ‘ ब्रह्म ह देवेभ्यो
विजिग्ये काहय “ब्रह्म देवनके अर्थ विजय
देताभया” । इत्यादि इन ३ । १ वाक्यनसैं
आख्यायिकारूप अर्थवाद कहाहै ॥

६ उपपत्ति—औ ‘यस्यामन्तं तस्य
मन्तं’ कहिये “जिसकूँ अज्ञात है तिसकूँ ज्ञात
है” । इत्यादिरूप इस २ । ३ स्वयंप्रकाश अद्वैत-
वस्तुके साधक वाक्यकरि अंतिम कहिये ‘उपपत्ति

कहिये तर्पणमयधुनिरूप पण्डलिंग कहाई ॥ ३
 लिंगांकरि कनउपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषै ता'
 अङ्गीकार करियेहे ॥ ३ ॥

इति श्री० केनोपनिषद्भिगकर्ताने नाम

तृ० प्र० समाप्तम् ॥ ३ ॥

प्रथ कठोपनिषद्भिगकर्तानम् ॥४॥

येष प्रेते मनुष्ये तिष्ठत्यादि सामान्यतस्तः
 अन्यत्र धर्मादित्यत्यादिवाक्याच्च विशेषतः

१ उपक्रम उपसहारः-[१] 'येष प्रेते

विचिकित्सा मनुष्ये'। कहिये मरे मनुष्यविषै
 जा यह सशय है इत्यादि १।२।१० सामान्यत
 उपक्रम है । तथा 'अन्यत्र धर्मादन्यत्रा
 धर्मादन्यत्रापमात्कृताकृतात्' कहिये 'धर्मते
 भिन्न अरु अधमने भिन्न औ इस कार्य कारणते
 भिन्न है इत्यादि १।२।१४ वाक्यते विशेषकरि
 उपक्रम है । १ ॥

कला] ॥ "श्रीश्रुतिपङ्क्तिंगमग्रहः ॥१६॥ ३१७

उपक्रमोऽगुष्टमात्र इत्यारभ्योपसंहृतिः ।
न जायतेऽशरीरं च नित्यानां नित्य एव सः २
चेतनोऽचेतनानां च बहूनामेक एव च ।
अतत्तियेषां पल्लवध्वज्य इत्याद्यभ्यास ईरितः ३

(२) श्री 'अंगुष्टमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा' । कहिये 'अंगुष्टमात्र पुरुष अंतरात्मा है" । ऐसैं आरंभ करिके इस २।६।१७ वाक्यसैं उपसंहार कहा है ॥

२ अभ्यासः—श्री 'न जायते म्रियते वा' । कहिये "जन्मता नहीं वा मरता नहीं" । १।२।१८ श्री 'अशरीरं च शरीरेष्वनघस्थेऽवस्थितम्' । कहिये अस्थिर शरीरनविनै स्थित अशरीरकृ" २।२।२१ श्री नित्यो नित्यानां । कहिये "सो नित्योंका नित्य है" । २।५।१३ ॥ ३ ॥

श्री 'चेतनश्चेतनानामेको बहूनां विद-
धाति कामान्' । कहिये "चेतनोंका चेतन
है । बहुतनके मध्य एक हुआ कामोंकू करता
है" । २ । ५ । २३ श्री 'अस्नीत्पेचोपल-
ब्धव्यः' । "है" देखेंही जानतेकू योग्य है ।
२ । १३ इत्यादि बहुकरिके अभ्यास कहा
है ॥ ३ ॥

नैव वाचा न मनसंत्याद्यपूर्वत्वमिगित्प्रामृ-
त्युप्रोक्ता त्वेवमाद्याफल श्रुत्या समीरितम

३ अपूर्वताः—“नैव वाचा . न मनसा
प्राप्तु शक्यो न चक्षुषा' कहिये 'नहीं वाणी
करि न मनकरि न चक्षुकरि जानतेकू शक्य
है' । १ । ६ । ८६ इत्यादि अपूर्वता अभि
घेत है ॥

४ फलः—श्री “मृत्युप्रोक्तां नचिकेतांऽथ
लब्ध्वा विद्यामेतां योगविधिं च कृत्स्नम्।
ब्रह्म प्राप्तो विरजोऽभूद्विमृत्युरन्योऽप्येवं
यो विदध्यात्ममेव” । कहिये “अनन्तर नचि-
केता । यमकरि कही इस विद्याकूँ श्री संपूर्ण
योगविधिकूँ पायके ब्रह्मकूँ प्राप्त निर्मल मृत्यु-
रहित होताभया । अन्य वी जो अध्यात्मकूँहीं
जानैगा सो ऐसे होवेगा” । इत्यादि १ अध्या-
यकी ६ पष्ठवल्लीके १८ वाक्यतैँ । श्रुतिमें फल
सम्यक् कहाहै ॥ ४ ॥

स लब्ध्वा मोदनीयं वै फलं प्रोक्तं स्फुटं तथा
ब्रह्म क्षत्रं च युगलमोदनं त्वेवमादितः५
तैसैः “स मोदते मोदनीयं हि लब्ध्वा” ।
कहिये “सो मोदरूपसैँ अनुभव करने योग्यकूँ
पायके मोदकूँ पावताहै” १ । २ । १३ इस
वाक्यकरि ऐसैँ यह वी स्पष्ट फल कहाहै ॥

५ अर्थवादः—श्री “यस्य ब्रह्म च क्षत्रं
 च उभे भयन शोदनः” । कहिये “ जाका
 ब्राह्मण श्री क्षत्रिय दोनू शोदन होवहै” । १। २।
 २४ इत्यादि वाक्यते ॥ ५ ॥

अर्थवादश्च युक्तिर्वै त्वग्निरित्यादिवाक्यतः।
 एभि कठोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यभिष्यते ६

अहं तब्रह्मकी स्तुतिरूप अर्थवाद कहाहै ।
 तैत्ति ‘मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव
 पश्यति’ कहिये “ जो इहां नानाकी न्यां^०
 देखताहै सो मृत्युनें मृत्युकू पावताहै ” २

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रह ॥१६॥ ३२१

६ उपपत्तिः—अग्निर्गर्भको भुवनं प्र-
विष्टो रूपरूपं प्रतिरूपो बभूव” । कहिये
“जैसैं एक अग्नि भुवनके प्रति प्रविष्ट हुया
रूप—रूपके ताई प्रतिरूप होताभया” । २ । ५ ।
६—११इत्यादि तीनमन्त्ररूप वाक्यनकरि औ
चकारसैं येन रूपं रसं गंधं” कहिये “ जिस
करि रूपकूं रसकूं गन्धकूं जानताहै । इस २।
४।३ आदिक अनेकवाक्यनसैं वी युक्तिशब्दकी
वाच्य उपपत्ति कहीहै ॥ इन लिंगोंकरि कटा-
वल्लीउपनिषद् का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अङ्गी-
कार करियेहै ॥ ६ ॥

इतिश्री०कठोपनिषद्ग्रीक्री च० प्र० समाप्तम्॥४॥

अथ प्रश्नोपनिषद्विल्लिङ्गकर्तनम् ॥५॥

ब्रह्मपरा हि वै ब्रह्मनिष्ठा इत्युपक्रम्य तत्
तान्हावाचैतावदेवोपसंहारस्तदेकता ॥

१ उपक्रमउपसंहार.-[१] " ब्रह्मपरा
ब्रह्मनिष्ठा पर ब्रह्मान्वेषमाणाः" । कहिये
ब्रह्मनिष्ठै तत्पर ब्रह्मनिष्ठ परब्रह्मकू खोजते हुये"
१ । १ ऐसे तिस परब्रह्मकू ही उपक्रम करिके ।

(२) ' तान्हावाचैतावदेवाहमेतःपरं ब्रह्म
यद् नान' परमस्ति" । कहिये" तिनकू कहता
भया इतनाही मैं इस परब्रह्मकू जानताहू ।
इसत पर नहा है । ६ प्रश्नके ७ वाक्यसँ ऐसे
उपसंहार है । एत दोनू की परलिंगरूपता
है ॥ १ ।

ला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः । १६ ॥ ३२३

एतद्वै सत्यकामंति यत्तादभ्यास उच्यते ।

इहैवानःशरीरे तु सोम्य ! चत्याद्यपूर्वता

१ अभ्यास—श्रौ “ एतद्वै सत्यकाम !

परं च।परं च यदोकारः” । कहिये “ हे सत्यकाम ! यह निश्चयकरि परब्रह्म श्रौ अपरब्रह्म है । जो ॐकार है ” । ५ । २ । ऐसैं श्रौ

“यत्तच्छ्रुतमजरममृतमभयं परं च , ।

कहिये “जो सो शांत-अजर-अमृत-अभय श्रुत परब्रह्म है । ५ । ७ ऐसैं अभ्यास कहियेहै ॥श्रौ

३ अपूर्वता—इहैवानः शरीरे सोम्य !

स पुरुषो यरिमन्नेताःपोडशकला-प्रभवन्ति कहिये” हे सोम्य ! इसीहीं शरीरके भीतर सो पुरुष है । जिसविषे ये पोडशकला उपजतीयां हैं ” । इस ६ । २ वाक्यसँ शरीरविषे स्थित-काहीं उपदेशविना अनुपलंभ कहिये अप्रीतीतिरूप अपूर्वता सूचन करी ॥ २ ॥

त वेषं पुरुषं वेदेत्यादितः फलमुच्यते ।
तदच्छ्रायमदेहं चेत्पादिभिः कथिता स्तुतिः

४ फलः—श्री “तं वेषं पुरुषं वेद यथा ।
सा चो मृत्युपरि व्यथा इति’ । कहिये
‘ तिम्र वेशपुरुषकू जैमाहे तैसा जानता । तुमकू
मृत्युकी पीडा मनि होह ” । वेद ६ । ६ इत्यादि
वाक्यन फल कहियेहें ॥ श्री ॥

५ अर्थवाद—“ तदच्छ्रायमशरीरमलो-
त्थित शुभ्रमक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य । स
सर्वज्ञ सर्वो भवति ’ । कहिये” हे सोम्य !
जा फाडर तिम्र अमानरहित अशरीर—अलो-
त्थित शुभ्र अक्षरकू जानताहें । गा सर्वज्ञ अरु
सर्व हावड इत्यादि ४ । १० वाक्यनकरि
अर्थवादरूप स्तुति कटीहें ॥ ३ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३२५

दीसमुद्रदृष्टानादुपपत्तिः प्रदर्शिता ।

इतः प्रश्नोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥४॥

६ उपपत्तिः—श्री 'स यथेमा नद्यः'

कहिये "सो जैसें ये नदीयां" इस । ६ । ५.

आदिक ६ । ६ । वाक्यगत दृष्टान्तै परमात्मतै
पोडशकलाश्रीकी उत्पत्ति अरु विनाशके उपन्यास
सतै उपपत्ति दिखाई ॥ इन लिंगोक्ति प्रश्नोप-
निषद्का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार
करिये है ॥ ४ ॥

इति श्री० प्रश्नोपनिषद्विल्लङ्ग० पंचमं प्र० समाप्तम् ॥५॥

अथ मुंडकोपनिषद्विल्लङ्गकीर्त्तनम् ॥६॥

अथ परेत्युपक्रम्य यो ह वै परमं च तत् ।

ब्रह्म वेदेत्यादिवाक्यादुपसंहार ईरितः ॥१॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) 'अथ परा
यया तदक्षरमधिगम्यते यत्तददृश्यं ? ।

कहिये "अथ पराविद्या कहिये है:-जिसकरि सो
 अक्षर जानिये है जो सो अदृश्य है" । इत्यादि
 १ । १ । ५—६ वाक्यकरि उपक्रमकरिके ।
 (२) " स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद "
 करिये 'सो जोई निस परम ब्रह्मकू जानना है"
 इत्यादि ३ । २ । ६ वाक्यके उपसहार कहा
 है ॥ १ ॥

आधिः सन्निहितं चेति तदेतदक्षरं त्विति ।
 अभ्यासो गृह्यते नैव चक्षुःपेक्षयाद्यप्युर्धता ॥ १ ॥

२ अभ्यास:-श्री " आधिः सन्निहितं "
 कहिये 'प्रत्यक्ष है अरु समीपमें है" २ । २ । १
 श्री तदेतदक्षरं ब्रह्म' कहिये 'सो यह अक्षर-
 रूप ब्रह्म है" । २ । २ । २ ऐसैं तो अभ्यास
 कहा है ॥ श्री

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिंगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३२७

३ अपूर्वताः—“न चक्षुषा गृह्यते नापि
वाचा । ” कहिये “ न चक्षुकरि ग्रहण कहियेहै
अरु वाक्करि वी नहीं । ” इत्यादिरूप ३
मुंडकके १ खंडके ८ वाक्यकी अर्थरूप अपूर्वता
कहिये प्रमाणांतरकी अविषयता है ॥ २ ॥

भिद्यते हृदयग्रन्थिरित्याद्यात्कलमीरितम् ।
यं यं लोकं च हेत्याद्यैरर्थवादःप्रघोषितः ॥ ३

४ फलः—“ भिद्यते हृदयग्रन्थिः । ” ॥

कहिये तिस परावरके देखे हुये । “हृदयग्रन्थि
भेदकू पावता है ।” इस २ । २ । ८ आदिक
३ । २ । ८—९ वाक्यतँ फल कहा है ॥

५ अर्थावाद - श्री ' यं यं लोकं मनसा
 सविभाति विशुद्धसत्त्व कामयते याश्च
 कामान् । त त लोकं जायते तांश्च कामां-
 स्तस्मादात्मज्ञं ह्यर्थायेद्भूतिकामः' कद्विये
 निर्मल मनवाला जिस जिस लोककूं मनसैं चित-
 यता है श्री जिन भोगनकूं इच्छता है । तिस
 तिस लोककूं श्री तिन भोगनकूं पावता है ।
 तातें विभूलिकी इच्छावाला आत्मशानीकूं पूजन
 करे । " इत्य ३ । १ । १० आदिक पाष्यनसैं
 अर्थावाद कहा है ॥ ३ ॥

सुर्दामाग्नैर्षभत्यादिनोपपत्तिः प्रकाशिता ।
 एतैर्भुङ्क्तात्पर्यमर्हून्नेऽपीकृतं बुधै ॥४॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३२६

६ उपपत्तिः—श्री “ यथा सुदीप्तात्पाव-
काद्विस्फुलिङ्गा सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाऽक्षराद्विविधा सौम्य ! भावाः प्रजा-
यन्ते तत्र चैवापियन्ति” कहिये “जैसेँ प्रज्वलित
अग्नितैँ हजारों हजार सरूप विस्फुलिङ्ग उपजते
हैं। तैसेँ हे सौम्य ! अक्षरतैँ विविध पदार्थ
उपजतेहैं श्री तहांहीं लीन होतेहैं । ” इस
२।१।१। आदिक वाक्यतैँ उपपत्ति प्रकाश
करीहै॥इन लिङ्गोंकरि मुं डकोपनिषद्का अद्वैत-
विषै तात्पर्य पंडितोंनै अङ्गीकार कियाहै ॥४॥
इति श्री० मुं डकोपनिषद्लिङ्ग० पण्डं प्र० समाप्तम् ॥६॥

अथ माहूक्योपनिषद्विलिङ्गकीर्त्तनम् ।

ॐ मित्येतदुपक्रम्यामाद्य इत्युपसंहृतिः
प्रपञ्चोपशमं शान्तमित्याद्यभ्यास ईरितः ॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) ‘ॐमित्ये
तदक्षरमिदं सर्वं’ कहिये “यद्द सर्वं ‘ॐ
येमा यद्द अक्षर है ।” इस १ वाक्यसे उपक्रम
करिके । ‘अमात्रश्चतुर्थो’ । कहिये “अमा
त्ररूप चतुर्थपाद है ।” इत्यादिरूप १२ वाक्यसे
उपसंहार है । श्री

२ अभ्यास—“ प्रपञ्चोपशमं शान्तं ।
कहिये “निष्पन्न अरु शान्त है” । १२ इत्यादि
अभ्यास कदा है ॥ १ ॥

अदृष्टमाद्यपूर्वत्वं संविशत्पात्मना फलम्
अर्थांतरकलांतिस्तु त्दर्भवांदो विदां मते ॥२

३ अपूर्वता—श्री “ अदृष्टमव्यवहार्यं ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ ३३?

कहिये “ अदृष्ट है अरु अव्यवहार्य है ” । ७
इत्यादि प्रमाणांतरकी अविषयतारूप अपूर्वता
है ॥ औ

४ फलः—“संविशत्यात्मनात्मानं य एवं
वेद” । कहिये “आत्माकूँ जो ऐसैं जानताहै सो
आत्माके साथि प्रवेश करताहै” । इस १२
वाक्यकरि फल कहाहै ॥ औ

५ अर्थवादः—“आप्नोति ह वै सर्वान्
कामान्” । कहिये ‘सर्व कामोंकूँ पावताहै’ ।
इस ६ आदिक १० वाक्यनसैं जो अवांतर-
फलकी उक्ति है । सो तो विद्वानोंके मतविषै
प्रसिद्ध अर्थवाद है ॥ २ ॥

अद्वैते च प्रवेशायोपपत्तिः; पादकल्पना ।
मांडूक्योपनिषद्भाव एवैरिच्यतेऽद्वये ३

६ उपपत्तिः—औ अद्वैत ब्रह्मविषै प्रवेश
अर्थ १—१२ वें वाक्यपर्यंत जो ४ पादकी

कल्पना है । सो उपपत्ति कहिये युक्ति है ॥ इन
 लिंगोंकरिहीं माहूकशोपनिषद्का भाग कहिये
 तात्पर्य अहं तब्रह्मधिपै अगीकार करियेहै ॥३॥
 इति धो० माहूकशोपनिषद्लिंग०सप्तम०प्र०समाप्तम्॥

अथ तैत्तिरीयोपनिषद्लिंगकीर्तनम् । ८ ।

ब्रह्मविदित्युपक्रम्य यश्चायं तूपसंहृतिः ।
 तस्माद्वा इत्ययोवाक्यं यदा ह्येवेति चापरम् ?

र्थापाऽस्मादित्यथोऽभासो यतो वाचो-
 त्वपूर्वता ।

सोऽश्नुते ब्रह्मणा कामान् सहत्यादि फलं
 श्रुतम् ॥ २ ॥

१ उपक्रमउपसंहारः— (१) " ब्रह्मवि-
 दामोनि पर" कहिये ब्रह्मवित् परब्रह्मकू-
 पावताहै ' । २ । १ ऐसैं उपक्रम करिके ।

कला] ॥ ध्रोश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३३३

(२) 'स यश्चायं पुरुषे । यश्चासावादित्योस
एकः' । कहिये " सो जो यह पुरुषविषै है श्री
जो यह आदित्यविषै है । सो एक है" । इत्यादि
रूप इस २ । ८ वाक्यकरि उपसंहार है । श्री

२ अभ्यासः—“ तस्माद्वा एतस्मादा-
त्मन आकाशः संभूतः” । कहिये “तिस इस
आत्मतैं आकाश उपज्या” । २ । १ ऐसैं श्री
‘यदा ह्यवैष एतस्मिन्नदृशयेऽनन्त्येऽनि-
रुक्तेऽनिलयने” कहिये “ जवहीं यह इस
अदृश्य-अशरीर-अवाच्य-अनाधारविषै” । यह
२ । ७ अपर वाक्य है ॥ १ ॥

श्री “भीषास्माद्वातः पचते” । कहिये इस
परमात्मासैं भयकरि वायु चहता है ” । २ । ८
ऐसैं अभ्यास है ॥ श्री

३ अपूर्वताः "यतो वाचो निवर्त्तते
 अप्राप्य मनसा सह" । कहिये "मनसहित
 वाणीया अप्राप्त होयके जिसतैं निवर्त्त होवैहैं" ।
 इस २। ४ वाक्यसैं मनवाणीकरि उपलक्षित
 सकलप्रमाणाकी अगोचरत्तारूप अपूर्वता कही ॥

४ फल - श्री "सोऽश्नुते सर्वान् कामान्
 सह धूम्रणा विपरिचता" । कहिये "सो ज्ञानी
 ज्ञानरूप ब्रह्मके साथि एक हुया सर्व कामोंक
 भागताह । २। ५ इत्यादि २ धल्लीके ७ वें
 अनुवाक्य फल कहाहै ॥ २ ॥

अर्थवादोऽन्तर कुर्यादुदर भेदनिदनम् ।
 गायन्नास्ते हि सामैतदित्यादिर्बिन्दुपःस्तुतिः

५ अर्थवाद.- 'यदुदरमन्तर कुरुते । अथ
 तस्य भय भवति" । कहिये "जो यत् किंचित्
 भय कानाहै । अनन्तर ताक भय होवैहैं" ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३३५

३।७ पेसैं भेदज्ञानकी निंदा है औ “ गाय-
न्नास्ते हि तत्साम० अहमन्नमहमन्नमह-
मन्नम्। हमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः”।

कहिये “ विद्वान् इस सामकूं गायन करताहुया
स्थित होवै है:-मैं [सर्व] भोग्य हूं। मैं भोग्य
हूं। मैं भोग्य हूं। मैं। [सर्व] भोक्ता हूं। मैं
भोक्ता हूं। मैं भोक्ता हूं ”। इत्यादि ३।१०
विद्वान्की स्तुति है। सो अर्थवाद है ॥ ३ ॥

भूतानि जायंते तत्सृष्ट्यादितोऽतिमम्
तैत्तिरीयश्रुयते भाव एवैरिष्यतेऽद्वये ॥४॥

६ उपपत्ति:-औ “ यतो वा इमानि
भूतानि जायंते”। कहिये “ जिसतैं ये भूत
उपजतेहैं”। ३।१ औ “ तत्सृष्ट्या तदेवानु-
प्राविशत् ” कहिये “ ताकूं सृजिके ताहीके
प्रतिप्रवेश करताभया”। २।६ इत्यादि कार्य-

३ अपूर्वताः "यतो वाचो निघर्त्तते
अप्राप्य मनसा सह" । कहिये "मनसहित
वाणीया अशक्त होयके जिसर्त्त निघर्त्त होवैहै" ।
इम २ । ४ वाक्यसँ मनवाणीकरि उपलक्षित
सरुलप्रमाणोंकी अगोचरत्तारूप अपूर्वता कही ॥

४ फलः—श्रौ "सोऽश्नुते सर्वान् कामान्
सह यूत्सुणा विपरिचिता" । कहिये "सो वानी
वानरूप ब्रह्मके साथि एक हुया मर्व कामोंके
भागताहै । २ । १ इत्यादि २ वल्लीके ७ वें
अनुवाकर्म फल कहाहै ॥ २ ॥

अर्धवादोऽन्तर कृपादुदरं भेदनिदनम् ।

गायन्नास्ते हि सामैतदित्यादिर्बिदुषःस्तुतिः

५ अर्धवादः— 'यदुदरंन्तर कृष्णे । अथ

नस्य भय भयति" । कहिये "जो यत् किचित्

नस्य कानाहै । अन्तर माह भय होवैहै" ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३३५

२।७ ऐसे भेदज्ञानकी निद्रा है औ “ गाय-
न्नास्ते हि तत्साम० अहमन्नमहमन्नमह-
मन्नम्। हमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः”।

कहिये “ विद्वान् इस सामकूँ गायन करताहुया
स्थित होवै है:-मैं [सर्व] भोग्य हूँ। मैं भोग्य
हूँ। मैं भोग्य हूँ। मैं। [सर्व] भोक्ता हूँ। मैं
भोक्ता हूँ। मैं भोक्ता हूँ ”। इत्यादि ३।१०
विद्वान्की स्तुति है। सो अर्थवाद है ॥ ३ ॥

भूतानि जायते तत्सृष्टेत्यादितोऽतिप्रम-
तैत्तिरीयश्रुयते भाव एवेमैरिष्यतेऽद्वये ॥४॥

६ उपपत्तिः-औ “ यतो वा इमानि
भूतानि जायते”। कहिये “ जिसतैं ये भूत
उपजतेहैं”। ३।१ औ “ तत्सृष्ट्या तदेवानु-

प्राविशत् ” कहिये “ ताकूँ सृजिके ताहीके
प्रतिप्रवेश करताभया”। २।६ इत्यादि कार्य-

कारणके अभेदके बोधक सृष्टिः वाक्यतै श्री ।
 प्रवेष्टा प्रविष्ट अरु प्रवेश्यके अभेदके बोधक
 प्रवेशवाक्यतै अतका उपपत्तिरूप लिंग कहा है ।
 इन लिंगोंकरिहीं तैत्तिरीयोपनिषद्का भाव कहिये
 तात्पर्य अहै तथिवै श्रंगीकार करिये है ॥४॥

इति श्री० तैत्तिरीयोपनिषद्लिंग० नामाष्टम

प्रकरण समाप्तम् ॥ ८ ॥

अथेतरेयोपनिषद्लिंगकीर्त्तनम् ॥ ९ ॥

आत्मा वा इत्युपक्रम्योपसंहारस्तु चांतिमे
 प्रज्ञानं सूत्र्य वाक्येन महतांस्तो हि धीधनैः*

* उपक्रम उपसंहार—[१] आत्मा

वा इदमेक एवाग्र आसीत् " कहिये " यह
 आगे आमादा होता भया " १ । १ । १

वसै उपक्रम करिये । (२) " प्रज्ञानं सूत्र्य "

कला] ॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३३७

कहिये “ प्रज्ञान जो जीव सो ब्रह्म है ” । इस
अंतके ३ अध्यायविषै स्थित ५ खण्डके ३
ऋक्गत महावाक्यकरि बुद्धिमानोंने प्रसिद्ध
उपसंहार कहाहै ॥ १ ॥

स इमानसृजल्लोकान्स ईक्षत सृजा इति ।
तस्मादिदंद्रइत्यादिवाक्यैरभ्यासईरितः २

६ अभ्यासः—औ “ स इमँल्लोकान-
सृजत् ” । कहिये “ सो इन लोकतक सृजता
भया ” । १ । १ । २ औ “ स ईक्षते मे नु
लोका लोकान्नु सृजा इति ” कहिये “ सो
ईक्षण करताभयाः—ये लोक हैं । लोकपालोंक
सृजों ऐसै ” । १ । १ । ३ औ । “ तस्मादि-
दंद्रो नाम ” कहिये “ तार्ते इंद्र नाम है ” ।
१ । ३ । १४ इत्यादि वाक्योंकरि अभ्यास
कहाहै ॥ २ ॥

स जान इत्यपूर्वत्वं प्रजानेष्टं तदित्यपि ।

स गनेनेतिवाक्येन फलं स्पष्टमुदाहरितम् ।

३ अपूर्वताः— श्री "स जाना भूताभ्य-

मिदयेत्तु " कदियं " सो प्रगटदृया भूततदु

स्पष्ट ज्ञानता भया " इत्य १ । ३ । १३ वाक्यस्य

सर्व भूततदा प्रकाशक दोषेति तिनकी अयिण-

यनास्य किय - सर्वं तः प्रज्ञानेष्टं " कदियं

स्यतमात् स्वप्रकाश सैतन्वरूप तिसोदकपालार्त्

इत्य अ वाचक ४ तगदुकं ३ वाक्यस्यं तेषं

स्वप्रकाशभास्य श्री अपूर्वता कदीर्त् १ सो

४ फलं स गनेन प्रज्ञानात्मनाऽस्मा-

द्धाकादु कदियासुदिनन स्य लोका सयो

तामानाऽप्याऽप्युक्तं समभयं समभयं

इत्य म क इत्य ता इत्य उक्तस्यै इत्य

साक न उक्तं पत कदीर्त् उक्तं मातस्य लोकापि

कला] ॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३३६

सर्वकामोंकूं पायके अमृत होताभया । ऐसै
सत्य है” । इस ३ अध्यायके ५ खंडके ४ वाक्य-
करि स्पष्ट फल कहा है ॥ ३ ॥

ता एता देवताः सृष्टास्तथा गर्भे नु सन्निति
स्तुतिर्युक्तिस्तु स इमानित्यारभ्यविदार्यसः
एतं सीमानमित्यादिश्रुतिवाक्यात्प्रकीर्ति-
ता। इमैरुक्तस्तु षड्लिंगैरैतरेयश्रुतौ गतम् ५
तात्पर्यं ज्ञायतेऽद्वैते तन्नित्यैर्वेदपारगैः ।
अथा मुमुक्षुभिः सर्वैरपि विज्ञेयमादरात् ६

५ अर्थवादः—औ “ता एता देवताः
सृष्टाः” कहिये “वे ये उत्पादित देवता स्तुति
करती भई ” । १।२।१ औ “ गर्भे नु सन्नन्वे-
षामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा” ।
कहिये “माताके गर्भस्थानविपैहीं हुया मैं इन
देवनके सर्वजन्मोंकूं ” जानता हूं ” । २।४।५ ऐसै
अद्वैत परमात्माकी स्तुतिरूप अर्थवाद कहाहै ॥ औ

३ उपपत्ति - "स इमाँह्लोकानसृजत्" कहिये 'सो इन लोकनकू सृजताभया" । १ । १ । २ इहार्से आरम्भ करिके ॥ ४ ॥ स एतमेव सीमान विदारयैतया द्वारा प्रापद्यत ' । कहिये "सो इसीद्वी मस्तकगत स्वामाक् विदारण करिके इस द्वारकरि शरीरविषै प्राप्त होना भया । इत्यादि १ । ३ । १२ घाक्यत अतिर्न युक्ति कहिये उपपत्ति कही है । उक्त इन पदलिङ्गोंसे ता वेतरेयउपनिषद्विषै स्थित २ ॥

अद्वैतविषै ना तापर्यर्है । सो वेदके परस् प्राप्त भय कहिय धाप्रिय औ निसविषै निष्ठा पाल कहिये ब्रह्मनिष्ठनकरि जानियहे ॥ तैसें सर्व मुमुक्षुनकरि घी आपूर्णमें जाननक योग्य है ॥ ६ ॥

इति श्री वेतरेयोपनिषद्विब्रमः सप्तमं

सकण्ठं समाप्तम् ॥ ६ ॥

अथ श्रीछांदोग्योपनिषद्विंश- कीर्त्तनम् ॥ १० ॥

तत्र षष्ठाध्याय-विंशकीर्त्तनम् ॥ ६ ॥
सदेवेत्युपक्रम्यैवैतदात्म्यमिदमित्यतः ।
उपसंहृतिरभ्यासो नवकृत्व उदीरितः । १ ॥
तत्रवमसीतिवाक्यस्यावर्त्तनाद्बुद्धिमत्तमैः
अत्रैव साम्यसन्नेत्यपूर्वतोक्ता हि पंडितैः २

१ उपक्रमउपसंहारः—“ सदेव सोम्ये-
दमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं” । कहिये “हे
सोम्य ! सृष्टितैँ पूर्व एकहीं अद्वितीय सत् हीँ
होता भया ” । ६ । २ । १ ऐसैँ उपक्रम करिके
“एतदात्म्यमिदं सर्वं ” कहिये यह सर्व इस

सत् रूप आत्मभाववाला है ” । ऐसों इस १
अध्यायके १६ खंडके ३ वाक्यतैं उपसंहार
कहा है ॥

२ अभ्यास -नवधार कहा है ॥ “ तस्य-
मसि ’ कहिये “ सो तू है ” । इस ६ । ८ ।
१६ वाक्यके आधर्तनतैं पंडितोंनै कहा है ॥

३ अपूर्वता -ओ “ अत्र वाच किल
सत्सोम्य ! न निभालयसे ऽर्च्य किलोति’
कहिये ऐसैं हे सोम्य ! इस शरीरविषै आचा
र्यक उपदेशतैं विना सत् रूप ब्रह्म विद्यमान है
ताकू इद्रियनसैं नहा जानताहै । इहाहीं विद्य
मान सत्कू गुरुउपदेशरूप अन्य उपायसैं जान’
६ । १३ । २ ऐसैं पंडितोंनै गुरुउपदेशसैं
विना प्रमाणा-नरकी अविषयत्तारूप प्रमिद्ध
अपवना कहाहै ॥ १-२ ॥

तावदेव चिरं तस्येत्यादिवाक्यात्फलं स्मृतम्
तमादेशमुनाप्राक्ष्य इत्यादेः स्तुतिरीरिता ॥३॥

४ फलः-आचार्यवान् पुरुषो वेद ।
तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्षयेऽथ
संपत्स्ये” कहिये “आचार्यवान् पुरुष जानताहै।
तिस बानीकू तहांलगिहीं विदेहमोक्षविषै विलंब
है । जहांलगि प्रारब्धके क्षयकरि देहका अंत
भया नहीं । अनंतर सत् रूप ब्रह्मकू पावनाहै” ।
इत्यादि ६ । १४ । २ वाक्यतँ फल कहाहै ॥

५ अर्थवादः-श्रौ “उत तमादेशमप्राक्ष्यो
पेनाश्रुतः श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं
विज्ञातं ” कहिये “ हे श्वेतकेतो ! तिस आदे-
शकू वी आचार्यके प्रति तू पृच्छताभया है ।

जिसकरि नहीं सुन्या सुन्या होवैहै । नहीं मनन
 किया मनन किया होवैहै । नहीं जान्या जान्या
 होवैहै । ” इत्यादि ६ । १ । १ वाक्यतैं अर्थ
 वादरूप अर्द्ध तके ज्ञानकी स्तुति कही है ॥ ३ ॥

उपपत्तियेथा सोम्यैकेनेत्यादिनिदर्शनम् ।
 तनैश्छांशोग्यतात्पर्यं षष्ठम लिप्यतेऽद्वये ४

३ उपपत्ति - श्री “ यथा सोम्यैकेन
 मृत्पिण्डेन सर्वं मृ-मयं विजातः स्यात् ”
 कहिय हे सोम्य । जैसे एक मृत्तिकाके पिण्ड
 परि सब घटादि कार्य मृत्तिकासय जान्या जायै
 हैं । इत्यादि ६ । १ । १-३ वाक्यगत
 दृग्गत रूप उपपत्ति है ॥ इन लिगोंकरि षष्ठ अध्या-
 यगत छांदाग्य उपनिषद्का तात्पर्य अर्द्ध तद्विधे,
 अर्द्धाकार कहियहै ॥ ४ ॥

अथ सप्तमाध्यायलिंगकीर्तनम् ॥७॥

शोकं तरति तद्वेत्ते-त्युपक्रमघोपसंहृतिः ।

तस्य ह वेति वाक्येन तदैक्यमनुभूयताम्

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) “ तरति

शोकमात्मवित् ” । कहिये “ आत्मज्ञानी

शोककं तरताहै ” । ७ । १ । ३ ऐसेँ उपक्रम

करिके । (२) “ तस्य ह वा एतस्यैवं पश्यत

एवं मन्वानस्यैवं विजानत आत्मतः प्राण

आत्मत आशा ” । कहिये “ तिस इस ऐसेँ

देखनेवालेके औ ऐसेँ मनन करनेवालेके औ ऐसेँ

जाननेवालेके आत्मातैँ प्राण औ आत्मातैँ आशा

होवै है ” । इस ७ अध्यायके २६ खंडके

१ वाक्यकरि उपसंहार कहा है । तिन दोनूँकी

एकता अनुभव करना ॥ ५ ॥

अधस्ताच्च स एव स्यात्तथाऽधातस्त्वहंकृते-
 आदेशश्च स्मृतोऽभ्यासोऽधात आत्मोपदेश-
 युक्त ॥ ६ ॥

२ अभ्यास—श्री 'स एवाधस्तात्
 उपरिष्ठात्' कहिये 'सोई नीचे है । सो उपरि
 है' । तैसेँ 'अधातोऽहंकारादेश एवाह-
 मधस्तादहमुपरिष्ठात्' कहिये "अब अहं-
 कारका उपदेश ही है किः—मैं नीचे हूँ । मैं
 उपरि हूँ" । तैसेँ 'अधात आत्मादेश एवा-
 त्मैवाधस्तादात्मोपरिष्ठात्' कहिये "अब
 आत्माका उपदेश है किः—आत्माहो नीचे है ।
 आत्मा उपरि है" इस आत्माके उपदेशकरि
 युक्त । उक्त ७ अध्यायके २५ पङ्के १-३।
 याक्यनकरि अभ्यास कहाई ॥ ६ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६। ३४७

दृग्गादिसर्वविद्यानामगोचरतयाऽऽत्मनः ।

अपूर्वता फलं पश्यो नैव मृत्युं हि पश्यति ७

३ अपूर्वताः-श्रौ 'स होवाचर्षेदं
भगवोऽध्येमि' कहिये 'नारद सनत्कुमारकृ'
कहै हैं:-हे भगवन् ! ऋग्वेदकृं पढ्या हूं'
इत्यादि ७ । १ । २-३ वाक्यकरि आत्माकी
ऋग्वेदआदि सर्व विद्याओंकी अगोचरता करि
गुरुउपदेशकरि वेद्यतारूप अपूर्वता की है ॥

४ फलः-श्रौ 'न पश्यो मृत्युं पश्यति'
कहिये "ज्ञानी मृत्युकुं देखता नहीं" । इत्यादि
७ । २६ । २ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ ७ ॥

पश्यः पश्यति सर्वं हीत्पर्यथादः सुसूचितः ।
जाता वा आत्मतः प्राणादयो युक्तिः प्रद-
शिता ॥ ८ ॥

५ अर्थवादः-श्रौ 'सर्वं ह पश्यः

पश्यन्ति । सर्वमाप्नोति सर्वं ' कश्चि-
 " शानी सर्वकू देखताहैं । सर्व तर्फसें सर्वकू
 पावताहैं " । ७ । २६ । २ ऐसें अर्थवाद सूचन
 कियाहै ॥ श्री

६ उपपत्ति - ' आत्मत प्राण आत्मत
 आशा ' कहिये आत्मतै प्राण । आत्मतै
 आशा ' । इत्यादि ७ । २६ । १ वाक्य करि
 हनु आत्मैकताबाधक युक्ति कहिये उपपत्ति
 दिवार्ह ॥ ८ ॥

छांशागपश्रुनितात्पर्यं सप्तमाध्यायगं बुधः ।
 दृष्टयने चाद्वये भूम्नि पृष्ठभिलिङ्गैरिमं स्फुटम

पडितौने इन पदु लिगोकरि सप्तमाध्यायगत
 छांशाग्य उपनिषद्का तात्पर्य । अद्वैत ब्रह्मविदे
 स्पष्ट अङ्गीकार करियरै ॥ ६ ॥

कला] ॥ “श्रीश्रुतिपङ्कलिंगसंग्रहः ॥१६॥ ३४६

अथाष्टमाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ ८ ॥

य आत्मेत्युपक्रम्यैव तं वा एतमुपासते ।
इत्यादिनोपसंहार एव आत्मेतिवाक्यतः १०

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) ‘ य आ-
त्मापहतपाप्मा ’ । कहिये “ जो आत्मा
पापरहित है ” । ८ । ७ । १. ऐसैं उपक्रम
करिके हों । (२) ‘ तं वा एतं देवा आत्मा-
नमुपासते ’ कहिये तिस इस आत्माकूं देव
नेश्रयकरि उपासतेहैं ” । इत्यादि ८।१२।६ रूप
वाक्यकरि उपसंहार कहाहै ॥

२ अभ्यासः—‘ एष आत्मेति होवाचै-
तदस्मृतमभयमेतद्ब्रह्मेति ’ । कहिये “ यह
आत्मा । यह अस्मृत अभय । यह ब्रह्म है ।
ऐसैं कहताभया ” इस ८ अध्यायके १० खंडके
१ वाक्यतैं अभ्यास कहाहै ॥ १० ॥

अभ्यासोऽपूर्वता ब्रह्मचर्येणेत्यादित. फलम्
पुनराद्यर्त्तते नैव स इत्यादिरचेरितम् ॥११॥

३ अपूर्वता:- 'तद्य एवैतं ब्रह्मलोकं
ब्रह्मचर्येणानुविंशति तेषामेवैष ब्रह्मलोकः'
कहिये "नाते" जेई इस ब्रह्मरूप लोककूं ब्रह्मचर्य्य
करि शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशके पीछे प्राप्त
करतेहैं। तिनहींहू यह ब्रह्मरूप लोक प्राप्त
होवेहै। इन = १४।३ आदिक वाक्यनते
अपूर्वता ध्वनिन करीहै ॥

४ फल.- 'ब्रह्मलोकमभिसंपश्यते । न
न पुनरद्यर्त्तते' कहिये ' ब्रह्मरूप लोककूं
पायनाई औ पुनराद्युत्तिहूं पायता नहीं" इत्यादि
= १५।१ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ ११ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३५१

आख्यायिकाअर्थवादः स्यादिन्द्रस्यासुरस्वामिनः
अशरीरो वायुरभ्रमित्यादिर्युक्तिरोरिता १२

५ अर्थवादः—इन्द्र अरु विरोचनकी आ-
ख्यायिका अर्थवाद होवैहै ॥

६ उपपत्तिः—‘अशरीरो वायुरभ्रं
विद्युत्स्तनयित्पुरशरीराण्येतानि’ कहिये
“वायु अशरीर है । मेघ बीजली मेघगर्जन ये
अशरीर हैं” । इत्यादि ॥१२॥२ अभेदक युक्तिरूप
उपपत्ति कहीहै ॥ १२ ॥

छांदोग्यश्रुतितात्पर्यमष्टमाध्यायगं त्विमैः।
इष्यतेऽद्वय एवास्मिन्ब्रह्मण्येतत्प्रदर्शितम् ॥

इन लिंगोंकरि तो अष्टमाध्यायगत छांदोग्य-
उपनिषद्का तात्पर्य । इस अद्वैतब्रह्मविषैहो
अङ्गीकार करिये है । यह दिखाया ॥ १३ ॥

इति श्री० छांदोग्यां उपनिषत्सिंहग० दशमं
प्रकरणं समाप्तम् ॥ १० ॥

— — — — —

अथ श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्लिंग कावर्त्तनम् ॥११॥

तत्र प्रथमाध्यायल्लिंगकीर्त्तनम् ॥१॥

आत्मेत्येवेत्यादिवाक्यादुपक्रमोपसंहृतिः
लोकमात्मानमेवोपासीतत्यादिसमीरणात्

(१ उपक्रम उपसहारः— ?) “आत्मे-
त्येवोपासीत ॥” कहिये “आत्मा ऐसैहो
जानना” । इत्यादि १ । ४ । ७ रूप वाक्यते
उपक्रम करिके । (२) ‘आत्मानमेव लोक-
मुपासीत’ । कहिये ‘आत्मारूपहो लोकक
जानना’ । इत्यादि १ अध्यायके ४ ब्राह्मणके
१४ वें वाक्यते उपसहार कहाई ॥१॥

तदेतत्पदनीय च तदेनत्प्रेय इत्यपि । वाक्य-
मारभ्य सप्रोक्ताऽभ्यासस्तस्य परात्मनः ?

१ अभ्यासः— श्री ‘तदेनत्पदनीयस्य
सर्वस्य यद्यमात्मा’ कहिये “सो यह प्राण

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगोसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३५३

करनेकं योग्य है । जो यह इस सर्वका आत्मा है ” । १ । ४ । ७ ऐसे औ “ तदेतत्प्रेयः पुत्रात्प्रेयो वित्तात् ” । कहिये 'सो यह पुत्रतै प्रिय है । वित्ततै प्रिय है' । इसी १ । ४ । ८ वी वाक्यकं आरम्भकरिके । आगे (१ । ४) १० विषे) दोवार 'अहं ब्रह्मास्मि' । इस महावाक्यके कथनपर्यंत तिस परमात्माका अभ्यास कहाहै ॥ २ ॥

तदाहुर्यदिनाराया अपूर्वत्वं समिङ्गितम् ।
य एव वेद वाक्येन सर्वात्मत्वं फलं स्मृतम् ३
३ अपूर्वताः—'तदाहुर्यद्ब्रह्मविद्यया सर्वं भविष्यन्तो मनुष्या मन्यन्ते' । कहिये "सो कहतेहैं:-जो ब्रह्मविद्याकरि सर्वरूप होने-वाले मनुष्य मानतेहैं" । इस १ । ४ । ६ उक्ति कहिये वाक्यतै प्रमाणांतरकी अविषय जीवनकी सर्वात्मतारूप अपूर्वता अभिप्रेत है ॥

४ फलः—“ य एव वेदाहं ब्रह्मास्मीति
स इदं सर्वं भवति” । कहिये “जो ऐसे अहं
ब्रह्मास्मि इस प्रकारसे जानताहै । सो यह
सर्व होवेहै ” । इस १ । ४ । १० वाक्यकरि
जानसें सर्वात्मभावरूप फल कहाहै ॥ ३ ॥

तस्याभूत्यै हि देवाश्च नेशते हतिवाक्यतः
अथैवाशो द्विरूपो वै प्रोक्तः श्रुत्यास्फुशक्ति

५ अर्थवाद. —“ तस्य ह न देवाश्च
नाभूत्या ईशाने ” कहिये “निस ब्रह्मजिज्ञासुकें
ब्रह्मसर्वभावके न होने अर्थ देव भी समर्थ होते
नहीं । नय अन्य न द्वार्य यामै क्या कहाता ” ।
इत्यादिरूप इस १ । ४ । १० वाक्यके अमेद-
घानका स्तुति थी भेदघानकी निन्दा । इन दो-
रूपनयाला अर्थवाद श्रुतिनै स्पष्ट उक्तिनै
कहाहै ॥ ४ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३५५

उपपत्तिःस एषो हीहेतिवाक्यात्स्मृता त्विमैः
बृहदारण्यकाद्यस्याद्वैते तात्पर्यमिष्यते॥५॥

६ उपपत्तिः—“ स एष इह प्रविष्ट
आनखाग्रेश्वरः ” । कहिये “ सो परमात्मा
नखाग्रपर्यंत इस देहविषै प्रविष्ट भयाहै” । इत्यादि-
रूप इस १ । ४ । ७ वाक्यतै उपपत्ति कही है ॥
इन लिंगोंसँ बृहदारण्यकउपनिषद्के प्रथमाध्याय
का अद्वैतविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥५॥

अथ द्वितीयाध्यायलिंगवर्तिनम् ॥२॥

ब्रह्म तेऽहं ब्रूवाणीति सामान्योपक्रमःस्मृतः
व्येव त्वा ज्ञपयिष्यामि विशेषोपक्रमस्त्वयम्
य एषः पुरुषो विज्ञानमयस्तूपसंहृतिः ।

सामान्यतो विशेषेण तदेतत् ब्रह्म चेत्यपि७

१ उपक्रमउपसंहारः (१) “ ब्रह्म

नेऽहं घृणाणीति " कहिये " ब्रह्म तेरेताई
कहताहूँ " । २ । १ । १ । यह सामान्यउपक्रम

है श्री " न्येव तथा ज्ञपयिष्यामि " । कहिये

" ब्रह्म तेरेताई जनायु गार्ह्यं " । २ । ३ । १५

यह तो विशेष उपक्रम है ॥ ६ ॥ (२) श्री

"य तपः पुरुषो विज्ञानमयः" । कहिये "जो

यह पुरुष विज्ञानमय है " । २ । १ । १६ यह

ता सामान्यने उपसहार है श्री "तदेतद्ब्रह्मात्मा-

पूर्वमनपर' कहिये " तो यह ब्रह्मकारणरहित

अन फार्दरहित है " । २ । ५ । १६ यह

विशेषकर उपसहार है ॥ ७ ॥

सत्यं सत्यस्य चाभान आदेशो नेति नेति चा
स पात्यमिति चाभ्यासो बहुभूत उदीरितः-

२ अभ्यासः— " सत्यस्य सत्यं " ।

कहिये सत्यका सत्य है " । २ । १ । २० + २ ।

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३५७

३।६ औ “ अथात आदेशो नेति नेति ” ।
कहिये “ यातँ अत्र ' नेति नेति ' ऐसा आदेश
है ” । २।२।६ औ “ स योऽयमात्मेद-
ममृतामिदं ब्रह्मैदं सर्वम् ” कहिये “ सो जो
यह आत्मा है । यह अमृत है । यह ब्रह्म है ।
यह सर्व है ” । २।५।१-१५ ऐसैं बहु-
करिके अभ्यास कहाहै ॥ ८ ॥

विज्ञातारमरे ! केनेत्यादिनाऽपूर्वता मता ।
यत्र वास्य ह्यभूदात्मैव सर्वं चादितःफलम् ६

३ अपूर्वताः-“ विज्ञातारमरे ! केन
विजानीयात् ” कहिये “ अरे ! मैंत्रेयि ! विज्ञा-
ताकूं किसकरि जानै ” । इत्यादि २।४।१४
वाक्यकरि प्रमाणांतरकी आविषयतारूप अपूर्वता
मानीहै ॥

४ फलः—“यत्र वा अस्य सर्वमात्मैवा-
भूतत्वेन कं जिघ्रेत् ” । कहिये “जहाँ (जिस
मोक्षविषय) इन विद्वानको सर्व आत्माही होता-
भया । तहाँ किन्करि किसको सूँघे” । इत्यादि
० अध्यायके ४ ब्राह्मणके १४ वाक्यतँ निष्प्र-
प प्रबलरूपसँ अयस्थितिरूप अद्वैतज्ञानका फल
कहाई ॥ ६ ॥

परादाद्ब्रह्म ते नैवाख्यायिका बहवोऽपि च।
अर्थवादस्वरूप गतिरूर्णनाभ्यायनेकशः । १० ॥

५ अर्थवादः—“ ब्रह्म त परादायोऽ-
न्यत्रात्मनो ब्रह्म वेद” । कहिये ‘ ब्राह्मणजाति
ताको निरस्कार करैहै जा आत्मार्त अन्य ब्राह्मण
जातिकु जाननाई ’ । ० । ४ ६ । ऐसँ भेद-
ज्ञानकी निदा श्री बहून ब्राह्मणिका पी अर्थ-
वाद है १०

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३५६

६ उपपत्तिः— ‘स यथोर्णनाभिस्तनुना-
च्चरेद्यथाऽग्नेः क्षुद्रा त्रिस्फुलिगा व्युच्च-
रन्ति ” कहिये “सो जैसे ऊर्णनाभि तंतुकरि
उच्चगमन करैहै औ जैसे अशितें अल्पअग्निके
अवयव विविध उच्चगमन करैहैं” । इस २ ।
१ । २० आदिक २ । ४ । ६—१२ वाक्यनविषै
अनेकदृष्टान्तरूप उपपत्ति है ॥ १० ॥

बृहदारण्यकस्यैव द्वितीयस्याद्वितीयके ।
तात्पर्यं त्विष्यते प्राज्ञैरेभिर्लिंगैःसमिगितैः॥

बृहदारण्यक उपनिषद्के द्वितीयअध्यायका
पंडितोंकरि इन सूचन किये लिंगोंसे अद्वितीय-
ब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥ ११ ॥

अथ तृतीयाध्यायलिंगकीर्तनम् ॥३॥

यत्साक्षादित्युपक्रम्योपसंहारस्तु वाक्यतः
विज्ञानमित्यतः प्रोक्त आवृत्तिरेव ते रत्नात् ?

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) “ यत्सा-
क्षादपरोक्षाद्ब्रह्म ” कहिये “ जो साक्षात् अप-
रोक्ष ब्रह्म है ” । ३ । ४ । १ । ऐसैं उपक्रमकरिके ।
[२] “ विज्ञानमान इ ब्रह्म ” । कहिये “ विज्ञान
आनरूप ब्रह्म है ” । ऐसैं इस ३ । ६ । २८
वाक्यनै ता उपसंहार कहाहै ॥

२ अभ्यासः—“ एष त आत्मानदर्पा-
म्यमूनः । कहिये “ यह तेरा आत्मा अन्त-
र्यामी अमृतरूप है ” । इस ३ । ७ । ३-२३
वाक्यनै आवृत्तिका मुख्य अभ्यास कहाहै ॥२॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥ १६ ॥ ३६१

तं त्वौपनिषदं चाहं पृच्छामीति त्वपूर्वता ।

फलं परायणं चैतत्तिष्ठमानस्य तद्विदः ॥ १३ ॥

३ अपूर्वता—“ तं त्वौपनिषदं पुरुषं
पृच्छामि ” । कहिये “ तिस उपनिषदनकरि
गम्य पुरुषकूं [मैं याज्ञवल्क्य] तुज [शाक-
ल्यके] ताई पूछताहूँ ” । ३ । ६ । २६ ऐसैं
तो उपनिषदनकीहीं विषयतारूप अपूर्वता
कहीहै ॥

४ फलः—“ परायण तिष्ठमानस्य तद्वि-
दः ” । कहिये “ यह ब्रह्म अद्वैततत्त्वविषै स्थित
तत्त्ववेत्ताका परमगति है ” । ३ । ६ । २८
ऐसैं फल कहाहै ॥ १३ ॥

यो वै तत्काप्यसूत्र त विद्याद्येत्यदितोऽपि
 च । यो वै एतच्च न ज्ञात्वाऽक्षरं मार्गति
 च स्तुति ॥ १४ ॥

५ अर्थवादः--“ यो वै तत्काप्य ।
 सूत्र विद्यात्वं चानर्याभिणमिति स ब्रह्म-
 वित्” कहिये हे काप्य ! जोई तिम सूत्रकू
 थी तिस अतर्यामीकू जानताहै । सो ब्रह्मवित्
 है । यह ३ । ७ । १ यो । श्री यो वा
 एतदक्षरं मार्गविदित्वाऽस्मिँह्योके जुहोति”
 कहिये हे मार्गि ! जोई इस अक्षरकू न जानिके
 इस लाकविधे हामताहै” । इस । ३ । ८ । १०
 आदिक वाक्यत अर्थदधानकी स्तुति श्री चकार-
 कर्त्त भेदधानकी निंदाकूप अर्थवाद कहाहै । १४ ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ २६३

एतस्य वा अक्षरस्येत्यादितो युक्तिरीरिता ।
तदस्थलक्षणस्योपन्यासेन परमात्मनः ॥१५॥

६ उपपत्तिः—“एतस्य वा अक्षरस्य
प्रशासने गार्गि ! सूर्याचंद्रमसौ विधृतौ
तिष्ठतः ” । कहिये “हे गार्गि ! इस अक्षरकी
आज्ञाविषै सूर्यचन्द्र धारण कियेहुये स्थित होवै-
हैं” । इत्यादि ३ । ८ । ९ रूप वाक्यतै
परमात्माके तदस्थलक्षणके उपन्यासकरि उपपत्ति
कहीहै ॥ १५ ॥

बृहदारण्यक श्रुत्यास्तृतीयस्य समिष्यते ।
तात्पर्यमद्वये लिंगैरोभिस्तु परमात्मनि ॥१६॥

बृहदारण्यकोपनिषद्के इस तृतीयअध्यायका ।
इन लिंगोंकरि अद्वयपरमात्माविषै तात्पर्य ।
सम्यक् अंगीकार करियेहै ॥ १६ ॥

अथ चतुर्थाध्यायलिङ्गकीर्त्तनम् ॥ ४ ॥ ५

इंधश्च किमुपक्रम्याभय स उपसंहृतिः ।
सामान्यतो विशेषेण यत्र त्वस्येति धाक्यतः

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) ' इंधो ह
र्वे नाम' । कहिये " इध वेसा प्रसिद्ध नाम
ह" । ४ । ० । २ । वैसे सामान्यतै 'कि-
उपान्तिरय पुरुष इति' । कहिये ' विस
ज्योतिवाला यह पुरुष है' । ४ । ३ । २ वैसे
विशेषकरि उपक्रमकरिके । (२) ' अभयं वै
जनक ! मातोऽसि " । कहिये " हे जनक !
हूँ अभयकू मात भयाहूँ' । ४ । ० । ४ वैसे ।
वा स धा ण्य महानज आत्मा ' । कहिये

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३६५

“सोई यह महान्-अज-आत्मा” । ४ । ४ ।
२५ ऐसै सामान्यतै उपसंहार है औ “यत्र
त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत्” । कहिये “जहाँतो
सर्व आत्माहीं होताभया” इस ४ । ५ । १५
वाक्यतै विशेषकरि उपसंहार है ॥ १७ ॥

तद्देवा ज्योतिषां ज्योतिरायुर्होपासतेऽमृतम्
इत्यादिवहुभिर्वाक्यैरभ्यासः स्पष्टमीक्ष्यते

२ अभ्यासः-तद्देवा ज्योतिषां ज्योति-
रायुर्होपासतेऽमृतम् । कहिये “इस ब्रह्मकूं
देव ज्योतिनका ज्योति आयु अरु अमृतरूप
उपासतेहैं” । ४ । ४ । १६ इत्यादि बहुत-
वाक्यनकरि अभ्यास स्पष्ट देखियेहै ॥ १८ ॥

विज्ञानारमगृह्यो च न तं पर्यत्यपूर्वता ।
अथाकामयमानो य इत्यादिबहुभिः कलम्

३ अपूर्वता - " विज्ञानारमरे ! केन
विजानीयान् " । कहिये ' अर मेत्रेयि ! जिज्ञा-
ताक् किसकरि जानना " । ५ । ५ । १५ औ
" अगृह्यो न हि गृह्यते " । कहिये "जाते
प्रदण करनेरु अयोग्य है । ताते नहीं प्रदण
करियहे । ४ । ४ । २० औ " न तं पर्यति
कश्चन । कहिये "ताक् शास्त्रगुणके उपदेश-
यिना कोईवी नहीं दग्ताहै ' । ४ । ३ । १४
इत्यादि वाक्यकर्म निरुद्ध प्रमाणतरुणी अविषय-
नारूप अपूर्वता है ॥

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ६३७

४ फलः—“अथाकामयमानो यो ” ।
कहिये “ औ जो निष्काम है ” । इत्यादि
४।४। ६-८ बहुतवाक्यनकरि फल कहाहै
॥ १६ ॥

मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति
एत एतमु हैवेत्यादिवाक्याच्च स्तुतिः स्मृता॥

५ अर्थवादः— मृत्योः स मृत्युमा-
प्नोति य इह नानेव पश्यति ’ । कहिये ‘सो
मृत्युकुं पावताहै । जो इहां नानाकी
साईं देखताहै’ । ४ । ४ । १६ ऐसै औ
‘ एतमु हैवते न तरतः ’ । कहिये “ इस
ज्ञानीकुं ये पुण्यपाप तरते नहीं ” । ४ । ४ ।
२२-२३ इत्यादि वाक्यतैं अर्थवाटरूप निंदा
अरु स्तुति कहीहै ॥ २० ॥

यद्वै तन्नैति प्राणस्य प्राणं चैव न वा अरे ।।

पत्युः कामाय नैवायं पतिर्हि भवति प्रियः

इत्यादिवाक्यजातेभोपपत्तिः परिकीर्तिता।

घृहदारण्यकश्रुत्यारचतुर्थाध्यायगतं युष्माः ॥

तात्पर्यमद्वये षड्भिरेवमे लिंगकैर्विदुः ।

अग्नेधूम इवैमानि लिंगान्यस्य परात्मनः ॥

६ उपपत्तिः—‘ यद्वै तन्न परयति ’ ।

कहिये “ जहाँ सुपुत्रिविषी तिमरूपकं नहाँ देयनाहै ” । ४ । ३ । २३-२० वेसँ । श्री

“ प्राणस्य प्राणमुत्त ” कहिये “ प्राणके यी प्राणकू जानतेहँ ” ४ । ४ । १= देसँ । श्री

‘न वा अरे ! पत्युः कामाय पतिः प्रियो

भरत्यात्मनस्तु कामाय पति प्रियो भव-

ति’ । कहिये ‘अरे मीत्रेयि ! पतिके कामअर्थ

कला] ॥ श्रीश्रुतिपङ्क्तिगसंग्रहः ॥१६॥ ३६६

पति प्रिय नहीं होवै है । आत्माके तो काम
अर्थ पति प्रिय होवै' ॥ २१ ॥ इस ४।५।६
आदिक ४।५। ८-१३ वाक्यनके समूहकरि
ब्रह्मरूप आत्माके बोधनकी युक्तिरूप उपपत्ति
कही है ॥ पंडित इस बृहदारण्यकरूप उपनिषद्-
भागके चतुर्थाध्यायगत ॥ २२ ॥ अद्वैतविषै
तात्पर्यकं इन पङ्क्तिगोंसँ जानतै हैं । औ अग्निके
निश्चायक धूमरूप लिंगकी न्यांईं इस प्रत्यक्-
अभिन्न ब्रह्मके निश्चायक ये लिंग हैं । [ऐसँ
जानना] ॥ २३ ॥

इति संक्षेपतः प्रोक्ता पङ्क्तिगानां विचारणा
दशोपनिषदां तद्वृत्तामन्यास्वपि योजयेत् ॥

इसरीतिसँ संक्षेपतँ दशउपनिषदनके पङ्क्तिग-
नका विचार कहा । ताकी न्यांईं ता (विचार)कं
अन्यउपनिषदनविषै वी जोडना ॥ २४ ॥

दोषोऽप्यभ्रोपयुक्तत्वादगुण एवेति कित्यताम्
सारग्रहणशीलैस्तु पितृभ्यां बालवाक्यवत्

इसप्रधिविधे क्वचिन् दोष भी उपयोगी होनेतें
“गुणही है” ऐसै मारग्राही स्वभाववाले क्वचिन
करि विचारनेफ् योग्य है ॥ माता पिताकरि
विनोदयर्थ उपयोगी बालकके फल वाक्यकी
न्याई ॥ २५ ॥

इति श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्ब्रह्मसंहिता नामै-

काश्रमकरण समाप्तम् ॥ २१ ॥

इति श्रीत्रिचारचन्द्रोदये श्रीमत्परमहंसपरि-
भाजकाऽऽचार्ययापुत्रस्यती-पूज्यपाद-
शिष्य-पानाश्वशर्मविदुषा विरचिता
सटीकाश्च निषद्लिंगसप्रहनामिश्र-
षोडशीकलायाः प्रथमधियाग.

समाप्त ।

॥ अथ षोडशकलाद्वितीयविभाग-
प्रारंभः ॥ १६ ॥

॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥

अथवा

॥ लघुवेदान्तकोश ॥

॥ ललितछन्दः ॥

निष्कलं निजं वेदही चंद ।

षट्दश कला ब्रह्ममै नदे ।

निरचयेव जां निष्कलंक सो ।

इकरसं सदा अंगना न सो ॥ ३६ ॥

हिरण्यगर्भं श्री अद्भया नमो ।

पवन तेज क भूमि इन्द्रिभो ।

मन अनाज श्री १८०शक्ति सत्तपो ।

करमलोक १८१नामामनूजपो ॥३७॥

पटदशं कला एहि जानिले ।

जडउपाधिको धर्म मानिले ।

अनुगताश्रयोपुष्पसूत्रवत् ।

निज चिदात्म पीतांबरो हि सन् ॥३८॥

॥ १८० ॥ षड ॥

॥ १८१ ॥ म-पद्म तद ॥

॥ पदार्थ द्विविध ॥ २ ॥

अध्यात्मताप २-आत्माकूं आश्रय करके
वर्तमान जो स्थूलसूक्ष्मशरीर सो अध्यात्म है ।
तद्गत जो ताप (दुःख) सो अध्यात्मताप है ॥

१ आधिनापः-मानसताप ॥

२ व्याधिनापः-शारीरताप ॥

अध्यास २-भ्रंतिज्ञानका विषय औ
भ्रंतिज्ञान ॥

१ अर्थाध्यास-भ्रंतिज्ञानकाविषय जोरुपादि
वा देहादिप्रपंच सो ॥

२ ज्ञानाध्यास-भ्रंतिज्ञान (सर्पादिकका वा
देहादिप्रपंचका ज्ञान) ॥

असम्भावना २—असम्भवका ज्ञान ॥

१ प्रमाणगत असम्भावना—प्रमाण (वेद)
गत असम्भवका ज्ञान ॥

२ प्रमेयगत असम्भावना—प्रमेय (प्रमाणके
विषय मोक्षआदिक) गत असम्भवका ज्ञान ॥

अहंकार २—

१ शुद्धअहंकार—स्वरूपका अहंकार ॥

२ अशुद्धअहंकार—देहादिधर्मात्माका अहं-
कार ॥

१ सामान्यअहंकार—देहादिधर्मके उद्देश
में रहित । कथल " अह (मैं) " ऐसा
स्फुरण ॥

२ विशेषअहंकार—देहादिधर्म (नामजाति-
आदिक) का उद्देश करिक " अह (मैं) "
ऐसा स्फुरण ॥

कला] ॥ वेदांतपदाथेसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३७५

१ मुख्यअहंकारः—देहादियुक्त चिदाभास
औ कूटस्थ (साक्षी) का एकीकरण करिके ।
मूढकरि सारे संघातविषै “अहं” शब्दकूं
जोडिके जो “अहं (मैं)” ऐसा स्फुरण
होवै सो मुख्य (शक्तिवृत्तिसँ जानने
योग्य अहंशब्दके अर्थकूं विषय करनेवाला)
अहंकार है ॥

२ अमुख्यअहंकारः—विवेकीकरि [१] व्य-
वहारकालमें केवल देहादियुक्त चिदाभास-
विषै औ [२] परमार्थदशामें केवलकूटस्थ
विषै “अहं” शब्दकूं जोडिके जो “अहं
(मैं) ऐसा स्फुरण होवैहै सो दोभांतीका
अमुख्य (लक्षणावृत्तिसँ जानने योग्य अहं
शब्दके अर्थकूं विषय करनेवाला) अहं-
कार है ॥

अज्ञान :-

- १ समष्टिअज्ञान—वनकी न्याईं वा जातिकी न्याईं वा जलाशय (तडाग) की न्याईं एक बुद्धिका विषय ॥
 - २ व्यष्टिअज्ञान—वृक्षनकी न्याईं वा व्यक्तिनकी न्याईं वा जलबिंदुकी न्याईं अनेक बुद्धिनका विषय ॥
 - १ मूलाज्ञान—शुद्धचेतनका आच्छादक (दांपने वाला) अज्ञान ॥
 - २ तूलाज्ञान घटादिअप्रच्छिन्नचेतनका आच्छादक अज्ञान ॥
- अज्ञानकी शक्ति २—अज्ञानका सामर्थ्य ॥
- १ आधारशक्ति—अधिष्ठानके दांपनेवाली जा अज्ञानविषै सामर्थ्य है सो ॥
 - २ विक्षेपशक्ति—मपय ओ ताके प्रियकी जनक जो अज्ञानविषै सामर्थ्य है सो ॥

कला । ॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३७७

१. उपासना २—

१ सगुणउपासना—कारणब्रह्म (ईश्वर) औ
कार्यब्रह्म (हिरण्यगर्भश्चादिक) की उपासना ॥

२ निर्गुणउपासना—शुद्धब्रह्मकी उपासना ॥

गन्ध २—१ सुगंध ॥ २ दुर्गंध ॥

जाति २ — अनेकधर्मि (आश्रय) नविदै
अनुगत जो एकधर्म सो ॥

१ परजाति—“ घट है ” ऐसैं सर्वत्रअनुगत
जो सत्ता है । ताकूं न्यायमतमें पर (श्रेष्ठ)
जाति कहतेहैं ॥

२ अपरजाति—सत्ताहैं भन्न घटत्वआदिक
जातिकूं न्यायमतमें अपर (अश्रेष्ठ) जाति
कहतेहैं ॥

१ व्याप्यजाति—व्यापकजातिके अन्तर्गत
(न्यूनदेशवर्ती) जो जाति । सो व्याप्यजाति
है । जैसे मनुष्यजातिके अंतर्गत (एकदेश

गतः) ब्राह्मणस्य क्षत्रियस्य आदिकं जातिषां
है । ये व्याप्यजातिषां है ॥

२- व्यापकजाति-व्याप्यजातिर्लेश-अधिकदेश-
विशेषे स्थित जो जाति सो व्यापकजाति है ।
जैसे ब्राह्मणस्य आदिकव्याप्यजातिर्लेश-अधिक-
देशविशेषे स्थित मनुष्यस्यजाति है सो व्यापक-
जाति है । ये व्याप्य थी व्यापक दो भेद
अपरजातिके है ॥

निग्रह २-

१ क्रमनिग्रह—क्रमनियम आदिकअष्टयोगके
अगोकारि क्रमसँ जो चित्तका निरोध होवै
है । सा क्रमनिग्रह है ॥

२ दृष्टनिग्रह—प्राणनिरोधरूप दृष्टकारिके या
समयात्मादिकमुद्रानके मध्य-किसी एक-
मुद्राक अभ्यासकरि जो चित्तका निरोध
होवै । सा दृष्टनिग्रह है ॥

कला] ॥ वेदांतपंदाथसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३७६

निःश्रेयस २—मोक्ष ॥

१ अनर्थनिवृत्ति ॥ २ परमानन्दप्राप्ति ॥

परमहंससंन्यास २—

१ विविदिषासंन्यास—जिज्ञासाकरिके ज्ञान प्राप्तिअर्थ किया जो संन्यास सो विविदिषासंन्यास है ॥

२—विद्वत्संन्यास—ज्ञानके अनंतर वासनाक्षय मनोमाश औ तत्त्वज्ञानाभ्यासद्वारा जीवन्मुक्ति के विलक्षण आनन्दअर्थ किया जो संन्यास सो विद्वत्संन्यास है ॥

प्रपञ्च २—१ बाह्यप्रपञ्च ॥ २ आंतरप्रपञ्च ।
प्रज्ञा २—१ स्थितप्रज्ञा ॥ २ अस्थितप्रज्ञा ।

लक्षण ०—

१ स्वरूपलक्षण—सदाविद्यमान हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

० तटस्थलक्षण—कदाचित् हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

वाक्य २—१ अतातरवाक्य ॥ ० महावाक्य ॥

वाद २—१ प्रतिविधवाद ॥ ० अत्रच्छेदवाद ॥

विपरीतभाषना २—१ प्रमाणगत विपरीत-
भाषना ॥ प्रमेयगत विपरीतभाषना ॥

शब्द --१ धर्मरूपशब्द ॥ २ ध्वनिरूपशब्द ॥

शब्दसगति २—१ शक्तिवृत्ति ॥ ० लक्षणावृत्ति ।

संपत्ति २—१ द्वीसंपत्ति ॥ २ आसुरीसंपत्ति ॥

सशय ०—१ प्रमाणगतसशय ॥ ० प्रमेयगत
सशय ॥

समाधि २—१ स्वमिक्त ॥ २ निर्दिक्त ॥

सूक्ष्मशरीर २—१ समष्टि ॥ २ व्यष्टि ।

मूलशरीर २—१ स्वमिष्टि ॥ २ व्यष्टि ॥

पदार्थ त्रिविध ॥ ३ ॥

अध्यात्मादि ३—१ इन्द्रिय (अध्यात्म) ॥
२ देवता (अधिदैव) ॥ ३ विषय (अधि-
भूत) ॥

अन्तःकरणदोष ३—

१ मलदोष—जन्मजन्मांतरोंके पाप ॥

२ चित्तेपदोष—चित्तकी चंचलता ॥

३ आवरणदोष—स्वरूपका अज्ञान ॥

अर्थवाद ३—निंदाका वा स्तुतिका बोधक-
वाक्य ॥

१ अनुवाद—अन्यप्रमाणकरि सिद्धअर्थका
बोधकवाक्य । जैसे “ अग्नि हिमका भेषज
है ” यह वाक्य है ॥

२ गुणवाद—अन्यप्रमाणविरुद्ध विधेयअर्थका
गुणद्वारा स्तावकवाक्य । जैसे प्रकाशरूप

लक्षण ०—

१ स्वरूपलक्षण—सदाविद्यमान हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

० तटस्थलक्षण—कदाचित् हुया व्यावर्तक
लक्षण ॥

वाक्य २—१ अन्तर्वाक्य ॥ ० महावाक्य ॥

वाद २—१ प्रतिविधवाद् ॥ २ अयच्छेदवाद् ॥

विपरीतभावना २—१ प्रमाणगत विपरीत-
भावना ॥ प्रमेयगत विपरीतभावना ॥

शब्द --वर्णरूपशब्द ॥ २ ध्वनिरूपशब्द ॥

शब्दसंगति २—१ शक्तिवृत्ति ॥ ० लक्षणावृत्ति ।

संपत्ति २—१ देवीसंपत्ति ॥ ० आसुरीसंपत्ति ॥

सशय ०—१ प्रमाणगतसशय ॥ ० प्रमेयगत
सशय ॥

समाधि २—१ स्वविकल्प ॥ २ निर्विकल्प ॥

सूक्ष्मशरीर २—१ समष्टि ॥ २ व्यष्टि ॥

स्थूलशरीर २—१ समष्टि ॥ २ व्यष्टि ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३८३

आत्माके भेद ३-

१ मिथ्यात्मा—स्थूलसूक्ष्मसंघात ॥

२ गौणात्मा—पुत्र ॥

३ सुख्यात्मा—साक्षी (कूटस्थ) ॥

आनन्द ३-

१ ब्रह्मानन्द—समाधिविषे आविर्भूत या
सुषुप्तिगत जो विवभूत आनन्द है सो ॥

२ विषयानन्द—जाग्रत्स्वप्नविषे विषयकी
प्राप्तिरूप निमित्तसे एकाग्र भये चित्तविषे
आत्मास्वरूपभूत आनन्दका जो क्षणिकप्रति-
विव होवैहै सो ॥ याहीकू' लेशानन्द औ
मात्रानन्द बी कहतेहैं ॥

३ अक्ष

उर सी

है सो ॥

तितैं उत्थान आदिक

० आनन्द अनुभूत होवै-

गुणकी समताकरि स्तावक, "यूप (यहका खम) आदित्य है" यह वाक्य है ॥

३ भूतार्थवाद-स्वार्थविषे प्रमाण हुया सत्तया सँ विधेयार्थकी श्लाघाका बोधकवाक्य! जैसे 'वज्रहस्त पुरंदर' यह वाक्य है ॥

अवधि ३—सीमा (हद) ॥

१ बोधकी अवधि ॥ २ वैराग्यकी अवधि ॥

३ उपरामकी अवधि—चित्तनिरोधरूप उपरति (उपशम) की ॥

अवस्था ३—तीनवेदके व्ययहारके काल ॥

१ ज्ञानअवस्था ॥ २ स्वप्नअवस्था ॥

३ सुषुप्तिअवस्था ॥

आत्मा ३—

१ ज्ञानात्मा—बुद्धि ॥

२ महानात्मा—महत्तत्त्व ॥

३ शान्तात्मा—सुखमय ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३५३

आत्माके भेद ३-

१ मिथ्यात्मा—स्थूलसूक्ष्मसंघात ॥

२ गौणात्मा—पुत्र ॥

३ सुख्यात्मा—साक्षी (कूटस्थ) ॥

आनन्द ३-

१ ब्रह्मानन्द—समाधिविषै आविर्भूत वा सुषुप्तिगत जो विवभूत आनन्द है सो ॥

२ विषयानन्द—जाग्रत्स्वप्नविषै विषयकी प्राप्तिरूप निमित्तसँ एकाग्र भये चित्तविषै आत्मास्वरूपभूत आनन्दका जो दृशिकप्रति-
विब होवैहै सो ॥ याहीकू' लेशानन्द औ मात्रानन्द की कहतेहैं ॥

३ आसनानन्द-सुषुप्तिमें उत्थान आदिक उदासीनदशाविषै जो आनन्द अनुभूत होवै-
है सो ॥

आन्ध्यादि ३—अंधताआदिक नेत्रके धर्म ॥
 इहां आन्ध्य । अंधता) रूप नेत्रके धर्म जो
 है सो बधिरतामूकताआदिक अन्य इन्द्रियनके
 धर्मका वो सूत्रक है । औ मांघ अरु पटुत्व
 तो सर्वइन्द्रियनके तुल्य जानै ॥

१ आन्ध्य—चक्षुकरि सर्वथा स्वविषयका
 अग्रहण ॥

२ मांघ—इन्द्रियकरि स्वविषयका स्वहग्रहणा ॥

३ पटुत्व—इन्द्रियकरि स्वविषयका स्पष्टग्रहणा ॥

उद्देशादि ३ —

१ उद्देश—नामका कीर्तन ।

२ लक्षण—ग्रन्थाधारणधर्म । (एरुविषै वर्तने
 वाला धर्म)

३ परीक्षा—पदरुति (अतिग्यातिआदिक
 दोषनका विचार) ॥

कला] ॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३८५

एषणा ३—इच्छा वा वासना ॥

१ पुत्रैषणा ॥ २ वित्तैषणा ॥

३ लोकैषणा—सर्वलोक मेरी स्तुति करें ।
कोश्वी मेरी निंदा करे नहीं । ऐसी इच्छा
वा परलोककी इच्छा ॥

कारण ३—कर्मके साधन ॥

१ मन ॥ २ वाणी ॥ ३ काय ॥

कर्तव्यादि ३—

१ कर्तव्य—करनैकं योग्य ज्ञानके साधन ॥

२ ज्ञातव्य—जाननैकं योग्य ज्ञानका विषय
(ब्रह्म अरु आत्माका एकत्व) ॥

३ प्राप्तव्य—प्राप्त करनैकं योग्य ज्ञानका फल
मोक्ष ॥

कर्म ३—१ पुण्यकर्म ॥ २ पापकर्म ॥ ३ मिश्र-
कर्म ॥

कर्म ३—

- १ संचितकर्म—जन्मांतरोंविषे संघष कियेकर्म।
- २ आगामिकर्म—घटेमानजन्मविषे कियमाणकर्म।
- ३ प्रारंभकर्म—घटेमानजन्मका आरंभकर्म ॥

कर्मादि ३—

- १ कर्म—वेदविहितकर्म ॥
- २ विकर्म—वेदसे विरुद्धकर्म ॥
- ३ अकर्म—वेदविहित औ वेदविरुद्ध उभय विधकर्मका अकरण ॥

कारणधातु ३—

- १ आरंभधातु—जैसे पितामहआदिकके किये पुण्ये गृहका जव नाश होवे तव तिसविषे स्थित ईंटआदिकनाममोर्से फेर मरीनगृहका आरंभ हावेहे । तैसे कार्यरूप पृथ्वीआदिक के नाशनाके कारणपरमाणु उपू केत्युं रहते-हे । तिनने फेरअन्यपृथ्वीआदिकका आरंभ

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३८७

होवैहै ॥ ऐसै न्यायमतसै आरंभवाद मान्याहै ॥
यामै कार्य अरु कारणका भेद है ॥

१ परिणामवाद-जैसै दुग्धका परिणाम
(रूपान्तर) दधि होवैहै । तैसै सांख्यमतमें
प्रकृतिका परिणाम जगत् है । औ उपासकोंके
मतमें ब्रह्मका परिणाम जगत् औ जीव हैं ॥
ऐसै तिनोंनै परिणामवाद मान्याहै । यामै
कार्य अरु कारणका अभेद है ॥

२ विवर्तवाद-जैसै निर्विकाररज्जुविपै रज्जु-
रूप अधिष्ठानतै विपमसत्तावाला अन्यथा
स्वरूप सर्थ होवैहै । सो रज्जुका विवर्त(कल्पित-
तकार्य) है ॥ तैसै निर्विकारब्रह्मविपै अधिष्ठा-
नब्रह्मतै विपमसत्तावाला अन्यथास्वरूप जगत्
होवैहै ॥ सो ब्रह्मका विवर्त (कल्पितकार्य) है ॥
ऐसै वेदांतसिद्धांतमें विवर्तवाद मान्याहै । यामै
बी कार्य अरु कारणका बाधकृत अभेद है ॥

काल ३—१ भूतकाल ॥ २ भविष्यत्काल ॥
३ वर्तमानकाल ॥

जाग्रत् ३—

- १ जाग्रत्जाग्रत-वर्तमानजाग्रत्विषै जो स्वरूपा साक्षात्कार होवे सो ॥
- २ जाग्रत्स्वप्न जाग्रत्विषै जो भूत या भविष्य अर्थका चिंतनरूप मनोराज्य होवेद्वै सो ॥
- ३ जाग्रत्सुषुप्त-जाग्रत्विषै अमकरि जड़ी भूत वृत्ति द्वै सो ॥

जीव ३—

- १ पारमार्थिकजीव-साक्षी (बूटस्थ) चेतन ॥
- २ व्यावहारिकजीव-साभास अत करणरूप जाव ।
- ३ प्राणिमासिकजीव-साभासअत करणरूप व्यावहारिकजीवमें स्वप्नविषै अभ्यस्त जीव ॥
- १ विश्व-जाग्रत्विषै तीनदेहका अभिमानी जीव

२ तैजस—स्वप्नविषै स्थूलदेहके अभिमानकूं छोड़के सूक्ष्म औ कारण इन दो देहका अभिमानी वही जीव ॥

३ प्राज्ञ—सुषुप्तिविषै स्थूलसूक्ष्मदेहके अभिमानकूं छोड़के एक कारणदेहका अभिमानी वही जीव ॥

ताप ३—दुःख ॥

१ अध्यात्मताप—स्थूलसूक्ष्मशरीरविषै होता जो है आधि औ व्याधिरूप दुःख । सो अध्यात्मताप है ॥

२ अधिदैवताप—देवताकरि जो शीत उष्ण अतिवृष्टि अनावृष्टि विद्युत्पात भूकंपआदिक दुःख होवैहै । सो अधिदैवताप है ॥

३ अधिभूतताप—स्वशरीरतैं भिन्न चतुर्गोचर-प्राणि (चोर व्याघ्र शत्रु आदि) नकरि होता है जो दुःख । सो अधिभूतताप है ॥

नादादि है—

१ नाद—ॐकार वां शब्दगुण वां पराध्यादिकं
४ वाणी ॥

२ बिन्दु—ॐकारका अलक्ष्यअर्थरूप तुरीयपद ॥

३ कला—ॐकारकी अकारादि मात्रा परावाणी-
रूप अक्षर (शब्दका अवयव) ॥

निवृत्ति है (तादात्म्यकी निवृत्ति) :—

१ अमजकी निवृत्ति—ज्ञानसंभ्रं भ्रान्ति
(अविद्येक) के नाशकरी अमजतादात्म्यकी
निवृत्ति होवेहै ॥

२ सहजकी निवृत्ति—सहजतादात्म्यको
ज्ञानमं बाध आ ज्ञानके देहपातके अनंतर
नाश होवेहै ॥

३ कर्मजकी निवृत्ति—कर्मजतादात्म्य प्रारब्ध-
भागक अत भय ज्ञानकी निवृत्ति होवेहै ॥

पापकर्म है— १ उत्कृष्टपापकर्म ॥ २ मध्यम
पापकर्म ॥ ३ सामान्यपापकर्म ॥

फला] ॥ वेदात्पदार्थसंज्ञावर्णेन ॥१६॥ ३६१

पुण्यकर्म ३-१ उत्कृष्टपुण्यकर्म ॥ २ मध्यम

पुण्यकर्म ॥ ३ सामान्यपुण्यकर्म ॥

प्रपञ्च ३-१ स्थूलप्रपञ्च ॥ २ सूक्ष्मप्रपञ्च ॥

३ कारणप्रपञ्च ॥

प्राणायाम ३-१ पूरक ॥ २ कुम्भक ॥

३ रेचक ॥

प्रारब्ध ३-१ इच्छाप्रारब्ध ॥ २ अनिच्छा

प्रारब्ध ॥ ३ परेच्छाप्रारब्ध ॥

ब्रह्म ३-१ विराट् ॥ २ हिरण्यगर्भ ॥

३ ईश्वर ॥

मिश्रकर्म ३-१ उत्कृष्टमिश्रकर्म ॥ २ मध्यम

मिश्रकर्म ॥ ३ सामान्यमिश्रकर्म ॥

मूर्ति ३-१ ब्रह्मा ॥ २ विष्णु ॥ ३ शिव ॥

लक्षणदोष ३-

१. अव्याप्तिदोष - लक्ष्यके एकदेशविषै लक्षण
का वर्तना ॥

२ आतड्यासिदाप-लक्षके ताई व्यापिके
अलक्षयिषै थी लक्षणका वर्तना ॥

३ अस्मदोप-लक्षयिषै लक्षणका न वर्तना ।
लोक २—? स्वर्ग ॥ ४ मृत्यु ॥ ३ पाताल ॥

वादादि ३—

१ वाद - गुरुशिष्यका सवाद ॥

२ जल्प - युक्तिप्रमाणकुशलपडितनका परमत
गहन स्वमतमेडके वाद ॥

३ वितंडा - मूयनका प्रमाणयुक्तिरहित वाद ।
विना स्वमतका आधार कराके परपक्षवादी
गहन मा । जैसे आह्वयमिथ्याचयन गहन
प्रतिपक्ष कियाई ॥

विधवाक्य ३—

१ अपुन विधवाक्य - अलौकिकविधावा
विषयकवाक्य ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ३६३

२ नियमविधिवाक्य -प्राप्त दोषक्षनविषै एक
का विधायकवाक्य ॥

३ परिसंख्याविधिवाक्य-उभयपक्षविषै एक
के निषेधका विधायकवाक्य ॥

वेदके कांड ३-१ कर्मकांड ॥ २ उपासना-
कांड ॥ ३ ज्ञानकांड ॥

शरीर ३-१ स्थूलशरीर ॥ २ सूक्ष्मशरीर ॥
३ कारणशरीर ॥

श्रवणादि ३-१ श्रवण ॥ २ मनन ॥
३ निदिध्यासन ॥

श्रवणादिफल ३-१ प्रमाणसंशयनाश (श्रवण-
फल) ॥ २ प्रमेयसंशयनाश (मननफल) ॥
३ विपर्यय नाश (निदिध्यासन फल)

संबंध ३-१ संयोगसंबंध ॥ २ समवायसंबंध
३ तादात्म्यसंबंध ॥

सुषुप्ति ३—

१ सुषुप्तिजाग्रत्-सारिकवृत्तिपूर्वक सुषुप्त-
सुषुप्ति ॥

२ सुषुप्तिस्वप्न-राजसवृत्तिपूर्वक दुःखसुषुप्ति ॥

३ सुषुप्तिसुषुप्ति-तामसवृत्तिपूर्वक गाढसुषुप्ति

सुषुप्त्यादि ३-१ सुषुप्ति ॥ २ मूर्च्छा ॥

३ समाधि ॥

स्वप्न ३—

१ स्वप्नजाग्रत्—सत्यश्रयका स्वप्नविषय दर्शन ॥

२ स्वप्नस्वप्न—स्वप्नविषय रज्जुसर्पादिघ्रांतिका
दर्शन ॥

३ स्वप्नसुषुप्ति—दृष्टस्वप्नका अस्मरण ॥

हेतुवादि ३-१ हेतु ॥ २ स्वरूप ॥ ३ फल ॥

ज्ञानादि ३-१ ज्ञाता ॥ २ ज्ञान ॥ ३ ज्ञेय ॥

ज्ञानवानिषधक ३-१ सशय ॥ २ अतमा

यता ॥ ३ विपरीतभाषना ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ३६५

ज्ञानादि ३—? ज्ञान ॥ २ वैराग्य ॥
३ उपशम ॥

॥ पदार्थ चतुर्विध ॥ ४ ॥

अनुबंध ४—अपने ज्ञानके अनंतर पुरुषकूं
ग्रंथचिपै जोडनैवाला ॥

१ अधिकारी—मलविक्षेपरूप दोपरहित औ
अज्ञानरूप दोपरहित हुया विवेकादिब्यासी
साधनकरि सहित पुरुष वेदांतका अधि-
कारी है ॥

२ विषय—ब्रह्म अरु आत्माकी एकता !
वेदांतशास्त्रका विषय प्रतिपाद्य) है ॥

३ प्रयोजन—सर्वदुःखनकी निवृत्ति औ परमा-
नंदकी प्राप्तिरूप मोक्ष ॥

४ संबंध—ग्रंथका औ विषय का प्रतिपादक-
प्रतिपाद्यतारूप संबंध है ॥

अन्तःकरण ४—

- १ मन—सकल्पविकल्परूप वृत्ति ॥
- २ बुद्धि—निश्चयरूप वृत्ति ॥
- ३ चित्त—चित्तन (स्मरण) रूप वृत्ति ॥
- ४ अहंकार—अद्वैतरूप वृत्ति ॥

आनादिभक्त ४—

- १ आर्त्त—अध्यात्मआदिफट्टु.पकरि व्यापुल॥
- २ जिज्ञासु— भगवत्तत्त्वके जानने की इच्छा-
वाला ॥
- ३ अर्थार्थी—या लोक वा परलोकके भोगकी
इच्छामाला ॥
- ४ ज्ञाना—जीवनमुक्त विद्वान् ॥

आश्रम ४—१ ब्रह्मचर्य ॥ २ गृहस्थ ॥ ३

४ वानप्रस्थ ॥ ५ सन्यास ॥

उत्पत्त्यादिक्रिया ४-इहां क्रियाशब्दकरि क्रिया
जो कर्म । ताका फल कहिये है ॥

१ उत्पत्ति—आद्यलक्षण (जन्म)।जैसे कुलाल-
की क्रियाका फलरूप घटकी उत्पत्ति है ॥

२ प्राप्ति—गमनरूप क्रियाका चांछितदेशकी
प्राप्तिरूप फल है ॥

३ विकार—अन्यरूपकी प्राप्ति । जैसे पाक
(रसोई) रूप क्रियाका फलरूप अन्नका
विकार (पलटना) है ॥

४ संस्कार—(१) मलकी निवृत्ति औ (२)
गुणकी प्राप्ति । इस भेदतँ संस्कार दोप्रकार-
का होवै है ॥ (१) जैसे वस्त्रके प्रक्षालन-
रूप क्रियाका फलरूप मलनिवृत्ति है सो
प्रथम है औ (२) कुसुंभमें वस्त्रके मज्जन-
रूप क्रियाका फलरूप रक्तगुणकी उत्पत्ति
है सो द्वितीय है ॥

चित्तनिरोधयुक्ति ४—१ अध्यात्मविद्या, ॥

० साधुसंग ॥ ३ वासनात्याग ॥ ४ प्राणापाना-

धर्मादि ४—च्यारीपुरुषार्थ ॥

१ धर्म—सकाम वा निष्काम जो पुरुष सो ॥

२ अर्थ—इसलोक औ परलोकविषय जो भोगके
साधन धनादिक हैं सो ॥

३ काम—इसलोक औ परलोकका जो भोग सो ॥

४ मोक्ष—दुःखनिवृत्ति औ सुखप्राप्ति ॥

पुरुषार्थ ४—१ धर्म ॥ ० अर्थ ॥ ३ काम ॥

४ मोक्ष ॥

पूजापात्र ४—१ ब्रह्मनिष्ठ ॥ २ सुशुद्ध ॥

३ दरिद्रास ॥ ४ स्ववर्मनिष्ठ ॥

प्रमाण ४—प्रमाणांतरका करण प्रमाण द्वै ॥ इहां

च्यारीप्रमाणाका कथन स्थायरीनिर्णै दि ॥

१ प्रत्यक्षप्रमाण ॥ ० अनुमानप्रमाण ॥

३ उपमानप्रमाण ॥ ३ शब्दप्रमाण ॥

ब्रह्मविदादि

- १ ब्रह्मचित्—चतुर्थभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी॥
- २ ब्रह्मविद्वर-पंचमभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी॥
- ३ ब्रह्मविद्वरीयान्-षष्ठभूमिकाविषै आरूढज्ञानी
- ४ ब्रह्मविद्वरिष्ठ-सप्तमभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी

भूतग्राम ४—

- १ जरायुज—मनुष्यपशुआदिक ॥
- २ अंडज—पत्नीसर्प आदिक ।
- ३ उद्भिज्ज—वृक्षादिक ॥
- ४ स्वेदज—यूकामत्कुरणआदिक ॥

मैत्र्यादि ४—

- १ मैत्री—धनवान् वा गुणकरि समान वा ईश्वरभक्त वा विप्रयी [कर्मो उपासक] पुरुष इतविषै “ ये मेरे हैं ” ऐसी बुद्धि ॥
- २ करुणा—दुःखी वा गुणकरि निकृष्ट वा अग्रजन वा जिज्ञास । इतविषै दया ॥

३ मुदिना—पुण्यवान् वा गुणकरि अधिक वा ईश्वर वा मुक्त । इनविधै प्रीति ॥

४ उपेक्षा—पापिष्ठ वा अघगुणयुक्त वा द्वेषी वा पामर । इनविधै रागद्वेषकरि रहिततारूप उदात्तीनता ॥

मोक्षद्वारपाल ४—१ शम ॥ २ संतोष ॥

३ विचार (विवेक) ॥ ४ सत्संग ॥

योगभूमिका ४—१ चाण्डीलय ॥ २ मतोलया ॥

३ बुद्धिलय ॥ ४ अहकारलय ॥

वर्ण ४—१ ब्राह्मण ॥ २ क्षत्रिय ॥ ३ वैश्य ॥

४ शूद्र ॥

वर्तमानज्ञानप्रतियंधनिवृत्तिहेतु ४—

१ शमादि—यद्द विषयान्नतिका निवर्तक है ॥

२ श्रवण—यद्द बुद्धिही मद्दताका निवर्तक है ॥

३ मनन—यद्द पुनर्तका निवर्तक है ॥

४ निदिध्यासन- यद्द विपरीतभावनाविधै जो दुःखप्रद होवै है ताका निवर्तक है ॥

कला] ॥ वेदांतपरार्थसंज्ञाचर्णन ॥१६॥ ४०१

वर्तमानज्ञानप्रतिबंध ४—१ विषयासक्ति ॥

२ बुद्धिमांघ ॥ ३ कुतर्क ॥ ४ विषयासक्ति

दुराग्रह ॥

विवेकादि ४—१ विवेक ॥ २ वैराग्य ॥ ३ पट्-
संपत्ति ॥ ४ मुमुक्षुता ॥

वेद ४—१ ऋग्वेद ॥ २ यजुर्वेद ॥ ३ साम-
वेद ॥ ४ अथर्वणवेद ॥

शब्दप्रवृत्तिनिमित्त ४—१ जाति ॥ २ गुण ॥
३ क्रिया ॥ ४ संबंध ॥

संन्यास ४—१ कुटीचकसंन्यास ॥ २ बृहदक-
संन्यास ॥ ३ हंससंन्यास ॥ ४ परमहंस-
संन्यास ॥

समाधिविधन ४—१ लय ॥ २ विक्षेप
३ कापाय ॥ ४ रत्नास्वाद ॥

स्पर्श ४—१ शीत ॥ २ उष्ण ॥ ३ कोमल ॥
४ कटिन ॥

पदार्थ पंचविध ॥ ५ ॥

अभाव ५—नास्तिप्रतीतिका विषय ॥

१ प्रागभाव—कार्यकी उत्पत्तिमें पूर्व जों कार का अभाव है सो ॥

२ प्रध्वंसाभाव—नाशके अनंतर जो अभाव द्य है सो ॥

३ अन्योन्याभाव—परस्परविध जो परस्पर का अभाव है सो । जैसे रूपभेद ॥ जैसे घटपट्टका भेद है सो ॥

४ अत्यन्ताभाव—तीनिकालविध जो अभाव है सो । जैसे वायुविध रूपका है ॥

५ सामयिकाभाव—किसी (उदाय लेनेके) समयविध जो भूतलादिक में घटादिकका अभाव है सो ॥

ज्ञान] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४०३

अज्ञानके भेद ५-अज्ञानविषै वेदांतआचार्यन के मतके भेद ॥

१ मायाअविद्यारूपअज्ञान-केइक (विद्या-
रायस्वामी) अज्ञानकूं माया (समष्टि-
अज्ञानमयईश्वरकी उपाधि) औ अविद्या
(व्यष्टिअज्ञानमय जीवनकी उपाधि) रूप
मानते हैं ॥

२ ज्ञानक्रियाशक्तिरूपअज्ञान-केइक अज्ञा-
नकूं ज्ञानशक्ति औ क्रियाशक्ति मानतेहैं ॥

३ विक्षेपआवरणरूपअज्ञान-केइक अज्ञा-
नकूं आवरणरूप अरु विक्षेप (की हेतुशक्ति)
रुह मानतेहैं ॥

४ समष्टिद्वयष्टिरूपअज्ञान-केइक अज्ञानकू
समष्टि (ईश्वरकी उपाधि) औ व्यष्टि(जीव
की उपाधि) रूप मानतेहैं ॥

५ कारणरूपअज्ञान-केइक अज्ञानकू जगत्का
उपादानकारण मूलप्रवृत्तिमय ईश्वरकी
उपाधिरूप मानतेहैं औ तिस पक्षमें धार्य
(अत करण उपाधिवाला जीव मान्या है ॥

उपवायु ५—

- १ नाग—उद्गारका हेतु वायु ॥
- २ कूर्म—त्रिमयउ मयका हेतु वायु ॥
- ३ कृकल—द्राक्का हेतु वायु ॥
- ४ दमदत्त—जमुदारका हेतु वायु ॥
- ५ धनत्रय—दक्षुणिका हेतु वायु ॥

कला] ॥ वेशंतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४०५

कर्म ५—

१ नित्यकर्म—सदा जाका विधान होवैहै ऐसा कर्म (स्नानसंध्याआदिक) ॥

२ नैमित्तिककर्म—किसी निमित्तकूं पायके जाका विधान होवैहै ऐसा कर्म (ग्रहणश्राद्ध-आदिक) ॥

३ काम्यकर्म—कामनाके लिये विधान किया कर्म (यज्ञयागादिक) ॥

४ प्रायश्चित्तकर्म—पापकी निवृत्तिके लिये विधान किया कर्म ॥

५ निषिद्धकर्म—नहीं करनेके लिये कथन किया कर्म (ब्रह्महत्यादिक) ॥

कर्मइंद्रिय ५—१ वाक् ॥ २ पाणि ॥ ३ पाद ॥
उपस्थ ॥ ५ गुद ॥

कोश ५—१ अक्षयकोश ॥ २ प्राणम
कोश ॥ ३ मनोमयकोश ॥ ४ विज्ञानम
कोश ॥ ५ आनन्दमयकोश ॥

केश—

१ अधिष्ठा —

[१] दुःखविषै सुखबुद्धि ॥

[२] अनात्माविषै आत्मबुद्धि ॥

[३] अनित्यविषै नित्यबुद्धि ॥

[४] अशुचिविषै शुचिबुद्धि ॥

यह चार प्रकारकी कार्य अधिष्ठा ॥

२ अस्मिता—माझी (आत्मा) थी बुद्धिर्ष
पकताहा ज्ञान (सामान्यअहकार) ॥

३ राग—रुद्धअ मति (आरुद्धमीति) ॥

४ द्वेष—का ३ ॥

५ गभिनितेश — महत्का भय ॥

ख्याति ५-प्रतीति औ कथनरूप व्यवहार ॥

- १ असत्ख्याति—शून्यवादी । असत् (निः-
स्वरूप) सर्पकी रज्जुदेशविषै प्रतीति औ
कथन मानतेहैं । सो ॥
- २ आत्मख्याति-क्षणिकविज्ञानवादी। क्षणिक-
बुद्धिरूप आत्माकी सर्परूपसँ प्रतीति औ
कथन मानतेहैं । सो ॥
- ३ अन्यथाख्याति—नैयायिक । बंबी (रा-
फडा) आदिक दूरदेशविषै स्थित सर्पकी
दोपके बलसँ रज्जुदेशविषै प्रतीति औ कथन
मानतेहैं सो ॥ अथवा रज्जुरूप ज्ञेयका सर्प-
रूपसँ ज्ञान मानतेहैं । सो ॥
- ४ अख्यातिख्याति—सांख्यप्रभाकर मतके
अनुसारी । “ यह सर्प है ” “ यह ”
अंश तो रज्जुके इदंपनैका प्रत्यक्षज्ञान है
औ “ सर्प ” यह पूर्व देखे सर्पका स्मृति-

ज्ञान है। ये दोषज्ञान हैं। तिनका दोषके बलमें अख्याति कहिये अविशेष (भेद प्रतीतिका अभाव) होवैहै। ऐसैं मानतेहैं ॥

५ अनिर्वचनीयख्याति—वेदातल्लिखातमें-
रज्जुविषे ताभी अविद्याकरि अनिर्वचनीय
(मनुअननुमें विलक्षण) सर्प औ ताका
ज्ञान उपजेहै। ताका ख्याति कहिये
प्रतीति औ कथन होवैहै ॥ ऐसैं मानते
हैं सो ॥

जीवन्मुक्तिके प्रयोजन ५—यद्यपि जीवन्-
मुक्तता मानाहु सिद्ध है। तथापि इहा
जाव मुक्ति शब्दकरि जीवन्मुक्तिके विलक्षण
आनन्दका अवस्था (परमआदिकभूमिका) का
वर्णन है। ताका प्रयोजन कहिये फल पाच-
प्रकारके ।

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४०६.

१. ज्ञानरक्षा—अद्यपि एकवार उपजे दृढ-
बोधका नाश नहीं होवैहै । यातें ज्ञानरक्षा
आपहीं सिद्धहै । तथापि इहां निरंतर ब्रह्मा-
कारवृत्तिकी स्थिति । ज्ञानरक्षाशब्दका
अर्थ है ॥
२. तप—मन औ इंद्रियनकी एकाग्रता वा
शरीर वाणी औ मनका संयम ॥
३. विसंवादाभाव—जल्प औ वितंडवादका
अभाव ॥
४. दुःखनिवृत्ति—दृष्ट (प्रत्यक्ष) दुःखकी
निवृत्ति ॥
५. सुखप्राप्ति—निरावरण परिपूर्ण औ सवृत्ति-
करूप जीवनमुक्तिके विलक्षण आनंदकी
प्राप्ति ॥

दृष्टान्त ५—जगत्के मिथ्यापत्तैविषै दृष्टान्त
पचविध है ॥

- १ शुक्तिविषै रजतका दृष्टान्त ॥
- २ रज्जुविषै सर्पका दृष्टान्त ॥
- ३ स्याणुविषै पुरुषका दृष्टान्त ॥
- ४ गगनविषै नीलताका दृष्टान्त ॥

५ मरीचिकाविषै जलका दृष्टान्त-मध्या
कालमें मरुभूमि (ऊपरभूमि) विषै प्रतिबिम्ब
सूर्यके किरण मरीचिका कहियेहैं । तिनवि
जो जल भासता है । ताकूं मृगजल
जाजूजल कहतेहैं । सो ॥

नियम ५—

- १ शौच । २ सतोष ॥ ३ तप ॥
- ४ स्वाध्याय—स्वशाखाके वेदभागका
गानाआदिकका जो नित्य पाठ करना है
- ५ ईश्वरप्रणिधान—ॐ हागदिईश्वर उपम

ग्ला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४११

प्रलय ५—

- १ नित्यप्रलय—क्षणक्षणविषै सर्वकार्यनका जो दीपज्योतिकी न्यांई नाश होवैहै सो । वा सुषुप्ति ॥
- २ नैमित्तिकप्रलय—ब्रह्माकी रात्रिरूपनिमित्तकरि होता जो है भूरआदि नीचेके तीनलोकनका नाश सो ॥
- ३ दिनप्रलय—ब्रह्माके दिनमें चतुर्दशमन्वंतर होतेहैं । तिस प्रत्येकका जो नाश । सो ॥ याहीकूं अवांतरप्रलय औ मन्वंतरप्रलय वी कहतेहैं ॥ कोई तो याहीकूं नैमित्तिकप्रलय कहतेहैं ॥
- ४ महाप्रलय—ब्रह्माके शतवर्षके अनंतर जो होताहै ब्रह्मदेवसहित आकाशादिसर्वभूतनका नाश सो ॥

५ आत्यंतिकप्रलय—ज्ञानकरि जो होता है
कारणसहित सकलजगत्का घाघ (अन्यंत-
निवृत्ति) सो ॥

प्राणादि ५-१ प्राण ॥ २ अपान ॥ ३ व्यान ॥
४ उदान ॥ ५ समान ॥

भेद ५-१ जीवईश्वरका भेद ॥ २ जीवजीवका
भेद ॥ ३ जीवजडका भेद ॥ ४ ईशजडका
भेद ॥ ५ जडजडका भेद ॥

भ्रम ५—(देखो षष्ठकलाविषे) १ भेदस्रम ॥
२ कर्तृत्वस्रम ॥ ३ संगस्रम ॥ ४ विकारस्रम
५ मन्यन्वस्रम ॥

भ्रमनिवर्तकदृष्टान्त ५—(देखो षष्ठकलाविषे)
१ विरप्रतिविद्य ॥ २ लोहितरुद्रिक ॥ ३ घ-
टीकाश ॥ ४ रज्जुसर्प ॥ ५ कनककुंडल ॥
महायज्ञ ५—१ देय ॥ २ ऋषि ॥ ३ पितर ॥
४ मनुष्य ॥ ५ नूनयज्ञ ॥

कला] ॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४१३

धर्म ५—

१ अहिंसा ॥ २ सत्य ॥ ३ ब्रह्मचर्य ॥

४ अपरिग्रह—निर्वाहसँ अधिकधनका असंग्रह ॥

५ अस्तेय—चोरीका अभाव ॥

योगभूमिका ५—

१ क्षेप—रागद्वेषादिकरि चित्तकी चंचलता ॥

२ विक्षेप—बहिर्मुखचित्तकी जो कदाचित्
ध्यानयुक्तता ॥ सो क्षेपतँ विशेष विक्षेप है ॥

३ सूढ—निद्रानंद्रादियुक्तता ॥

४ ऐकाग्र ॥ ५ निरोध ॥

वचनादि ५—१ वचन ॥ २ आदान ॥

३ गमन ॥ ४ रति ॥ ५ मलत्याग ॥

शब्दादि ५—१ शब्द ॥ २ स्पर्श ॥ ३ रूप ॥

४ रस ॥ ५ गंध ॥

स्थूलभूत ५—१ आकाश ॥ २ वायु ॥

३ तेज ॥ ४ जल ॥ ५ पृथ्वी ॥

हेतुवाभास ५—हेतुके लक्षण (साध्यकी साधकता) में रहित हुआ हेतुकी न्याय्य मान्यता के लिये जो दृष्टहेतु हो। या हेतुका जो अभाव (दोष) हो ॥

१ सद्यभिचार—साध्य (अग्नि) के साध्य (गर्वण) को लक्ष्य के साध्य (दूर) के लिये धर्मनेपाला हेतु । सद्यभिचार है ॥
 अग्नि गर्वण अग्निमान् है " प्रमेय होनेसे " यह दूर है । यादीव अग्निमान् हेतु ही कहनेसे ॥

२ विकल्प—साध्यके साध्यवर्ति लक्षण हेतु विकल्प है । अग्नि " गुण निवृत्ति है एकक । विवाहान्य (दानने) यह हेतु है । जो साध्य (निवृत्ति) के साध्यवर्ति अज्ञानवर्ति लक्षण है । वादने जो एकक है जो साध्य है । यह हेतु है एक निवृत्ति ।

सद्यभिचार—ज्ञाने साध्यके साध्यवर्ति

कला] ॥ वेदांतपरार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४१५

साधक अन्यहेतु होवै सो । जैसे शब्द नित्य है । “ श्रवण होनैतै ” इस हेतुके साध्य (नित्यता) के अभावका साधक । शब्द अनित्य है “ कार्य होनैतै ” घटकी न्याई । यह हेतु है ॥ जो कार्य होवै सो अनित्य हीं होवै है ॥

४ असिद्ध—शब्द गुण है । “ चानुप होनैतै ” रूपकी न्याई ॥ इहां चानुपत्वरूप हेतुका स्वरूप शब्दरूप पक्षविषै नहीं है । काहेतै शब्दकूँ श्रवणजन्य ज्ञानका विषय होनैतै ॥

५ बाधित—जाके साध्यका अभाव अन्य प्रमाणकरि निश्चित होवै सो । जैसे अग्नि उष्ण नहीं है “ द्रव्य (वस्तु) होनैतै ” । इस हेतुके साध्य (अनुष्णता) के अभाव (उष्णता) का ग्रहण त्वक् इंद्रियकरि होवै है ॥

ज्ञान इंद्रिय ५—१ श्रोत्र ॥ २ त्वक् ॥
३ चक्षु ॥ ४ जिह्वा ॥ ५ घ्राण ॥

॥ पदार्थ पद्धि ॥ ६ ॥

अजिह्वत्यदि ६-यति (संख्याती) के घर्म
विशेष ॥

१ अजिह्वत्य-जमपिरयकी आसक्ति रक्षितता

२ नपुंसकत्व-कुमारी । किशोरी (१
पर्यन्त) अथ गृह्याग्नीविने समन
(निर्दिशामिता) रूप ॥

३ धनुस्त्व-एकदिने योजनने अधिक समन

४ अधत्य-एकधनुस्त्वपर्यन्तने अधिक दृष्टि
समन ॥

५ पथिरत्व-एकमात्रका अधत्य ॥

६ स्रग्भ्य-एकमात्रविने गुण्यता । गृह्या
सनादिपदार्थ ६-एकमात्रदिन पदार्थ ॥

७ जीव ॥ ८ ईश ॥ ९ शुद्धमेत

१० अविद्या ॥ ११ वेतनविद्यागर्वध

१२ निश्चय भेद ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४१७

अरिवर्ग ६—परलोकके विरोधी आंतर

(भीतरस्थित) शत्रुनका समूह ॥

१ काम—प्राप्तवस्तुके भोगकी इच्छा ॥

२ क्रोध—द्वेष ॥

३ लोभ—अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिकी इच्छा ॥

४ मोह—आत्माअनात्माका वा कार्य (शुभ)

अकार्य (शुभ) का अविवेक ॥

५ म्द .. गर्भ (अहंकार)

६ मत्सर—परके उत्कर्षका असहन ॥

अवस्था ६—स्थूलदेहके काल ॥

१ शिशु—एकवर्षके देहका काल ॥

२ कौमार—पांचवर्षके देहका काल ॥

३ पौगंड—पट्से दशवर्षके देहका काल ॥

४ किशोर—एकादशसे पंचदशवर्षके देहका काल ॥

५ यौवन—त्रोडशसे चालीशवर्षके देहका काल ॥

६ जरा—चालीशसे ऊपरके देहका काल ॥

ईश्वरके भग ६—१ समप्रदेश्वर्य ॥ २ समप्र-
धर्म ॥ समप्रयश ॥ ४ समप्रथी ॥
५ समप्रज्ञान ॥ ६ समप्रवैराग्य ॥

ईश्वरके ज्ञान ६—

१ उत्पत्ति ॥ २ प्रलय ॥ ३ गति ॥

४ आगति—इस लोकविषे जीवका आगमन-
रूप आगति है ताका ज्ञान ॥
५ चिन्ता ॥ ६ अविद्या ॥

ऊर्ध्वि ६ संसाररूप सागरकी लहरियां ॥

० जन्म ॥ २ मरण ॥ ३ लुब्धा ॥ ४ तृषा ॥
५ हर्ष ॥ ६ शोक ॥

कर्म ६—नित्यकर्म ॥

१ स्नान ॥ २ जप ॥ ३ होम ॥

४ अर्पण—देवपूजन ॥

कला । ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४१६

५ आतिथ्य—भोजनके समय आये अभ्यागतके अर्थ अन्नदान ॥

६ वैश्वदेव—अग्निविषै हुतद्रव्यका होम ॥

कौशिक ६—अन्नमयकोश (देह) विषै होनैवाले पदार्थ ॥

१ त्वक् ॥ २ मांस ॥ ३ रुधिर ॥ ४ मेद ॥

५ मज्जा ॥ ६ अस्थि ॥

प्रमाण ६—

१ प्रत्यक्षप्रमाण—प्रत्यक्षप्रमाका जो करण सो प्रत्यक्षप्रमाण है । ऐसै श्रोत्रआदिकपांचज्ञानेंद्रिय हैं ॥

२ अनुमानप्रमाण—अनुमितिप्रमाका करण जो लिंगका ज्ञान सो अनुमानप्रमाण है । जैसे पर्वतविषै अशिके ज्ञानका हेतु धूमरूप लिंगका ज्ञान है ॥

- ३ उपमानप्रमाण—उपमितिप्रमाका करण जो सादृश्यका ज्ञान सो उपमानप्रमाण है । जैसे गवय (रोम्ह) में गौके सादृश्यका ज्ञान है ॥
- ४ शब्दप्रमाण--शाब्दीप्रमाका करण जो लोकिव्यैदिकशब्द सो ॥
- ५ अर्थापत्तिप्रमाण-अर्थापत्तिप्रमाका करण जो उपपायका ज्ञान । सो अर्थापत्तिप्रमाण है ॥ जैसे दिनें अमोजी स्थूलपुरुषके शक्तिमें भाजनक स्वरूप अर्थापत्तिप्रमाका हेतु स्थूलता (उपपाय) का ज्ञान है ॥
- ६ अनुपलब्धिप्रमाण--अभावप्रमाका करण जो पदार्थकी अप्रतीति । सो अनुपलब्धिप्रमाण है । जैसे गृहमें घटके अभावके ज्ञान ही हेतु घटकी अप्रतीति है ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४२१

अम ६--१ कुल ॥ २ गोत्र ॥ ३ जाति ॥

४ वर्ण ॥ ५ आश्रम ॥ ६ नाम ॥

रस ६-१ मधुररस ॥ २ आम्लरस ॥

३ लवणरस ॥ ४ कटुकरस ॥ ५ कषायरस ॥

६ तिक्तरस ॥

लिंग ६-वेदवाक्यके तात्पर्यकेनिश्चायक लिंग ॥

१ उपक्रमउपसंहार-आदिअंतकी एकरूपता ॥

२ अभ्यास-वारम्बार पठन ॥

३ अपूर्वता-अलौकिकता ॥

४ फल-मोक्ष ॥

५ अर्थवाद-स्तुति ॥

६ उपपत्ति-अनुकूलदृष्टांत ॥

विकार ६-१ जन्म

२ अस्तित्ता-पूर्व अविद्यमानका होना ॥

३ वृद्धि ॥ ४ विपरिणाम ॥ ५ अपक्षय ॥

६ विनाश ॥

वेदश्रंग ६-१ शिवा ॥ २ कल्प ॥ ३ व्याक
रण । ४ निरुक्त ॥ ५ छुद ॥ ६ ज्योतिष ॥

शमादि ६-१ शम ॥ २ दम ॥ ३ उपरति ॥
४ तितिता ॥ ५ थद्धा ॥ ६ समाधान ॥

शास्त्र ६-१ साय्यशास्त्र ॥ २ योगशास्त्र ॥
३ न्यायशास्त्र ॥ ४ वैशेषिकशास्त्र ॥ ५ पूर्व-
मीमांसाशास्त्र ॥ ६ उत्तरमीमांसाशास्त्र ॥

समाधि ६-१ बाह्यदृश्यानुविद्धसमाधि ॥ २
आन्तरदृश्यानुविद्धसमाधि ॥ ३ बाह्यशब्दा-
नुविद्धसमाधि ॥ ४ आन्तरशब्दानुविद्ध-
समाधि ॥ ५ बाह्यनिर्विकल्पसमाधि ॥
६ आन्तरनिर्विकल्पसमाधि ॥

सूत्र ६-१ जैमिनीयसूत्र ॥ २ आश्वलायनसूत्र ॥
३ श्वपम्नयसूत्र ॥ ४ बौधायनसूत्र ॥
५ कात्यायनसूत्र ॥ ६ घैरान्तमीयसूत्र ॥

॥ पदार्थ सप्तविध ॥ ७ ॥

अतलादि ७—१ अतल ॥ २ वितल ॥

३ सुतल ॥ ४ तलातल ॥ ५ रसातल ॥

६ महातल ॥ ७ पाताल ॥

अवस्था ७—चिदाभासकी क्रमतेँ तीन बंधकी
औ च्यारी मोक्षकी हेतु दशा ॥

१ अज्ञान—“नहिं जानताहं” इस व्यवहार-
का हेतु जो आवरणविक्षेपहेतुशक्तिवाला
अनादिअनिर्वचनीयभानरूप पदार्थ सो ॥

२ आवरण—“नहीं है । नहीं भासता, है”
इस व्यवहारका हेतु अज्ञानका कार्य ॥

विक्षेप—धर्मसहितदेहादिप्रपञ्च औ ताका
ज्ञान ॥

४ परोक्षज्ञान ॥ ५ अपरोक्षज्ञान ॥

६ शोकनाश—विक्षेपनाश (भ्रान्तिनाश) ॥

७ तृप्ति—ज्ञानजनित हर्ष ॥

चेतन ७—

- १ ईश्वरचेतन—माशविशिष्ट चेतन ॥
- २ जीवचेतन—अविद्याविशिष्ट चेतन ॥
- ३ शुद्धचेतन—निरुपाधिक चेतन ॥
- ४ प्रमाताचेतन—प्रमाता जो अत करण तिसकरि अवच्छिन्नचेतन । प्रमाताचेतन है ॥
- ५ प्रमाणचेतन—इन्द्रियद्वारा शरीरसे गहिर निकसिके घटादिविषयपर्यंत पहुँची जो वृत्ति । सा प्रमाण है । तिसकरि अवच्छिन्नचेतन । प्रमाणचेतन है ।
- ६ प्रमेयचेतन—प्रमेय जो घटादिविषय तिसकरि अवच्छिन्न (अन्योसं भिन्न सिया) चेतन । प्रमेयचेतन है ॥
- ७ प्रमाचेतन—घटादिविषयाकार भई जो वृत्ति सो प्रमा है । तिसकरि अवच्छिन्न चेतन या तिसविषय प्रतिशिरत चेतन प्रमाचेतनहै । याहीक प्रमितिचेतन श्री फलचेतन यी कहतेहै ।

द्रव्यादिपदार्थ ७—नैयायिकमतमें जे द्रव्य-
आदिसप्तपदार्थ मानेहैं । वे ॥

- १ द्रव्य—न्यायमतमें [१] पृथ्वी [२] जल
[३] तेज [४] वायु [५] आकाश
[६] काल [७] दिशा [८] आत्मा
[९] मन । ये नव द्रव्य (गुणनके आश्रय-
रूप पदार्थ) मानेहैं । वे ॥
- २ गुण—न्यायमतमें रूपसँ आदिलेके संस्कार-
पर्यंत २४ गुण मानेहैं । वे ॥
- ३ कर्म—न्यायमतमें [१] उत्क्षेपण (उंचे
फेंकना) [२] अपक्षेपण (नीचे फेंकना)
[३] आकुंचन [४] प्रसारण औ
[५] गमन । ये पंचविधकर्म मानेहैं । वे ॥
- ४ सामान्य—न्यायमतमें पर (सत्ता) औ
अपर (घटत्वादिक) इस भेदतँ द्विविध
जाति मानीहै । सो ॥

५ समवाय—वेदानमतमें जहां जहां तादात्म्यसंबंध मान्याहैं तहां तहां न्यायमतमें संबन्धविशेष (नित्यसंबन्ध) मान्याहैं । सो ॥

६ अभाव—[१] प्रागभाव [२] प्रध्वसाभाव [३] अन्वोन्याभाव [४] अत्यताभाव औ [५] सामयिकाभाव । यह पञ्चविध नास्तिप्रतीतिके विषयरूप पदार्थ ॥

७ विशेष—न्यायमतमें जे परमाणुनके मध्यगन अतन्त्रवकाशरूप पदार्थ मानेहैं । वे ॥

धातु ७—

१ रस-सूत्रम (पुण्यपाण) । मध्यम (अन्नकासार) औ स्थूल (मल) भेदतें तीनप्रकारके जो भुक्तअन्नके विभाग होयेहैं । तिनमेंसे मध्यमविभाग है । सो ॥

२ अधिर ॥ ३ मान ॥

४ मेघ—श्येनमांस (चर्बी) ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४२७.

५ मज्जा—अस्थिगत सचिक्कणपदार्थ ॥

६ अस्थि ॥ ७ रेत ॥

भूरादिलोक ७-१ भूर्लोक ॥ २ भुवर्लोक ॥

३ स्वरलोक ॥ ४ महर्लोक ॥ ५ जनलोक ॥

६ तपलोक ॥ ७ सत्यलोक ॥

मौनादि ७-१ मौन ॥ २ योगासन ॥ ३ योग ॥

४ तितिक्षा ॥ ५ एकांतशीलता ॥ ६ निःस्पृ-

हता ॥ ७ समता ॥

रूप ७-१ शुक्ल ॥ २ कृष्ण ॥ ३ पीत ॥

४ रक्त ॥ ५ हरित ॥ ६ कपिश ॥ ७ चित्र ॥

व्यसन ७-१ तन ॥ २ मन ३ क्रोध ॥ ४ विषय ॥

५ घन ॥ ६ राज्य ॥ ७ सेवकव्यसन ॥

ज्ञानभूमिका ७-(देखो या ग्रंथकी त्रयोदश-

कलाविषै) १ शुभेच्छा ॥ २ सुविचारणा ॥

३ तनुमानसा ॥ ४ सत्त्वापत्ति ॥ ५ असं-

सक्ति ॥ ६ पदार्थाभाविनी ॥ ७ तुरीयगा ।

॥ पदार्थ अष्टविध ॥ ८ ॥

पाश ८--१ दया ॥ २ शका ॥ ३ भय
४ लज्जा ॥ ५ निंदा ॥ ६ कुल ॥ ७ शील ।
८ धन ॥

पुरी ८--१ ज्ञानेंद्रियपञ्चक ॥ २ कर्मेंद्रियपञ्चक ।
३ अन्नकरणचतुष्टय ॥ ४ प्राणादिपञ्चक ।
५ भूतपञ्चक ॥ ६ काम ॥ ७ त्रिविधकर्म ।
८ धामना ॥

प्रकृति ८--१ पृथ्वी ॥ २ जल ॥ ३ अग्नि ।
४ वायु ॥ ५ आकाश ॥

६ मन—इहा मनश दशकरि समष्टिमनरू
अहकारका ग्रहण है ॥

७ बुद्धि—इहा बुद्धिशब्दकरि समष्टिबुद्धिरू
महत्तत्त्वका ग्रहण है ॥

कला] ॥ वेदान्तपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४२६

अहंकार—इहां अहंकारशब्दकरि महत्त-
त्वं पूर्वं शुद्धअहंकारके कारणअज्ञानरूप
मूल प्रकृतिका ग्रहण है ॥

द्विचर्यके अंग ८—

- १ स्त्रीका दर्शन ॥ २ स्पर्शन ॥
- ३ केलिः—चोपडआदिकक्रीडा
(खेल) ॥
- ४ कीर्तन ॥ ५ गुह्यभाषण ॥
- ६ संकल्प—चितन (स्मरण) ॥
- ७ निश्चय ॥ ८ इनका त्याग ॥

इत अष्टमैशुतसं विपरीत ॥

- मद ८—१ कुलमद ॥ २ शीलमद ॥ ३ धनमद ॥
४ रूपमद ॥ ५ यौवनमद ॥ ६ विद्यामद ॥
७ तपमद ॥ ८ राज्यमद ॥

मूर्तिमद ऽ—

- १ पृथ्वीमद—अस्थिमांसादिपृथ्वीके तत्त्वनका अभिमान ॥
- २ जलमद—शुभशोणितआदिक जलके तत्त्वनका अभिमान ॥
- ३ तेजमद—क्षुधाआदिकतेजतत्त्वनकी अधिकत
- ४ पवनमद—चलन (विदेशगमन) धावन आदिक वायुके तत्त्वोंकरि युक्तता ॥
- ५ आकाशमद—कामक्रोधादिक आकाशके तत्त्वाकरि युक्तता ॥
- ६ चन्द्रमद—शीतलतारूप चन्द्रके गुणकरि युक्त होना ॥
- ७ सूर्यमद—सताप (क्रोधादि) रूप सूर्यके गुणकरि युक्त होना ॥
- ८ आत्ममद—विद्याधनकुलआदिक आत्माके सबधिनका अभिमान ॥

कैला] 1. वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४३१

शब्दशक्तिग्रहणहेतु ८--१ व्याकरण ॥

२ उपनाम ॥ ३ कोश ॥ ४ आसवाक्य ॥

५ वृद्धव्यर्थहार ॥ ६ वाक्यशेष ॥ ७ विवरण ॥

८ सिद्धपदको सन्निधि ॥

समाधिके अंग ८--१ यम ॥ २ नियम ॥

३ आसन ॥ ४ प्राणायाम ॥ ५ प्रत्याहार ॥

६ धारणा ॥ ७ ध्यान ॥ ८ सविकल्पसमाधि ॥

॥ पदार्थ नवविध ॥ ९ ॥

तत्त्व ६--किसी महात्माके मतमें लिंगदेहके
नवतत्त्व मानेहैं । वे ॥

१ श्रोत्र ॥ २ त्वक् ॥ ३ चक्षु ॥ ४ जिह्वा ॥

५ घ्राण ॥ ६ मन ॥ ७ बुद्धि ॥ ८ चित्त ॥

९ अहंकार ॥

संसार ६--१ ज्ञाता ॥ २ ज्ञान ॥ ३ ज्ञेय ॥

४ भोक्ता ॥ ५ भोग्य ॥ ६ भोग ॥ ७ कर्त्ता ॥

८ करण ॥ ९ क्रिया ॥

पदार्थ दशविध ॥ १० ॥

नाडिका श्चौ देवता १० —

- १ इडा (धद्र) वामनासिकागत चंद्रनाडी ।
हरि देवता ॥
- २ पिंगला (सूर्य) दक्षिणनासिकागत सूर्यनाडी
ब्रह्मा देवता ॥
- ३ सुपुष्पा (मध्यमा) नासिकाश्रे मध्यगतनाडी
रुद्र देवता ॥
- ४ माधारी (दक्षिणनेत्र) इन्द्र ॥
- ५ हारिनाजिह्वा (वामनेत्र) वरुण ॥
- ६ प्रथा (दक्षिणकर्ण) ईश्वर ॥
- ७ यशस्विनी (वामकर्ण) ब्रह्मा ॥
- ८ कुह (गुहा) पृथ्वी ॥
- ९ अक्षयुषा (मेट) सूर्य ॥
- १० शाग्वती (नाभि) चन्द्र ॥

॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४३३

शृंगारादिरस १०—१ शृङ्गाररस ॥ २ वीर-
रस ॥ ३ करुणारस ॥ ४ अद्भुतरस ॥
५ हास्यरस ॥ ६ भयानकरस ॥ ७ वीभत्स
रस ॥ ८ रौद्ररस ॥ ९ ॥ शांतिरस ॥
१० प्रेमभक्ति वा ज्ञानरस ॥

पदार्थ एकादशविध ॥ ११ ॥

ज्ञानसाधन ११—

१ विवैक ॥ २ वैराग्य ॥ ३ पट्संपत्ति ॥

४ मुमुक्षुता ॥

५ गुरुरूपसत्ति—विधिपूर्वक गुरुके शरण
जाना ॥

६ श्रवण ॥ ७ तत्त्वज्ञानाभ्यास ॥ ८ मनन ॥

९ निदिध्यासन ॥

१० मनोनाश—इहां मनशब्दकरि रजतमसै
लत्त्वगुणका तिरस्काररूप मनका स्थूलभाव

कहियेहै । ताका नाश कहिये महाभ्यास-
की प्रवृत्ततासँ रजतमके तिरस्कारकरि जो
सत्प्रगुणका आविर्भाव होवैहै । सो ॥

११ वासनाक्षय ॥

पदार्थ द्वादशविध ॥ १२ ॥

अनात्माके धर्म १२—

१ अनित्य ॥ २ विनाशी ॥ ३ अशुद्ध ॥

४ नाना ॥ ५ क्षेत्र ॥ ६ आश्रित ॥

७ विकारि ॥ ८ परप्रकाश्य ॥ ९ हेतुमान्

१० न्याय्य—परिच्छिद्य (देशकालवस्तुशत
परिच्छिद्यवाला)

११ सगी ॥ १२ आवृत्त ॥

आत्माके धर्म १२—

१ नित्य—उत्पत्ति अरु नाशतँ रहित ॥

२ अद्वय्य—घटनेपटनेसँ रहित ॥

मला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥१६॥ ४३५

३ शुद्धः—मायाअविद्यारूप मलरहित ॥

४ एकः—सजातीयभेदरहित ॥

५ क्षेत्रज्ञः—शरीररूप क्षेत्रका ज्ञाता ॥

६ आश्रय—अधिष्ठान ॥

७ अत्रिक्रयः—अत्रिकारी ॥

स्वप्रकाशः—अपने प्रकाशविषय अन्य
(स्वपर) प्रकाशकी अपेक्षासे रहित हुया
सर्वका प्रकाशक ॥

८ हेतुः—जालेके कारण ऊर्णजाभिकी न्याई
औ नख अरु रोम (केश) नके कारण
पुरुषकी न्याई जगत्का अभिन्ननिमित्त
(विवर्त) उपादानकारण है ॥

१० व्यापकः—अपरिच्छिन्न (परिपूर्ण) ॥

११ असंगी—सजातीय विजातीय औ स्वगत-
संबंधरहित ॥

१२ अनावृतः—सर्वथा आवरणसे रहित ॥

ब्राह्मणके व्रत १२—

१ ज्ञान ॥ २ सत्य ॥ ३ शम ॥ ४ दम ॥

५ श्रुत—शास्त्राभ्यास ॥

६ अमात्सर्य—परके उन्कारका असहनरूप
जा मन्मर तिसरै रहितपना ॥

७ लज्जा ॥ ८ तितित्ता ॥

९ अनसूया—गुणोंकेविषै दोषका आरोपरूप
असूयामै रहितता ॥

१० यज्ञ ॥ ११ दान ॥

१२ धैर्य—काम शौ क्रोधके वेगका रोकना ॥

महत्ताहेतुधर्म १०—१ धनाढ्यता ॥

२ अभिजन—कुटुम्ब ॥ ३ रूप ॥ ४ तप ॥

५ श्रुत—शास्त्राभ्यास ॥

६ सौंज—इष्टियनका नेज ॥

७ तज ॥ ८ प्रभाव । ९ बल ॥

१० पौण्य ॥ ११ बुद्धि ॥ १२ योग ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन । १६ ॥ ४३७

॥ पदार्थ त्रयोदशविध ॥ १३ ॥

भागवतधर्म १३—भतवत्भक्तनके धर्म ॥

१ सकामकर्मके फलका विपरीत दर्शन ॥

२ धनुगृहपुत्रादिविषै दुःखबुद्धि औ चलबुद्धि ॥

३ परलोकविषै नरश्वरबुद्धि ॥

४ शब्दब्रह्म औ परब्रह्मविषै कुशलगुरुप्रति

गमन ॥

५ गुरुविषै ईश्वरबुद्धि औ निष्कपटसेवा ॥

६ परमेश्वरविषै सर्वकर्मसमर्पण ॥

७ भक्तिवैराग्यसहित स्वरूपानुभव । साधुसङ्ग ॥

८ शौच । तप तितिजा । मौन ॥

९ स्वाध्याय । आर्जव (सरलस्वभाव) ब्रह्मचर्य ।

अहिंसा औ द्वंद्वसमन्व (शीतउष्णआदिक

द्वंद्वधर्मके सहनका स्वभाव) ॥

१० सर्वत्रआत्मारूप ईश्वरका दर्शन ॥

११ कैवल्य (एकाकी रहना) । अनिकेत

(गृह न बाधना) । एकांत (विधित्त)
चीरवस्त्र । सतोष ॥

१२ सर्वभूतनविषै आत्माके भगवद्भावका दर्शन ।

श्री भगवद्रूप आत्माविषै सर्वभूतनका दर्शन ॥

१३ जन्मकर्मवर्णाश्रमादिकरि देहविषै निरभिमान
श्री स्वपरधुद्धिका अभाव ॥

॥ पदार्थ चतुर्दशविध ॥ १४ ॥

त्रिपुटी १४—

ज्ञानेन्द्रियकी त्रिपुटी ।

इन्द्रिय	देवता	विषय
अध्यात्म	अधिदेव	अधिभूत
१ श्रोत्र ।	दिशा ।	शब्द ॥
२ त्वचा ।	वायु ।	स्पर्श ॥
३ अक्षु ।	सूर्य ।	रूप ॥
४ जिह्वा ।	चरण ।	रस ॥
५ घ्राण ।	अश्विनीकुमार ।	गंध ॥

कला] ॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥ १६ ॥ ४३६

कर्मेन्द्रियनकी त्रिपुटी ॥

६ वाक् ।	अग्नि ।	वचन (क्रिया) ॥
७ हस्त ।	चन्द्र ।	लेनादेना ॥
८ पाद ।	वामनजी ।	गमन ॥
९ उपस्थ ।	प्रजापति ।	रतिभोग ॥
१० गुद ।	यम ।	मलत्याग ॥

अंतःकरणकी त्रिपुटी ॥

११ मन ।	चन्द्रमा ।	संकल्पविकल्प ॥
१२ बुद्धि ।	ब्रह्मा ।	निश्चय ॥
१३ चित्त ।	वासुदेव ।	चित्तन ॥
१४ अहंकार ।	रुद्र ।	अहंपना ॥

पदार्थ पंचदशविध ॥ १५ ॥

मायाके नाम १५-१	माया ॥	२ अविद्या ॥
३ प्रकृति ॥	४ शक्ति ॥	५ सत्त्वा ।
६ मूला ॥	७ नूला ॥	८ योनि ॥
९ अव्यक्त	१० अर्थाकृत ॥	११ अज्ञा ॥
१२ अज्ञान		

४४० ॥ विचारचन्द्रोदय ॥ [षोडशकला

१३ तमः ॥ १४ तुच्छा ॥ १५ अनिर्वचनीया ॥

॥ पदार्थ षोडशविध ॥ १६ ॥

कला—१ हिरण्यगर्भ ॥ अद्वा ॥ ३ आ-
काश ॥ ४ वायु ॥ ५ तेज ॥ ६ जल ॥
७ पृथ्वी ॥ ८ दशेंद्रिय ॥ ९ मन ॥ १०
अन्न ॥ ११ बल ॥ १२ तप ॥ १३ मन्त्र ॥
१४ कर्म ॥ १५ लोका ॥ १६ नाम ॥

इति श्रीविचारचन्द्रोदये वेदान्तपदार्थ-
भङ्गावर्णननामिका षोडशीकला-द्वितीय-
विभागः समाप्तः ॥

॥ संस्कृत दोहा ॥

श्रीविचारचन्द्रोदय शुद्धा धिय समाप्य ।
विचार्येति परानन्दं नरवशानमधाप्य ॥१॥

१ पूर्वमीमांसा	अनंत प्रवाहरूप संयोगवियोगवात्	परमाणु	०	भोक्ता
२ उत्तरमीमांसा (वेदांत)	नामरूपक्रियात्मक मायावा परणाम चेतनकाधिवत्	अभिन्नमित्तो पादानईश्वर	मायाविशिष्ट- चेतन	अविद्यगविशिष्ट- चेतन
३ न्याय	परमाणु आरंभित संयोगवियोगजन्य आकृतिविशेष	परमाणु ईश्वर- रादिनव	नित्यहृच्छाज्ञा नाग्निगुणवान विभुकर्त्ता १०	ज्ञानादिचतुर्दशगु- णवान् कर्त्ता भो- क्ता जडनिभुनाना।
४ वैशेषिक	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार
५ सांख्य	प्रकृतिपरिणामत्रयो विंशतिःस्वात्मक	त्रिगुणारम्भक- प्रकृति	०	असंग चेतन त्रिभु- नाना भोवता
६ योग	प्रकृतिपरिणामत्रयो विंशतित्वात्मक	कर्मानुसार प्र- कृति औ नक्ति ध्यात्मक ईश्वर	क्लेशकर्मविपा- क आशय असं- ख्य पुरुषविशेष	असंग चेतन त्रिभु- नाना कर्त्ता भोक्ता

शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली पुस्तकें ।

दशीमूल	१॥)
द्विशी भा० टी०	१०)
चार सागर निश्चलदास कृत	...		२)
चार सागर पीताम्बर कृत भा० टी०			८)
शान्त संग्रह	=)
इन्दर विलास बड़ा सर्टीक	...		२॥)
दान्त विनोद	=)
दान्त मत दर्शन	॥॥)
अष्टावक्र गीता भाषा टीका	...		१॥)
चरक भाषा टीका	१०)
प्रकदत्त भा० टी०	३॥)
नाड़ी ज्ञान तरंगिणी अनुपान तरंगिणी सहित भाषा टीका	१॥)

मिलने का पता—

हरीप्रसाद भागीरथ लिमिटेड,

प्राचीन पुस्तकालय बम्बई नं० २

सोल एजेन्ट—

रघुनाथदास पुरुषोत्तमदास अग्रवाल,

चूना कंकड़, मथुरा यू० पी०

पदार्थ	६ अर्थ	७ साध	८ साधसाधन
१ पूर्वनीमाया	निष्कर्म	स्वर्गप्राप्ति	तेजविहितकर्म
२ उत्तरमाया	प्रविष्टा	इच्छाकार्यनिष्ठ- सिद्धक परमानन्द- सम्प्राप्ति	प्रज्ञा मैथयज्ञान
३ न्याय	यज्ञान	एकविंशतिदुःखाद्यस्य	इतरभिन्नानुसन्धान
४ उपेक्षक	अज्ञान	एकविंशतिदुःखाद्यस्य	इतरभिन्नानुसन्धान
५ साक्षर	अविवेक	त्रिविधदुःखस्य	प्रकृतिपुरुषाविवेक
६ बाण	अविवेक	प्रकृतिसुखयोग- साधनद्वयक कल्पित	निर्दिष्टप्रत्ययसाधन

